सूर्यकुमारी पुस्तकमाला—२६

मयूख

स्व० श्री राखालदास वंद्योपाध्याय

अनुवादक
शंभुनाथ वाजपेयी

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

मुद्रक : शंभुनाथ वाजपेयी, राष्ट्रभाषा मुद्रण, काशी

संवत् २०१६ : प्रथम संस्करण, ११०० प्रतियाँ

माला का परिचय

जयपुर राज्य के शेखावाटी प्रांत में खेतड़ी राज्य है। वहाँ के राजा श्री अजीतसिंह जी बहादुर बड़े यशस्वी और विद्याप्रेमी हुए। गणितशास्त्र में उनकी अद्‌भुत गति थी। विज्ञान उन्हें बहुत प्रिय था। राजनीति में वह दक्ष और गुणग्राहिता में अद्वितीय थे। दर्शन और अध्यात्म की रुचि उन्हें इतनी थी कि विलायत जाने के पहले और पीछे स्वामी विवेकानंद उनके यहाँ महीनों रहे। स्वामी जी से घंटों शास्त्रचर्चा हुआ करती। राजपूताने में प्रसिद्ध है कि जयपुर के पुण्यश्लोक महाराज श्री रामसिंह जी को छोड़कर ऐसी सर्वतोमुख प्रतिभा राजा श्री अजीतसिंह जी में ही दिखाई दी।

राजा श्री अजीतसिंह जी की रानी आउआ (मारवाड़) चाँपावत जी के गर्भ से तीन संतति हुई—दो कन्या, एक पुत्र। ज्येष्ठ कन्या श्रीमती सूरज-कुँवर थीं जिनका विवाह शाहपुरा के राजाधिराज सर श्री नाहरसिंह जी के ज्येष्ठ चिरंजीवी और युवराज राजकुमार श्री उमेदसिंह जी से हुआ। छोटी कन्या श्रीमती चाँदकुँवर का विवाह प्रतापगढ़ के महारावल साहब के युवराज महाराजकुमार श्री मानसिंह जी से हुआ। तीसरी संतान जयसिंह जी थे जो राजा श्री अजीतसिंह और रानी चाँपवत जी के स्वर्गवास के पीछे खेतड़ी के राजा हुए।

इन तीनों के शुभचिंतकों के लिये तीनों की स्मृति संचित कर्मों के परिणाम से दुःखमय हुई। जयसिंह जी का स्वर्गवास १७ वर्ष की अवस्था में हुआ। सारी प्रजा, सब शुभचिंतक, संबंधी, मित्र और गुरुजन का हृदय आज भी उस आँच से जल ही रहा है। अश्वत्थामा के व्रण की

तरह यह घाव कभी भरने का नहीं। ऐसे आशामय जीवन का ऐसा निराशात्मक परिणाम कदाचित् ही हुआ हो। श्री सूर्यकुँवर बाई जी को एकमात्र भाई के वियोग की ऐसी टेस लगी कि दो ही तीन वर्ष में उनका भी शरीरांत हुआ। श्री चाँदकुँवर बाई जी को वैधव्य की विषम यातना भोगनी पड़ी तथा भ्रातृवियोग और पतिवियोग दोनों का असह्य दुःख वे झेल रही हैं। उनके एकमात्र चिरंजीवी प्रतापगढ़ के कुँवर श्री रामसिंह जी से मातामह राजा श्री अजीतसिंह जी का कुल प्रजावान् है।

श्रीमती सूर्यकुमारी जी के कोई संतति जीवित न रही। उनके बहुत आग्रह करने पर भी राजकुमार श्री उमेदसिंह जी ने उनके जीवनकाल में दूसरा विवाह नहीं किया, किंतु उनके वियोग के पीछे, उनके आज्ञानुसार, कृष्णगढ़ में विवाह किया जिससे उनके चिरंजीवी वंशांकुर विद्यमान हैं।

श्रीमती सूर्यकुमारी जी बहुत शिक्षिता थीं। उनका अध्ययन बहुत विस्तृत था। उनका हिंदी का पुस्तकालय परिपूर्ण था। हिंदी इतनी अच्छी लिखती थीं और अक्षर इतने सुंदर होते थे कि देखनेवाला चमत्कृत रह जाता। स्वर्गवास के कुछ समय के पूर्व श्रीमती ने कहा था कि स्वामी विवेकानंद जी के सब ग्रंथों, व्याख्यानों और लेखों का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद मैं छपवाऊँगी। बाल्यकाल से ही स्वामीजी के लेखों और अध्यात्म, विशेषतः अद्वैत वेदांत, की ओर श्रीमती की रुचि थी। श्रीमती के निर्देशानुसार इसका कार्यक्रम बाँधा गया। साथ ही श्रीमती ने यह इच्छा प्रकट की कि इस संबंध में हिंदी में उत्तमोत्तम ग्रंथों के प्रकाशन के लिये एक अक्षय नीवी की व्यवस्था का भी सूत्रपात हो जाय। इसका व्यवस्थापत्र बनते न बनते श्रीमती का स्वर्गवास हो गया।

राजकुमार श्री उमेदसिंह जी ने श्रीमती की अंतिम कामना के अनुसार २०,०००) देकर काशी नागरीप्रचारिणी सभा के द्वारा इस ग्रंथमाला

के प्रकाशन की व्यवस्था की। ३०,०००) के सूद से गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी में 'सूर्यकुमारी आर्यभाषा गद्दी (चेयर)' की स्थापना की।

५,०००) से उपर्युक्त गुरुकुल में चेयर के साथ ही सूर्यकुमारी निधि की स्थापना कर सूर्यकुमारी ग्रंथावली के प्रकाशन की व्यवस्था की।

५,०००) दरबार हाई स्कूल, शाहपुरा में सूर्यकुमारी विज्ञानभवन के लिये प्रदान किए।

स्वामी विवेकानंद जी के यावत् निबंधों के अतिरिक्त और भी उत्तमोत्तम ग्रंथ इस माला में छापे जायँगे और अल्प मूल्य पर सर्वसाधारण के लिये सुलभ होंगे। ग्रंथमाला की बिक्री की आय इसी में लगाई जायगी। यों श्रीमती सूर्यकुमारी तथा श्रीमान उमेदसिंह जी के पुण्य तथा यश की निरंतर वृद्धि होगी और हिंदी भाषा का अभ्युदय तथा उसके पाठकों को ज्ञानलाभ होगा।

—oo—

प्रकाशकीय

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला की स्थापना के समय ही सभा ने यह मंतव्य स्थिर कर लिया था कि स्व० राखालदास वंद्योपाध्याय के ऐतिहासिक उपन्यासों का अनुवाद इस माला के अंतर्गत प्रकाशित किया जाय। तदनुसार करुणा (अनु० श्री रामचंद्र वर्मा) और शशांक (अनु० स्व० आचार्य रामचंद्र शुक्ल) के अनुवाद सं० १९७८ वि० में ही इस माला के अंतर्गत प्रकाशित हो गए थे। ये दोनों उपन्यास गुप्तयुग की अवनति से संबद्ध थे।

तदनंतर बहुत दिनों तक इस दिशा में कोई कार्य नहीं हो पाया। सं० २०११ में उनके 'असीम' नामक उपन्यास का अनुवाद (अनु० श्री शंभुनाथ वाजपेयी) इस माला में प्रकाशित हुआ। इसका कथानक मुगल साम्राज्य के विघटन के दिनों—फर्रुखसियर के राजत्वकाल—पर आधृत है। विस्तार की दृष्टि से यह उपन्यास सबसे बड़ा है। सं० २०१३ में उनकी 'पाषाणेर कथा' नामक आख्यायिका का अनुवाद इस माला में प्रकाशित हुआ जिसमें भारतवर्ष के आरंभ से लेकर अबतक के इतिहास का सिंहावलोकन बड़ी ही अनूठी और हृदयस्पर्शी शैली में किया गया है।

प्रस्तुत कृति 'मयूख' में मुगलों के चरमोत्कर्ष के दिनों की, अर्थात् शाहजहाँ के राजत्वकाल की कहानी है, जिसमें पुर्तगालियों की लूट खसोट और निरीह भारतीय जनता पर किए गए उनके बर्बर अत्याचारों का उद्घाटन है। राखाल बाबू की कथात्मक कृतियों में अब केवल 'धर्मपाल' और 'ध्रुवा' के भाषांतर शेष रह गए हैं, जो यथासंकल्प इस माला में निकट भविष्य में ही प्रकाशित होंगे।

ऐतिहासिक उपन्यासों के प्रणयन में संबद्ध युग के संपूर्ण इतिहास की पूरी पूरी जानकारी और उसकी बारीकियों को हृदयंगम करनेवाली जिस पैनी विवेकबुद्धि की आवश्यकता होती है वह राखाल बाबू में प्रचुर मात्रा में वर्तमान थी। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानक जहाँ कहीं इतिहास की प्रवहमान धारा से पृथक् होकर अग्रसर हुए हैं वहाँ यह भान तक नहीं होता कि यह पृथक्ता इतिहास से भिन्न है। कथानकों में इस प्रकार के संभावित विपर्यय राखाल बाबू की कृतियों में वहीं हुए हैं जहाँ इतिहास मौन है, उसकी वाग्मिता को जबर्दस्ती दबाकर अपनी कल्पना को उन्होंने कहीं भी मुखर नहीं होने दिया है। ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में जहाँ अनेक लेखक इस बात पर ध्यान न देने के कारण असफल रह गए हैं, वहाँ राखाल बाबू ने अपनी कृतियों में कहीं भी ऐसा स्खलन नहीं होने दिया है।

आशा है, हिंदी जगत् इस कृति को भी वैसा ही आदर देगा जैसा राखाल बाबू की पूर्ववर्ती कृतियों को उसने दिया है।

भ्रातृद्वितीया,
संवत् २०१६ वि०

सुधाकर पांडेय
प्रकाशन मंत्री

प्राक्कथन

(अ) लेखक का जीवनवृत्त

स्व० श्री राखालदास वंद्योपाध्याय का जन्म १२ अप्रैल, सन् १८८६ ई० को मुर्शिदाबाद के बहरामपुर नामक स्थान में हुआ था। उनके पूर्व-पुरुष ढाका के विक्रमपुर नामक स्थान के रहनेवाले थे और नवाबी दरबार में उच्चपदस्थ राजकर्मचारी थे। मुर्शिदकुली खाँ ने जिस समय दीवानी का कार्यालय मुर्शिदाबाद में स्थानांतरित किया था उस समय राखाल बाबू के पूर्वजों की एक शाखा भागीरथी के किनारे मुर्शिदाबाद के उस पार डाहापाड़ा में और दूसरी शाखा जैसोर के अंतर्गत चौघरिया में आ बसी थी।

राखाल बाबू के पिता श्री मतिलाल वंद्योपाध्याय बहरामपुर में वकालत करते थे। वकील समाज में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। मतिलाल वंद्योपाध्याय की द्वितीय पत्नी को आठ संतानें हुईं जिनमें अकेले राखाल बाबू जीवित रहे। आठ संतानों के बीच अकेली जीवित रहनेवाली संतान का भरे पूरे हिंदू परिवार में जैसा लाड़ प्यार होना चाहिए, वैसा ही लाड़ प्यार बचपन में राखाल बाबू को मिला था। बचपन के इस दुलार ने उन्हें अनेक अंशों में हठी बना दिया था। अपने हठ और मान के अनेक संस्मरण वे सुनाया करते थे। इच्छानुसार कार्य न होने पर वे मारे क्रोध के करेंसी नोटों तक के टुकड़े टुकड़े कर डाला करते थे किंतु कोई चूँ तक करने का साहस नहीं करता था।

बाल्यावस्था से ही उनकी बुद्धिमत्ता का परिचय लोगों को मिलने लगा था। बहरामपुर के कृष्णनाथ कालिजियट स्कूल से सन् १९०० में

उन्होंने एंट्रेंस परीक्षा उत्तीर्ण की और उन्हें १५) मासिक छात्रवृत्ति मिलने लगी। तीन वर्ष बाद प्रेसिडेंसी कालेज से उन्होंने एफ० ए० परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। इसी वर्ष उनके माता पिता का देहांत हुआ। इसके पश्चात् वे पारिवारिक मामले मुकद्दमों में ऐसे उलझे कि कई वर्षों तक उनका पढ़ना लिखना बिल्कुल बंद रहा। सन् १९०७ में उन्होंने इतिहास में आनर्स के साथ बी० ए० परीक्षा और सन् १९१० मे इसी विषय में एम० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १९०० में एंट्रेंस की परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर ही उनका विवाह हो गया था। उनकी पत्नी श्रीमती कांचनमाला देवी उत्तरपाड़ा के प्रतिष्ठित जमींदार श्री नरेंद्रनाथ मुखर्जी की लड़की थीं। वे अत्यंत बुद्धिमती और विदुषी थीं। उन्होंने वंगभाषा में कई अच्छे उपन्यासों की रचना की है। विवाह के तीन वर्ष पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र असीमचंद्र का एवं १९०९ में उनके एकमात्र वर्तमान पुत्र श्री अद्रीशचंद्र का जन्म हुआ।

विद्यार्थी जीवन में ही राखाल बाबू की यह इच्छा थी कि भारतवर्ष के संबंध में पुरातत्व विषयक विशेष अध्ययन करें। स्व० श्री रामेंद्रसुंदर त्रिवेदी तथा स्व० श्री हरप्रसाद शास्त्री के संपर्क में आने पर उनकी यह इच्छा धीरे धीरे फलवती होने लगी। शास्त्री जी के वे विशेष स्नेहभाजन थे और वे उन्हें बड़े प्रेम से पुरातत्व की शिक्षा दिया करते थे। बी० ए० की परीक्षा देने के पहले ही राखाल बाबू ने भारतीय पुरातत्व का यथेष्ट ज्ञान अर्जित कर लिया था। इसी काल मे उनका परिचय भारतीय पुरातत्व विभाग के निरीक्षक तथा कलकत्ता संग्रहालय के अध्यक्ष डा० थियोडोर ब्लाक से हुआ। डा० ब्लाक पुरातत्व में राखाल बाबू की रुचि और अभिज्ञता देखकर उनकी ओर आकृष्ट हुए। यह आकर्षण धीरे धीरे मैत्री और घनिष्ठता में परिणत होता गया।

प्राचीन भारतीय शिलालेखों के पाठनिर्धारण में डा० ब्लाक असाधारण रूप से दक्ष थे। राखाल बाबू ने इस शास्त्र में जो सिद्धि-लाभ किया उसका बहुत कुछ श्रेय उन्होंने अपने इन्हीं विद्वान् मित्र और सहकर्मी को दिया है। इस प्रकार बी० ए० परीक्षा में संमिलित होने के पहले ही भारतीय पुरातत्व, विशेषतः प्राचीन मुद्राशास्त्र एवं पुरालिपिशास्त्र के विशेषज्ञ के रूप में उनकी ख्याति देश भर में फैल चुकी थी। बी० ए० पास करने के दूसरे वर्ष लखनऊ विश्वविद्यालय के पुरातत्व विभाग की सामग्री की विवरणात्मक सूची प्रस्तुत करने के लिये वे आमंत्रित किए गए और यह कार्य उन्होंने बहुत उत्तमतापूर्वक दो तीन मास में ही संपन्न कर डाला। सन् १९१० में उनकी नियुक्ति कलकत्ता संग्रहालय में सहकारी संग्रहाध्यक्ष के पद पर हुई। इस कार्य में उनकी अतिशय दक्षता से प्रभावित होकर भारत सरकार ने उन्हें पुरातत्व विभाग के और उच्च पद पर स्थायी रूप से नियुक्त कर दिया। इस प्रकार की नियुक्ति के लिये यह आवश्यक था कि राखाल बाबू कुछ दिनों तक अस्थायी रूप से उस पद की उम्मीदवारी करते और नियत काल के बाद उनके स्थायित्व के संबंध में सरकार विचार करती, किंतु उनकी प्रतिभा और विद्वत्ता के कारण सरकार ने उनके संबंध में अपना नियम ढीला कर दिया और सीधे सहायक सुपरिंटेंडेंट के पद पर उनकी स्थायी रूप से नियुक्ति कर दी। पुरातत्व विभाग के तत्कालीन अध्यक्ष सर जान मार्शल की संस्तुति पर सन् १९१७ में वे पश्चिमी क्षेत्र के सुपरिंटेंडेंट नियुक्त किए गए। छः वर्षों तक इसी पद पर वे पूना में नियुक्त रहे। उस समय पुरातत्व विभाग के पश्चिमी क्षेत्र के अंतर्गत बंबई प्रेसिडेंसी के अतिरिक्त राजपूताना और मध्य भारत की रियासतें भी थीं। इस विस्तृत भूभाग का निरीक्षण करके उन्होंने उत्खनन, शोध और संरक्षण का जो महत्वपूर्ण कार्य किया उसका विस्तृत विवरण पुरातत्व विभाग की तत्कालीन वार्षिक रिपोर्टों में दिया हुआ है। इसमें

ज़रा भी अतिशयोक्ति नहीं कि पुरातत्व विभाग को ऐसा धुन का पक्का विद्वान् उनके पहले दूसरा नहीं मिला था। त्रिपुरी और भूमरा के संबंध में रचित उनके शोधग्रंथों को देखने से भली भाँति पता चलता है कि वे अपना कार्य कितनी लगन और परिश्रम से किया करते थे। पूना में पेशवाओं के राजप्रासाद की खुदाई करके उन्होंने इतिहास और पुरातत्व की अनेक टूटी हुई कड़ियाँ जोड़ी हैं।

लेकिन उनके यश को सबसे अधिक बढ़ानेवाला कार्य मोहेंजोदड़ो का आविष्कार है। सन् १६२२ में पहले पहल उन्होंने इस स्थान का दौरा किया था और थोड़ी बहुत खुदाई भी कराई थी। सरकारी कोष में इस कार्य के लिये अपेक्षित द्रव्य की व्यवस्था उस समय न रहने के कारण यह कार्य कुछ दिनों के लिये बंद कर देना पड़ा था, लेकिन इसी अल्पकालीन खुदाई में उन्होंने इस प्रागैतिहासिक नगरी की विशेषताओं पर प्रकाश डालनेवाली जो सामग्री आविष्कृत की उससे पुरातत्वजगत् में हलचल मच गई और भारत सरकार को अगले वर्षों में वहाँ की नियमित और व्यवस्थित खुदाई का प्रबंध करना पड़ा। मोहेंजोदड़ो को आविष्कृत करने और एक अत्यंत प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति से आधुनिक युग को परिचित कराने का सारा श्रेय यद्यपि राखाल बाबू को मिलना चाहिए था, किंतु अँगरेजी शासन ने यह श्रेय दिया मार्शल को।

जब वे पूना में थे तभी उनके ज्येष्ठ पुत्र की मृत्यु हो गई। इस दुर्घटना से वे बहुत दुःखी हुए और उन्होंने चारपाई पकड़ ली। अत्यधिक रुग्ण हो जाने के कारण उन्हें एक वर्ष का अवकाश लेना पड़ा। सन् १६२४ में वे पूर्वी क्षेत्र के अध्यक्ष हुए और उनका स्थानांतरण कलकत्ता कर दिया गया। यहाँ वे केवल दो वर्ष रहे। इस अवधि में उन्होंने जो कार्य किए उनमें पहाड़पुर की खुदाई विशेष उल्लेखयोग्य

है। सन् १६२६ में उन्हें सरकारी कार्य से अवकाश लेना पड़ा। जबलपुर जिले के भेड़ाघाट नामक स्थान में चौसठ जोगिनी के मंदिर से एक मूर्ति स्थानांतरित करने के अभियोग में मध्यप्रदेशीय सरकार ने उनकी गिरफ्तारी का वारंट निकाल दिया था, फलतः उन्हें अस्थायी रूप से निलंबित (सस्पेंड) कर दिया गया। पुरातत्व विभाग की मध्यस्थता के कारण यद्यपि इस अभियोग में वे निर्दोष साबित हुए, तथापि उन्होंने सरकारी नौकरी से नाममात्र के पेंशन पर अवकाश ग्रहण कर लिया।

राखाल बाबू का लालन पालन वैभव और विलास में हुआ था। युवावस्था भी उन्होंने वैसी ही काटी। पैतृक संपत्ति के अतिरिक्त उन्हें नानिहाल की विपुल संपत्ति भी उत्तराधिकार में मिली थी। लेकिन मितव्यय और संयम के अभाव में लक्ष्मी चंचला हो गई और जीवन के अंतिम दिन राखाल बाबू को बड़े कष्ट से काटने पड़े। सन् १६२६ में महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी ने उन्हें हिंदू विश्वविद्यालय में बुला लिया और यहाँ वे 'मनींद्र नंदी प्राध्यापक' के पद पर अधिष्ठित हुए। राजपरिवारोचित सुख सुविधा और परिचर्या में पला हुआ उनका शरीर मन की प्रतिकूलता सहते सहते जीवन के तीसरे पहर में आकर हार मान गया। दो तीन वर्षों तक रोग शोक से लोहा लेने के पश्चात् मई, १६३० में कलकत्ते में उनका शरीरांत हो गया। मृत्युकाल में उनकी अवस्था केवल ४६ वर्ष की थी।

राखाल बाबू में प्रतिभा के अतिरिक्त लिखने की अद्भुत क्षमता थी। उन्होंने प्राचीन भारतीय लिपि और मुद्रा तथा मूर्ति एवं अन्यान्य शिल्पों के संबंध में अनेक गवेषणात्मक निबंध और ग्रंथ लिखे हैं। अनेक शिलालेखों और मुद्राओं का उन्होंने पाठोद्धार किया है। आरंभ से लेकर अपने समय तक का बंगाल का क्रमबद्ध इतिहास लिखने का

उनका विचार था, किंतु 'दि ओरिजिन आव द बंगाली स्क्रिप्ट' तथा 'ईस्टर्न इंडियन स्कूल आव मिडीवल स्कल्पचर' नामक दो ग्रंथों के अतिरिक्त बंगाल के राजनीतिक इतिहास का एक ही भाग वे लिख पाए। बंगाल के इतिहास के प्रथम भाग में आरंभ से लेकर लगभग १२०० ई० तक का इतिहास आ गया है। उनके मुगलकालीन उपन्यासों तथा अन्य निबंधों से पता चलता है कि इसके बाद के इतिहास के लिये भी उनके पास पर्याप्त सामग्री एकत्र हो चुकी थी और दुर्दैव ने यदि उन्हें असमय में न उठा लिया होता तो वे अपना संकल्प अवश्य पूरा करते। उनकी अन्य ऐतिहासिक कृतियों में 'द पालाज आव बंगाल', 'हिस्ट्री आव उड़ीसा' तथा 'एज आव दि इंपीरियल गुप्ताज' प्रमुख हैं। शशांक, धर्मपाल, करुणा, मयूख, असीम और ध्रुवा इन पाँच बड़े बड़े उपन्यासों के अतिरिक्त 'पाषाणेर कथा' नामक ऐतिहासिक इतिवृत्तों का क्रमबद्ध कथात्मक संग्रह कथा - वाङ्मय - रचना में उनकी अद्भुत दक्षता के परिचायक हैं।

(आ) मयूख

ऐतिहासिक पीठिका

१५वीं-१६वीं शताब्दी में महासागरों और समुद्रों पर स्पेन तथा पुर्तगालवालों का एकाधिपत्य था। पुर्तगालियों की जो शाखा भारत की ओर आई उसने शीघ्र ही अपने धार्मिक उन्माद में निरीह भारतवासियों पर कैसे कैसे अत्याचार किए और अंत में उसका उन्हें क्या परिणाम भुगतना पड़ा, इसी की कहानी मयूख में दी गई है। नवागंतुक पुर्तगाली यहाँ आते ही क्यों इतने बर्बर और अत्याचारी हो उठे थे, उनकी क्या दुरभिसंधि थी और अंत में उन्हें अपने अत्याचारों का कैसा प्रतिफल भुगतना पड़ा, इसे वास्तविक रूप में हृदयंगम करने के लिये तत्कालीन विश्व इतिहास पर दृष्टि डालना आवश्यक है।

७वीं से लेकर १५वीं शताब्दी तक की ६०० वर्षों की दीर्घ कालावधि तक सारा उत्तरी गोलार्ध इस्लाम की तलवार से आतंकित रहा। इस बीच केवल १३वीं–१४वीं शती की कालावधि इस आतंक से थोड़ी मुक्त रही। ८वीं शती का अंत होते होते भारत के पच्छिमी छोर पर स्थित सिंध से लेकर योरप के धुर दक्षिण-पश्चिम में स्थित स्पेन तक का सारा भूभाग इस्लाम की तलवार के नीचे आ गया था, केवल बालकन प्रायद्वीप में स्थित रोम साम्राज्य के कुछ अंश बच रहे थे। परंतु १५वीं शताब्दी के मध्य में तुर्कों ने उसपर भी अपना प्रभुत्व जमा लिया।

इस प्रकार दक्षिणी योरप के समूचे क्षेत्र में इस्लाम का दबाव बढ़ने का परिणाम यह हुआ कि रोम और भारत के बीच का सीधा व्यापारिक संबंध टूट गया। लाल सागर तक का समुद्री व्यापार मुसलमानों के हाथ आ गया। योरपीय व्यापारी मिस्र देश के बंदरों तक ही आ पाते थे और मुसलमान व्यापारियों से माल लेकर योरप के विभिन्न बंदरों तक पहुँचाया करते थे।

स्वतंत्रचेता योरपीय जातियों के लिये यह स्थिति असह्य थी। पच्छिमी योरप की जातियों में १५वीं शती में नई चेतना जागी। भारत की खोज में निकला हुआ कोलंबस अमरीका पहुँचा पर उसने समझा यही कि भारत मिल गया। उसके छः वर्ष बाद पुर्तगाली नाविक वास्को द गामा ने भारत के पश्चिमी तट पर स्थित कालीकट बंदर में लंगर डाला। तब समझा यह गया कि कोलंबस को भारत का पूर्वी और वास्को द गामा को पश्चिमी तट मिला है।

ईसाईयों के सबसे महान् धर्माध्यक्ष रोम के पोप थे। उन्होंने स्पेन और पुर्तगाल वासियों को इस प्रकार पृथ्वीप्रदक्षिणा में सफल होते देख उनपर अपना वरद हस्त रखा। उन्होंने पृथ्वी के मानचित्र पर

अतलांतक महासागर के बीचोबीच उत्तर-दक्षिण एक रेखा खींची और यह फतवा दे डाला कि इस रेखा से पश्चिम ओर के सारे प्रदेशों का स्वामी स्पेन और पूरब के सारे प्रदेशों का स्वामी पुर्तगाल है।

फिर क्या था! अरब सागर, हिंद सागर, बंगाल की खाड़ी आदि पूर्वी समुद्रों में पुर्तगालवालों के जहाज निर्बाध आने जाने लगे। इन समुद्रों से सटी विभिन्न देशों की समस्त भूमि को पोप के फतवे के कारण पुर्तगाली ईसाई अपने अधीन समझते थे। ज्यों ज्यों अरब सागर में उनका प्रभुत्व बढ़ने लगा त्यों त्यों वहाँ के अरबी नाविकों से उनका संघर्ष भी बढ़ने लगा। १५१५ ई० तक अरब सागर और हिंद सागर से पुर्तगालियों ने अरब नाविकों का एकदम सफाया करके उनपर अपना एकाधिकार जमा लिया। अलबुकर्क ने १५१० में ही बीजापुर से गोवा का बंदरगाह छीन लिया था और उसे पुर्तगालियों के पूर्वी समुद्री राज्य की राजधानी बना दिया था।

गुजरात के शासक बहादुरशाह १५२६ ई० में गद्दी पर बैठे थे। पुर्तगालियों ने उनकी मदद की थी और बदले में कोंकण के तटप्रदेश—बंबई, साष्टी, बसई आदि—का अधिकार प्राप्त किया था। यह उनका उत्तरी प्रांत हुआ। दक्षिणी प्रांत में गोवा आदि मलाबारी इलाके थे।

यह तो हुई भारत के पश्चिमी समुद्रतट की स्थिति। पूर्वोत्तर तट की हालत और बिगड़ी हुई थी। बिना किसी राजभय के निरीह जनता पर वे कितना अत्याचार करते थे, इसपर इतिहास की साक्षी देखिए :

'१६वीं सदी में अराकान के तट पर अनेक पुर्तगाली बस गए थे। उनकी दोगली संतान ने समुद्र और नदियों में लूट मार करना अपना धंधा बना लिया था। वे गोवा के शासन में नहीं थे। अराकान के राजा ने अब उनका दमन कर उन्हें अपनी सेवा में ले लिया और वे लूट में आधा हिस्सा राजा को देने लगे। चटगाँव इन फिरंगियों का

अड्डा था। इनकी मदद से अराकान के राजा ने बाकरगंज जीत लिया (१६२० ई०) और ढाका को लूटा (१६२५)। उसके बाद अराकानियों और फिरंगियों के धावे बंगाल पर बराबर होते रहे। उनकी नावों के हरमद (आर्मेडा) को देखकर बंगाली नव्वारा (बेड़ा) भाग जाता था। वे असहाय जनता को पकड़ ले जाते और उनके एक एक हाथ में छेद कर एक रस्सी पिरोकर पशुओं की तरह अपनी नावों में भर ले जाते थे। अराकानी उन्हें दास बनाकर काम लेते थे। फिरंगी उन्हें दक्षिण के बंदरगाहों पर या फिलीपाइन आदि द्वीपों में दूसरे फिरंगियों के हाथ बेच देते थे। प्रजा की लूट मार और विध्वस का यह सिलसिला साल ब साल जहाँगीर और उसके बेटे शाहजहाँ के शासनकाल में जारी रहा[1]।'

इस साक्ष्य को देखते हुए राखाल बाबू के इस उपन्यास में विवृत तथ्यों मे अतिशयोक्ति का लेशमात्र नहीं प्रतीत होता। प्रस्तुत उपन्यास का पात्र चैतन्यदास पुर्तगालियों द्वारा उत्पीड़ित धर्मभीरु भारतीय जनता का प्रतीक है। अपने धर्म और अपने भगवान् पर उसकी एकांत निष्ठा है। वह इतना निष्ठावान् और आस्तिक है कि बड़े से बड़ा प्रलोभन या घोरतम शारीरिक उत्पीड़न भी उसके विश्वास को डिगा नहीं सके। पुर्तगाली कट्टर रोमन कैथलिक ईसाई थे। पोप के वचनों को ईश्वरवाक्य मानकर उन्होंने संसार भर की गैर ईसाई जनता को जबरदस्ती ईसाई बनाने के उद्योग में भामान्य विवेक तक को ताक पर रख दिया था और खुलकर अत्याचार किया करते थे। ईसाई धर्म अंततः अंगीकार न करने पर पुर्तगाली पादरी ने चरखी में कसवाकर वैष्णव चैतन्यदास की हड्डियाँ तुड़वा दी थीं। वह खड़ा

---

१. इतिहास प्रवेश, जयचंद्र विद्यालंकार, १९३८, पृ० ३६०।

तक नहीं हो सकता था। राखाल बाबू ने तो अंत में उसे भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाभूमि मथुरा नगरी में पहुँचा दिया है, जो इहलोक में उसका परम काम्य था, पर पुर्तगालियों ने कितने चैतन्यदासों की इहलीला शारीरिक कष्ट दे देकर धीरे धीरे समाप्त की, इसका कोई हिसाब नहीं। कितना नृशंस और घृण्य व्यापार है!

मयूख में विवृत सातगाँव और हुगली की घटनाओं के संबंध में राखाल बाबू ने पूरे संयम से काम लिया है और किसी भी मुख्य ऐतिहासिक तथ्य को इस रूप में नहीं रखा है जिसमें तिल का ताड़ हो जाय। नमक मिर्च लगाना उपन्यासकार की अधिकारसीमा के अंतर्गत है, तथापि इसका प्रयोग भी उन्होंने इस अंदाज से किया है जिसमें ऐतिहासिक तथ्य अपलाप न प्रतीत होकर और रोचक रूप में सामने आए हैं।

सातगाँव और हुगली की लड़ाइयाँ शाहजहाँ के आरंभिक राजत्वकाल की मुख्य घटनाओं में हैं। पादशाहनामा, शाहजहाँनामा, अथवा तारीख-ए-शाहजहानी-दहसाला नाम से मुहम्मद अमीन कजवीनी ने शाहजहाँ के आरंभिक दस वर्षों का जो इतिहास प्रस्तुत किया है उसमें इन दोनों लड़ाइयों का विवरण दिया हुआ है। तदनंतर अब्दुल हमीद लाहोरी ने शाहजहाँ के राज्यकाल के आरंभिक २० वर्षों का इतिहास लेखबद्ध किया। ये दोनों इतिहासकार शाहजहाँ के समसामयिक थे और अपनी अपनी कृतियों का प्रणयन उन्होंने बादशाह के आदेश से किया था। कजवीनी और लाहोरी की कृतियाँ तथ्यांकन में समान हैं, दोनों में कोई अंतर नहीं है; हाँ, लाहोरी की शैली का लालित्य अनूठा है। हुगली बंदर पर शाही अधिकार किए जाने के संबंध में उसने अपने ग्रंथ 'बादशाहनामा' में जो विवरण दिया है वह निम्नांकित है :

'बंगालियों के नेतृत्व में[1] सुंदीप निवासी व्यापारियों का एक दल व्यवसाय के निमित्त सातगाँव में आया। एक कोस ऊपर जाकर नदी किनारे उन्होंने कुछ भूमि पर अधिकार कर लिया। क्रय विक्रय के निमित्त एक भवन की आवश्यकता के बहाने उन्होंने बँगला ढंग के कई मकान बना लिए। बंगाल के शासनकर्ताओं की असावधानी और अज्ञान के कारण क्रमशः इन फिरंगियों की संख्या बढ़ती गई और उन्होंने अनेक बड़ी बड़ी और सुदृढ़ कोठियाँ बनवा लीं तथा उनमें तोप, बंदूक और अन्यान्य युद्धसामग्री संचित कर ली। शीघ्र ही यह बस्ती बहुत विकसित होकर 'हुगली बंदर' के नाम से विख्यात हुई। इसके एक ओर नदी की धारा थी और शेष तीनों ओर खाइयाँ थीं जिनमें नदी का जल भरा हुआ था। फिरंगियों के जहाज बंदरगाह तक पहुँचा करते थे जिससे यह स्थान व्यावसायिक दृष्टि से उन्नति करता रहा। सातगाँव के बाजार अवनत होते गए और उनकी सारी समृद्धि जाती रही। हुगली की बस्ती नदी के दोनों किनारों पर फैली हुई थी। फिरंगियों ने बहुत थोड़ा भाड़ा देकर उन्हें अपने अधिकार मे कर लिया। कुछ लोगों को जोर जबर्दस्ती से और कुछ को लाभ का लालच देकर उन्होंने ईसाई धर्म की दीक्षा दी और उन्हें जहाज में लादकर योरप रवाना कर दिया। स्थायी पुरस्कार के बदले उन्हें भयंकर कष्ट उठाने पड़े। फिरंगियों का यह दुर्व्यवहार केवल उन व्यक्तियों के प्रति ही नहीं होता था जिनकी जमीन पर उन्होंने कब्जा कर लिया था, बल्कि नदी किनारे रहनेवाले जिस किसी को भी वे पकड़ पाते थे उसी का अपहरण करके योरप रवाना कर दिया करते थे।

'इन बातों की सूचना शाहजहाँ को राज्यारोहण के पहले ही मिल चुकी थी और उसने यह निश्चित कर लिया था कि यदि राज्यारोहण का

---

१. 'दर अहद-ए-बंगालियान'।—मूल।

अवसर प्राप्त होगा, तो इन अत्याचारों की समाप्ति कर दी जायगी। शाहंशाह होने पर उसने बंगाल की सूबेदारी कासिम खाँ को सौंपी और इन अत्याचारियों को उखाड़ फेकने का निर्देश उसे दिया। बादशाह की आज्ञा थी कि विस्तृत बंगाल प्रांत के शासन विषयक आवश्यक कार्यों की व्यवस्था पूरी होते ही इन अनधिकारी आगंतुकों को निकाल बाहर करने का काम आरंभ कर दिया जाय। जल और स्थल दोनों मार्गों से सेना का आक्रमण करना निश्चित हुआ था जिसमें यह कठिन कार्य शीघ्रता और सुविधापूर्वक संपन्न किया जा सके।

'कासिम खाँ अपनी तैयारी में जुट गया और १०४० हि० में जाड़े की समाप्ति पर (शाबान महीने में) उसने अपने बेटे इनायतउल्ला को सिपहसालार अल्लाहयार खाँ तथा कतिपय अन्यान्य विशिष्ट अधिकारियों के साथ हुगली विजय के लिये रवाना किया। मखसूसाबाद की खालसा भूमि को अधिकृत करने के बहाने उसने अपने चुस्त चालक अनुचर बहादुर कंबू के नेतृत्व में फौज की एक टुकड़ी भी भेजी जो वस्तुतः उचित अवसर पर अल्लाहयार खाँ से मिल जानेवाली थी। फौजों के प्रस्थान का समाचार पाकर दुष्ट फिरंगी सपरिवार जहाजों पर लद फँदकर इस्लाम के रक्षक सैनिकों की पकड़ से बाहर न चले जायँ, इसलिये उसने प्रकाश्य रूप से यह समाचार प्रचारित किया कि ये फौजें हिजली पर हमला करने जा रही हैं। आपस में सलाह करके यह स्थिर किया गया कि अल्लाहयार खाँ बर्दवान में, जो हिजली के मार्ग में पड़ता है, तब तक रुका रहेगा जब तक उसे ख्वाजा शेर तथा उन अन्य लोगों का समाचार नहीं मिल जायगा जिन्हें श्रीपुर[1] से नावों द्वारा आगे बढ़ने की आज्ञा दी गई है जिसमें वे फिरंगियों के आश्रयस्थल का रास्ता काट दें।

---

१ सिरामपुर या श्रीरामपुर।

शाही नव्वारा मुहाना पहुँचते ही, जो हुगली की ही एक झील[1] है, अल्लाहयार खाँ द्वारा समस्त शक्ति सहित बर्दवान से हुगली रवाना होने और दुष्टों पर टूट पड़ने की बात स्थिर हुई थी। यह समाचार मिलने पर कि ख्वाजा शेर और उसके सहयोगी झील तक पहुँच गए हैं, अल्लाह-यार खाँ को बर्दवान से आगे बढ़ने के लिये बाध्य होना पड़ा और रात दिन चलकर वह हुगली तथा सातगाँव के बीच स्थित हल्दीपुर नामक गाँव तक पहुँच गया। यहीं पर अपने ५०० घुड़सवारों तथा पैदल सिपाहियों के साथ मखसूसाबाद से आकर बहादुर कंबू भी उससे मिल गया। तब ये लोग शीघ्रतापूर्वक उस स्थान के लिये रवाना हुए जहाँ ख्वाजा शेर अपनी नावों सहित उपस्थित था। हुगली और समुद्र के बीच एक ऐसे स्थान पर, जहाँ धारा सँकरी थी, उन्होंने नावों का एक पुल बना डाला जिसमें कोई जहाज भागकर समुद्र में न पहुँच जाय। इस प्रकार जलमार्ग पर शत्रु की नाकेबंदी कर ली गई।

'१०४१ हि० के जिलहिज्ज महीने की दूसरी तिथि को जल और स्थल की सेनाओं ने फिरंगियों पर आक्रमण कर दिया। खाईं के बाहर-वाली बस्ती आक्रमण करके लूट ली गई और उसके निवासी मार डाले गए। नदी के दोनों किनारों पर की बस्तियों पर हमला करके वहाँ रहनेवाले तमाम ईसाइयों को या तो मौत के घाट उतार दिया गया या बंदी बना लिया गया। इनके नाविकों के परिवारवालों को, जो बंगाली थे, शाही सिपाहियों ने आपस में बाँट लिया। इस प्रकार फिरंगियों के ४००० बंगाली नाविक, जिन्हें 'घराबी' (या 'गहराबी') कहते थे, विजेता शाही सेना में आ मिले। ईसाइयों के लिये यह बहुत बड़ी हानि थी।

---

१ मूल 'दहना', बँगला 'दहरा'।

'शाही सेनाएँ साढ़े तीन महीने तक घेरा डाले पड़ी रहीं। कभी वे दुष्ट लड़ने लगते, कभी सुलह शांति का दिखावा करते और इस आशा से समय बिताते रहते कि उनके देशवासी सहायता करने आ पहुँचेंगे। नीचता और छलपूर्वक उन्होंने शांति का प्रस्ताव रखा और उसके साथ भेंट स्वरूप एक लाख रुपए भी भेजे, परंतु तुरंत ही उन्होंने अपने ७००० बंदूकधारी सिपाहियों को गोली चलाने की आज्ञा भी दे दी उनकी यह गोलाबारी इतनी भयंकर थी कि घेरा डालनेवाली फौजें जिन वृक्षों के नीचे थीं उनकी डालियाँ और पत्ते तक उड़ गए।

'अंत में गिरजाघर के पास से, जहाँ खाईं बहुत गहरी और चौड़ी नहीं थी, आक्रमण करने की व्यवस्था की गई। नालियाँ खोदकर वहाँ का पानी बहा दिया गया और सुरंगें लगा दी गईं। कुछ को दुष्टों ने देख लिया और नष्ट कर दिया। मध्यवर्ती सुरंग ऐसी इमारत के नीचे थी जो आसपास की इमारतों मे सबसे ऊँची और मजबूत थी और जिसपर बहुत बड़ी संख्या मे फिरंगी जमे थे। इसमें सुरंग लगाकर बारूद भर दी गई। रबि-उल्-अव्वल महीने की १४वीं तिथि को घेराबंदी करनेवाली फौज इस इमारत के सामने आ डटी जिसमें दुष्ट फिरंगी अधिकाधिक संख्या में इस इमारत में आ जायँ। जब अत्यधिक फिरंगी एकत्र हो गए तब एक बार जबर्दस्त गोलाबारी की गई। बारूद भड़क उठी और वह इमारत उड़ गई। उसके आसपास जो बहुतेरे फिरंगी थे वे तक हवा में उड़ गए। इस्लाम के रक्षक सैनिक टूट पड़े और बहुत से फिरंगियों को जलसमाधि दे दी गई। किंतु कई सहस्र फिरंगी भागकर जहाजों पर जा चढ़े। ठीक मौके पर ख्वाजा शेर की नावें भी पहुँच गईं और अनेक भगोड़े मौत के घाट उतार दिए गए।

'इस्लाम के ये शत्रु डर रहे थे कि कहीं वह बड़ा जहाज मुसलमानों के अधिकार में न चला जाय जिसपर लगभग दो हजार स्त्री पुरुषों के अति-

रिक्त बहुत सी संपत्ति भी लदी थी। इसलिये उन्होंने स्वयं उसके बारूद-खाने में आग लगाकर उसे उड़ा दिया। घराबों[1] पर सवार अन्य बहुतेरे फिरंगियों ने अपने जहाजों में आग लगा दी और स्वयं मौत के मुँह में चले गए। ६४ बड़े बड़े डिंगों[1], ५७ घराबों[1] और २०० जलियों[1] में से एक घराब और दो जलिए बच निकले क्योंकि जलते हुए जहाजों पर से कुछ अग्नि उड़कर पुलवाली कतिपय उन नावों पर आ गिरी जिनपर तेल लदा था और उनके जल जाने से नौपंक्ति में दरार पड़ गई थी। किंतु जल वा अग्नि से जो भी बचा वह बंदी बना लिया गया। घेराबंदी के आरंभ से लेकर उसकी समाप्ति पर्यंत स्त्री पुरुष और बूढ़े जवान कुल मिलाकर शत्रुपक्ष के लगभग १०,००० व्यक्ति मारे गए। शाही सेना के भी लगभग १,००० बहादुर शहीद हुए। ४४०० ईसाई औरत मर्द बंदी बनाए गए। आसपास के इलाकों के जो लगभग १०,००० निवासी इन दुष्टों की कैद में थे वे मुक्त कर दिए गए[2]।'

भारत की जिस जाग्रत जनता के विरोध में अँगरेज और फ्रांसीसी नहीं टिक सके उसका विरोध पुर्तगालियों ने किस सीमा तक किया—यहाँ तक कि इच्छा न होते हुए भी, उनके विरुद्ध भारत को शस्त्र ग्रहण करना पड़ा—यह अभी कल की घटना है। परंतु इसकी जड़ कितनी गहरी थी, आरंभ से ही अत्याचार और उत्पीड़न, धर्मांधता और धोखेधड़ी का जो उद्देश्य लेकर पुर्तगाली इस देश में आए थे उसके लालच ने उन्हें कितना विपथगामी बना दिया था, इसका वास्तविक ज्ञान हमें उनके आरंभिक इतिहास से होता है। धार्मिक मदांधता के वशीभूत

---

१ घराब, डिंगा, जलिया=तत्कालीन विभिन्न प्रकार की नावें।

२ इलियट और डासन कृत हिस्ट्री आव इंडिया, भाग ७, पृ० ३१-३४।

होकर मनुष्य अपना सामान्य विवेक किस सीमा तक खो दे सकता है, ईश्वरभक्ति और ज्ञानसाधना का क्षेत्र भी मनुष्य की स्वार्थपरता के कारण कितना दूषित और विकृत हो सकता है, इसका बड़ा सुंदर उदाहरण पुर्तगालियों के उस समय के कार्यकलापों में मिलता है। वस्तुतः धर्म जब जब राजशक्ति पर हावी होता रहा है तब तब उसका अवश्यंभावी परिणाम यही होता रहा है। बौद्धधर्म का इतिहास भी यही रहा है।

'मयूख' और 'असीम'

राखाल बाबू के कथाबंधों में—कम से कम दोनों मुगलकालीन उपन्यासों के कथाबंधों में तो अवश्य—एक ही विशेष उद्देश्य लक्षित होता है। कथानक एक समान अवश्य रखे गए हैं, परंतु कथानक में चमत्कार के फेर में न पड़कर, लेखक ने चारुतापूर्वक अपने उद्देश्य की रक्षा की है। कथानक को उन्होंने ऐसा बाँधा है जिसमें उसके मध्यम से तत्कालीन भारतवासियों और उनके संपर्क में आनेवाले अन्य लोगों की रहन सहन, रीति नीति, शिक्षा दीक्षा, पारिवारिक और सामाजिक जीवनचर्या, देश की व्यापारिक और आर्थिक स्थिति तथा जनमानस के धार्मिक संस्कारों और विश्वासों की कहानी कहने में कहीं कोई अटकाव न हो, सीधे सादे ढंग से अग्रसर होती हुई वह अपना उद्दिष्ट प्राप्त कर ले। साधारण भिक्षुक से लेकर सम्राट् तक के व्यक्तित्वों का प्रतिनिधित्व उनके इन दोनों उपन्यासों में है। यही नहीं, दोनों उपन्यासों के कथानक और मुख्य मुख्य समस्त पात्र समानांतर रूप से अग्रसर होते हैं :

मयूख	असीम
१. मयूख	असीम (दोनों ही आरंभ में अधिकारवंचित)
२. ललिता	शैल (पत्नियाँ)
३. गुलरुख	मुन्नी (वेश्या प्रतिनायिकाएँ)।

४. विनोदिनी	सरस्वती (वैष्णवियाँ)
५. संन्यासी (सिद्ध योगी)	त्रिविक्रम (तांत्रिक सिद्ध)
६. अनूपनारायण	हरनारायण (धूर्त पितृव्य)

मयूख और असीम के ये ही प्रमुख पात्र हैं। इनके अतिरिक्त अन्यान्य सहायक पात्रों में भी गहरी समानता है। दोनों उपन्यासों के नायक अपने अपने पितृव्यों द्वारा छलप्रपंचपूर्वक अपने उत्तराधिकार से वंचित कर दिए गए थे और दोनों ने सम्राट् के अनुग्रह से अपना अपना राज्य पुनः पाया। बंगाल से लेकर आगरा-दिल्ली तक की यात्रा दोनों को करनी पड़ी थी। दोनों नायिकाएँ भी राजधानी तक पहुँचती हैं। दोनों उपन्यासों में एक एक प्रतिनायिकाएँ हैं—मयूख में गुलरुख और असीम में मुन्नी। दोनों प्रतिनायिकाएँ वारांगना हैं, विधर्मी हैं। मयूख की विनोदिनी वैष्णवी और असीम की सरस्वती वैष्णवी एक दूसरे की प्रतिरूप हैं। दोनों प्रौढ़ा हैं और दोनों के चरित्र में अद्भुत साम्य है। दोनों ही बंगाल से लेकर आगरा दिल्ली तक का चक्कर लगाती और कथाप्रवाह को आगे बढ़ाने और उसका वांछित रूप में पर्यवसान करने में यथोचित रूप से सहायक होती हैं। मयूख और असीम दोनों जिन कन्याओं को मरने से बचाते हैं उनका पाणिग्रहण करते हैं। मयूख का संन्यासी और असीम का त्रिविक्रम, दोनों वंगदेश की मध्यकालीन तंत्रोपासना के प्रतीक हैं। पहले दोनों उच्चपदस्थ राजकीय अधिकारी रहे, आगे चलकर दोनों ने शक्ति की उपासना में अद्भुत सिद्धिलाभ किया। दोनों ही अत्यंत दृढ़चेता और दुर्धर्ष प्रकृति के सिद्ध हैं तथा भूत, भविष्य, वर्तमान दोनों के लिये ही 'करतलगत आमलक' हैं। इन मुख्य पात्रों के अतिरिक्त दोनों कृतियों में अनेक सहायक पात्र हैं और उनमें भी बहुत कुछ समानता है।

राखाल बाबू को यदि मात्र कुतूहल और चमत्कारपूर्ण कहानियाँ कहनी होतीं तो संभवतः वे दोनों उपन्यासों में इतनी समानता न रखते।

जैसा कहा जा चुका है, दोनों उपन्यासों के माध्यम से उन्हें दो भिन्न भिन्न युगों के चित्र उपस्थित करने थे और तत्कालीन समाजव्यवस्था एवं राजव्यवस्था में जो अंतर था उसका सूक्ष्म विवेचन करना था। मयूख का युग मुगल साम्राज्य के चरम उत्कर्ष का युग है, जब वह अपने पूर्ण वैभव को प्राप्त था, और असीम की कहानी उस युग की है जब वह विशाल साम्राज्य भीतर से बिलकुल खोखला हो चुका था और सम्राट् अपने ही अमीरों और अनुचरों की दुरभिसंधियों से घिरे उनके हाथ की कठपुतली हो गए थे।

हिंदी में उपन्यासों और कहानियों की प्रभूत रचनाएँ हो रही हैं। परंतु उनमें ऐतिहासिक उपन्यासों का परिमाण बहुत थोड़ा है, अधिकांश रचनाएँ सामाजिक हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों की कथावस्तु और रचना-प्रक्रिया तथा हिंदी साहित्य में उनकी सामयिक स्थिति आदि के संबंध में स्व० आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी का अभिमत द्रष्टव्य है :

'जब तक भारतीय इतिहास के भिन्न भिन्न कालों की सामाजिक स्थिति और संस्कृति का अलग अलग विशेष रूप से अध्ययन करनेवाले और उस सामाजिक स्थिति के सूक्ष्म ब्योरों की अपनी ऐतिहासिक कल्पना द्वारा उद्भावना करनेवाले लेखक तैयार न हों तब तक ऐतिहासिक उपन्यासों में हाथ लगाना ठीक नहीं। द्वितीय उत्थान के भीतर जो कई ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गए या बंगभाषा से अनुवाद करके लाए गए उनमें देशकाल की परिस्थिति का अध्ययन नहीं पाया जाता। अब किसी ऐतिहासिक उपन्यास में यदि बाबर के सामने हुक्का रखा जायगा, गुप्तकाल में गुलाबी और फीरोजी रंग की साड़ियाँ, इत्र, मेज पर सजे गुलदस्ते, झाड़ फानूस लाए जायँगे, सभा के बीच खड़े होकर व्याख्यान दिए जायँगे और उनपर करतलध्वनि होगी, बात बात में 'धन्यवाद', 'सहानुभूति' ऐसे शब्द तथा 'सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना' ऐसे फिकरे

पाए जायँगे तो काफी हँसनेवाले और नाक भौं सिकोड़नेवाले मिलेंगे। इससे इस जमीन पर बहुत समझ बूझकर पैर रखना होगा[1]।'

इसके आगे राखाल बाबू के ऐतिहासिक उपन्यासों की सराहना करते हुए, उन्हीं के ढंग पर ऐतिहासिक उपन्यासों का प्रणयन किए जाने की संस्तुति भी उन्होंने की। यही नहीं, परवर्ती गुप्तयुग पर आधृत राखाल बाबू के 'शशांक' नामक उपन्यास का अनुवाद करके हिंदी में ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना के लिये एक आदर्श ग्रंथ भी उन्होंने सामने रख दिया। अस्तु।

राखाल बाबू की कथात्मक रचनाएँ कुल सात हैं जिनमें छः ऐतिहासिक उपन्यास हैं और एक—पाषाणकथा, अर्थात् पत्थर की आत्मकहानी—है आख्यायिका के रूप में उस पत्थर की आत्मकहानी जो आजकल कलकत्ते के पुरातत्व संग्रहालय में एक प्राचीन तोरण के रूप में सुरक्षित है। यह पत्थर अपनी आत्मकथा के रूप में सृष्टि के आदि से लेकर इस संग्रहालय में अपने आने तक के भारतीय इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालता है। यह यथार्थतः उपन्यास कोटि में नहीं आता। स्वयं लेखक ने इसे 'आख्यायिका' कहा है। इस प्रकार उनके कुल छः उपन्यास हैं, जिनमें तीन बड़े हैं और तीन छोटे। गुप्तयुग पर आधृत दोनों उपन्यास—करुणा और शंशाक, तथा परवर्ती मुगल काल पर आधृत उपन्यास असीम यथेष्ट विस्तृत रचनाएँ हैं। प्रस्तुत कृति मयूख, पाल कालीन इतिहास पर आधृत धर्मपाल एवं ध्रुवा अपेक्षाकृत छोटी कृतियाँ हैं।

गुप्तयुग तो भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग ही था। पर उसके अनंतर मुगल युग में आकर ही राजकीय वैभव के परमोत्कर्ष के दर्शन होते हैं।

---

[1] हिंदी साहित्य का इतिहास, १२वाँ संस्करण, पृ० ४६४।

बाबर, हुमायूँ और अकबर ने जिस साम्राज्य को संघटित किया था वह जहाँगीर और शाहजहाँ के राज्यकाल में अपने पूरे उत्कर्ष को पहुँच गया था। मुगल राज्यश्री के जिस वैभव विलास का उपभोग जहाँगीर और शाहजहाँ ने किया वह पृथ्वीतल पर अन्यत्र दुर्लभ था। 'दिल्लीश्वर' की समता यदि कोई करनेवाला था तो वह 'जगदीश्वर' ही था।

किंतु मानवसंचित इन वैभव विलासों के पीछे कितनी दुरभिसंधियों, कितने ईर्ष्याद्वेषों, कितने घात प्रतिघातों की कहानी छिपी पड़ी है, इसे इतिहास के अध्येता भली भाँति जानते हैं। पूर्वजों द्वारा अर्जित राजलक्ष्मी का उपभोग करने के लिये शाहजहाँ जैसे बादशाह तक को अपने सारे भाइयों और राजगद्दी के अन्यान्य दावेदारों तथा उनके सहायकों को मौत के घाट उतारकर अपना मार्ग निष्कंटक करना पड़ा था।

मयूख का यह अनुवाद अविकल रूप में प्रस्तुत है। आशा है, राखाल बाबू की यह रचना भी उनकी अन्यान्य कृतियों की भाँति ही हिंदीजगत् में समादृत होगी।

दीपावली,
सं० २०१६ वि०

शंभुनाथ वाजपेयी

भूमिका

सातगाँव (सप्तग्राम)[1] और चटगाँव में पुर्तगालियों ने जिन जिन उपनिवेशों की स्थापना की थी, वे १७वीं शताब्दी के आरंभ में बंगाल में मुगल शासन की शैशवावस्था में रोमन कैथोलिक मिशनरियों के अत्याचारों के केंद्र बन गए थे। पुर्तगाली जलदस्युओं के अत्याचार और उससे भी अधिक पुर्तगाली पादरियों के उत्पीड़न के कारण बाध्य होकर बादशाह शाहजहाँ ने कासिम खाँ को हुगली पर आक्रमण करने का आदेश दिया था। मुहम्मद अमीन रचित बादशाहनामा अथवा तारीखे शाहजहाँ नामक ग्रंथ में इन समस्त घटनाओं का वास्तविक इतिहास दिया हुआ है। पुर्तगाली पादरियों और जलदस्युओं का अत्याचार ही बंगाल में पुर्तगाली शक्ति के अधःपतन का कारण हुआ, इसे अँगरेज इतिहासवेत्ता कीन (एच० जी० कीन) और पुरातत्व विभाग के अध्यक्ष स्व० डा० बर्गेस (जेम्स बर्गेस) ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया है। अँगरेजी ईस्ट इंडिया कंपनी की सहायता के बिना

---

१. सप्तग्राम या सातगाँव हुगली जिले में सरस्वती नदी के तट पर बसा इतिहासप्रसिद्ध स्थान था। समुन्नत व्यावसायिक बंदरगाह के रूप में इसका यथेष्ट विकास हुआ था, पर १५९२ ई० में इसे मुसलमानों ने लूट मारकर ध्वस्त कर दिया। १६१० ई० के लगभग सरस्वती की धारा सूख जाने पर यह स्थान पूरी तरह नष्ट हो गया।—अनु०।

शाहजहाँ पुर्तगालियों को पराजित कर पाता या नहीं, इसमें संदेह है। सन् १६२६ ई० में शाहजहाँ ने सूरत बंदरगाह के अँगरेज प्रधानाध्यक्ष को मुगल साम्राज्य के अंतर्गत सर्वत्र निरंतर पुर्तगाली जहाजों पर आक्रमण करते रहने का फर्मान दिया था। १५६० ई० में भारतवर्ष में पुर्तगालियों ने अपनी 'इनक्विजिशन' नामक विचारप्रणाली का अवलंबन आरंभ किया था, जिसकी समाप्ति १८१४ में हुई। कीन रचित इतिहास तथा बादशाहनामा में पुर्तगाली पादरियों द्वारा बंगाल में किए गए अत्याचारों का विवरण द्रष्टव्य है। आगस्टीनियन संप्रदाय के ईसाई साधु (फ्रायर) मैनरिक ने हुगली युद्ध का जो विवरण लेखबद्ध किया है, वह इतिहास नहीं है, उसमें पक्षपात और एकांगिता है। प्रस्तुत कहानी उस युग की ऐतिहासिक घटनाओं का अवलंबन करते हुए रची गई है।

सुहृद्वर श्रीमान् भूपेंद्रकृष्ण घोष के आग्रह के अनुसार मुगल काल के सर्वाधिक गौरवपूर्ण युग के ऐतिहासिक विवरण के रूप में यह कथा निर्मित हुई है। बादशाहनामा, अमल - ए - सलीह, रियाजुस्सलातीन, मआसिर - उल् - उमरा इत्यादि प्रसिद्ध इतिहासग्रंथों का अनुकरण करते हुए इस पुस्तक का इतिहास संबंधी अंश प्रस्तुत किया गया है। इसकी पांडुलिपि श्रीयुक्त हरिदास साहा और श्रीमान् भूदेवचंद्र मुखोपाध्याय ने प्रस्तुत की है।

कलकत्ता,
३ पौष, १३२३

—ग्रंथकार

कथाबंध

परिच्छेद			पृष्ठ

परिच्छेद पृष्ठ

म यू ख

प्रथम परिच्छेद

ललिताहरण

शरद् ऋतु की दोपहरी में भागीरथी के पश्चिम तट पर आम की छाया तले एक छोटी सी नौका में बैठा हुआ एक युवक अनमने भाव से कुछ गुनगुना रहा था। पास ही तीर धनुष रखा था और दो तीन तुरंत मारे गए पक्षी नाव पर पड़े थे। उस छोटी सी नौका के दूसरी ओर एक प्रौढ़ मल्लाह लग्गी में नाव को बाँधकर निश्चिंत सो रहा था। ईंटों से बने अत्यंत पुराने घाट पर आम का पेड़, सौ वर्ष से भी ऊपर हुए, उगा था और कालक्रम से ज्यों ज्यों उसका आकार बढ़ता गया त्यों त्यों घाट भी जीर्ण शीर्ण होता गया। भाद्रपद मास में भागीरथी की धारा किनारे तक लबालब भरी थी—प्राचीन घाट की तीन चार सीढ़ियाँ ही डूबने से बची रह गई थीं। घाट के पास ही एक गाय प्रसन्न मन से केले का जूठा पत्तल चबा रही थी। चारों ओर सन्नाटा था। सहसा सन्नाटे को भेदता हुआ घाट के ऊपर से किसी स्त्री का कंठस्वर सुनाई पड़ा—

'घाट पर किसकी नाव है? जल्दी हटा ले जाओ।'

कंठस्वर सुनकर मल्लाह की नींद टूटी और युवक का गुनगुनाना भी बंद हुआ। मल्लाह ने पूछा—'कौन है?'

जिसने नाव हटा ले जाने के लिये कहा था, उसने पुनः कहा—'तुम लोग कैसे आदमी हो जी? नाव हटाने को कहती हूँ, हटाते क्यों नहीं? मालकिन लोग घाट पर कैसे आएँगी?'

मल्लाह क्रोधपूर्वक बोला—'नाव नहीं हटेगी, अपनी मालकिनों से कह दे, दूसरे घाट पर जायँ!'

युवक ने मुड़कर कहा—'भुवन!'

मल्लाह उठकर नाव में खड़ा हो गया, बोला—'महाराज?'

'क्या करते हो?'

'क्यों महाराज?'

'संभ्रांत महिलाएँ गंगास्नान के लिये आई हैं; यहाँ नाव बँधी रहने पर वे कैसे स्नान करेंगी?'

'मालकिन लोग जैसे इतनी दूर आई हैं वैसे ही थोड़ा और कष्ट करके दूसरे घाट पर जा सकती हैं। न जाने कहाँ से कौन स्नान करने आई हैं, उनके कारण महाराज की नाव क्यों हटाऊँ?'

'भुवन, तुम तो पागल हो गए हो!'

'क्यों हुजूर?'

'मैं तो रास्ते का भिखारी हूँ, लोग क्यों मेरा अन्याय अनाचार सहेंगे? तुम नाव हटा लो।'

अंततः लग्गी खोलकर मल्लाह नाव को दूर हटा ले गया। घाट से जाते समय युवक ने पुकारकर कहा—'आप लोग घाट पर आ जाइए। नाव मैंने हटा ली है।'

घाट से थोड़ी ही दूर पर बाँस का बहुत बड़ा झुरमुट था। नदी का करार कट जाने के कारण बाँस की ऊपरी डालियाँ झुककर धारा का स्पर्श करने लगी थीं। उसी के नीचे नाव को एक बास में बाँधकर भुवन फिर सोने का उपक्रम कर रहा था कि युवक बोला—'भुवन, तुम अब मुझे महाराज मत कहा करो।'

विस्मित होकर मल्लाह ने पूछा—'क्यों महाराज?'

'तुम मुझे महाराज क्यों कहा करते हो?'

'हुजूर, आपके पिता, दादा, परदादा, सभी महाराज थे, इसीलिये आपके कुल के सब लोगों को महाराज कहता हूँ।'

'लेकिन मैं तो महाराज नहीं हूँ।'

'किसी न किसी दिन होंगे ही; सभी लोग कहते हैं कि छोटे राजा की मृत्यु के बाद आप महाराज होंगे।'

'गलत है भुवन, एकदम गलत है। वर्तमान महाराज के बाद केशव राजा होगा। मैं तो जैसा हूँ, वैसा ही रहूँगा। तुम लोग वर्तमान महाराज को छोटे राजा और मुझे महाराज कहकर मेरा अहित करते हो।'

'सो क्यों महाराज? अपने पिता का राज्य आपको क्यों नहीं मिलेगा?'

'काका जी को दिल्ली से फरमान मिला है। मैं जब छोटा था, तब मालगुजारी बाकी पड़ गई थी, इसलिये सूबेदार ने मेरा राज्य जब्त कर लिया था। उसी समय छोटे राजा ने दिल्ली से फरमान जारी कराकर राज्य पाया था।'

'दो साल मालगुजारी बाकी पड़ी रह जाने से क्या आपका सात पीढ़ी से चला आता हुआ अधिकार लुप्त हो जायगा?'

'पर बादशाह की आज्ञा कौन नहीं मानेगा?'

'यह नहीं होने का, महाराज! राज्य आपके पिता का है, आपको ही मिलेगा।'

अकस्मात् गंगातट से कोई बोल उठा—'यही ठीक है, मयूख! अपने पिता का राज्य तुम्हें वापस मिलेगा।'

युवक और मल्लाह चौंककर तट की ओर देखने लगे। बाँस की जड़ के पास एक बृहत्काय गेरुआ वस्त्रधारी संन्यासी खड़े थे। उनपर दृष्टि पड़ते ही युवक को रोमांच हो आया। भक्तिपूर्वक प्रणाम करके उसने पूछा—'आप यह क्या कह रहे हैं, प्रभो!'

'ठीक कहता हूँ मयूख, कुछ दिनों बाद तुम अपने पिता के राज्य के स्वामी होओगे!'

लंबी साँस लेकर युवक बोला—'यह असंभव है, प्रभो!'

'संसार में कुछ असंभव नहीं, मयूख! तुम धर्म के मार्ग पर ही रहना; सत्य से विचलित मत होना; देवता, ब्राह्मण, स्त्री और बालकों की रक्षा करना; असहायों और अनाथों की सहायता करना; ऐसा करोगे तो भगवान् की कृपादृष्टि एक दिन अवश्य होगी; परीक्षाकाल सामने ही उपस्थित है।'

भक्तिभाव से प्रणाम करके युवक ने मुँह उठाया; देखा, संन्यासी अंतर्धान हो चुके हैं। उसने आश्चर्य से मल्लाह की ओर देखा और मल्लाह ने उसकी ओर। युवक ने पूछा—'भुवन, संन्यासी महाराज किधर गए?'

'भुवन ने सिर खुजलाते खुजलाते कहा—'वही तो, किधर गए स्वामी जी?'

'तुमने देखा नहीं?'

'नहीं महाराज, मैंने आँखें बंद कर रखी थीं।'

'क्यों ?'

'महाराज,...'

'फिर महाराज !'

'हुजूर, मेरी सात पीढ़ी जो कहती आई है, उसका अभ्यास एक ही दिन में कैसे छूटेगा ?'

'अच्छी बात है। पर तुमने आँखें क्यों मूँद रखी थीं ?'

'डर के मारे !'

'यह क्यों ? भुवन को डर !'

'महाराज, मैं मनुष्य या जानवर से नहीं डरता। मगर इन गेरुआ-धारी महात्मा को देखकर कलेजा काँप उठता है।'

'ठीक कहते हो। ये साधु संन्यासी बड़े क्रोधी स्वभाव के होते हैं।'

भुवन को कुछ बोलते न देख युवक ने उसकी ओर दृष्टि घुमाई; देखा कि नदी में दूर पर जाती हुई एक नाव को वह एकटक देख रहा है। युवक ने तब दुबारा जिज्ञासा की—'भुवन, तुम क्या देख रहे हो ?'

भुवन ने मुँह फिराए बिना ही कहा—'महाराज, वह नाव बड़ी तेज जा रही है !'

'जान पड़ता है, फौजदार की डोंगी है।'

'डोंगी नहीं है हुजूर, एक बड़ी नाव है।'

'बड़ी नाव इतनी तेज कैसे जायगी ?'

'फिरंगियों की नाव तेज जाती है।'

'फिरंगियों की नाव यहाँ कहाँ से आएगी ? सतग्राम यहाँ से बहुत दूर है।'

'यही तो मैं भी सोच रहा हूँ। हमारे मकसूसाबाद के बादशाही मल्लाहों के पास तो बड़ी नाव है नहीं। यह शायद ढाका से आ रही है।'

'हुजूर, बहुत ही बड़ी नाव है; एक ही ओर पचास डाँड़े चल रहे हैं...'

भुवन को अकस्मात् रोमांच हो आया। घबड़ाकर, युवक ने पूछा—'क्या हुआ?'

भुवन ने कुछ उत्तर दिए बिना ही नाव में पड़ा धनुष उठा लिया। उसे धनुष उठाते देख युवक ने भी धनुष उठाया। देखते देखते एक बहुत बड़ी नाव गंगा की बीच धारा में तीर की तरह तेजी से आ पहुँची। व्यापारियों की दो तीन नावें पाल के सहारे धीरे धीरे आगे बढ़ रही थीं। बड़ी नाव उनके सामने आकर रुक गई। दो तीन बार बंदूक छूटने का शब्द हुआ और उसके साथ ही एक नाव डूब गई। भुवन बोल उठा—'मैं ठीक कहता था, महाराज! फिरंगी बेड़े का पोत है। तीनों नावें गईं!'

बंदूक दगने का शब्द रह रहकर हो रहा था। देखते देखते तीनों नावें डूब गईं। सहसा बड़े वेग से वह पोत तट की ओर आया और पूर्वोक्त टूटे घाट के किनारे लग गया। घाट पर से स्त्रियों का आर्तनाद होने लगा जिसे सुनकर युवक ने कहा—'भुवन, नाव खोल दो।'

'हुजूर कहते क्या हैं? हम लोग ठहरे केवल दो आदमी, उधर बेड़े की नाव में पचास बंदूकधारी व्यक्ति हैं। जान बूझकर मौत के मुँह में जाऊँ?'

'कहता हूँ, नाव खोल दो; नहीं खोलोगे तो मैं किनारे पर उतर जाऊँगा।'

'एक ही बात है। अच्छा, ऐसा कीजिए कि नाव को इस बाँस की झाड़ी में छिपा दीजिए। इससे यह सरलता से दिखाई न देगी। आइए, हम दोनों बाण चलाना आरंभ करें।'

छोटी सी नाव सहज ही बाँसों के झुरमुट में घुस गई। युवक ने देखा कि घाट पर एक फिरंगी एक स्त्री को उठाकर नाव में ले जाने की चेष्टा कर रहा है और स्त्री सीढ़ियों को पकड़कर आत्मरक्षा का प्रयत्न कर रही है और कह रही है—'हे भगवन्, रक्षा करो!'

सहसा दो पैने तीर आकर फिरंगी दस्यु की आँख और बाएँ कंधे में घुस गए। वह घाट से लुढ़ककर जल में गिर पड़ा। उसकी नाव के मल्लाह और दो तीन फिरंगी नाव के छेदों की मरम्मत कर रहे थे। वे घायल फिरंगी को किनारे निकाल ले गए। बाँस के झुरमुट में से सावन की झड़ी की भाँति तीरों की बौछार होने लगी। दस पंद्रह व्यक्ति आहत हो गए। यह देखकर मल्लाहों और फिरंगियों ने घाट की ओट में होकर बंदूकें सँभालीं। फिरंगी द्वारा परित्यक्त स्त्री घाट पर अचेत पड़ी रही।

बंदूक के साथ धनुष लेकर लड़ाई कब तक टिकती है? भुवन को दो तीन जगह घाव लग चुके थे। धीरे धीरे तरकस के तीर समाप्त हो चले। किंतु गोलियाँ तब भी अविराम गति से बरस रही थीं। एक गोली आकर युवक की कनपटी के पास लगी और वह मूर्च्छित होकर अपनी डोंगी में गिर पड़ा। यह देख भुवन ने नाव को खींचकर बाहर किया और बाँधनेवाली रस्सी को दाँतों से पकड़कर जल में कूद पड़ा। धारा में पड़कर छोटी सी नाव तेजी से जाने लगी। फिरंगी लोग अपने पोत की मरम्मत करके अचेत स्त्री को उसमें उठा ले गए तथा उसे आगे बढ़ाकर दक्षिण दिशा की ओर चलते बने।

'यही तो मैं भी सोच रहा हूँ। हमारे मकसूसाबाद के बादशाही मल्लाहों के पास तो बड़ी नाव है नहीं। यह शायद ढाका से आ रही है।'

'हुजूर, बहुत ही बड़ी नाव है; एक ही ओर पचास डाँड़े चल रहे हैं...'

भुवन को अकस्मात् रोमांच हो आया। घबड़ाकर, युवक ने पूछा—'क्या हुआ?'

भुवन ने कुछ उत्तर दिए बिना ही नाव में पड़ा धनुष उठा लिया। उसे धनुष उठाते देख युवक ने भी धनुष उठाया। देखते देखते एक बहुत बड़ी नाव गंगा की बीच धारा में तीर की तरह तेजी से आ पहुँची। व्यापारियों की दो तीन नावें पाल के सहारे धीरे धीरे आगे बढ़ रही थीं। बड़ी नाव उनके सामने आकर रुक गई। दो तीन बार बंदूक छूटने का शब्द हुआ और उसके साथ ही एक नाव डूब गई। भुवन बोल उठा—'मैं ठीक कहता था, महाराज! फिरंगी बेड़े का पोत है। तीनों नावें गईं!'

बंदूक दगने का शब्द रह रहकर हो रहा था। देखते देखते तीनों नावें डूब गईं। सहसा बड़े वेग से वह पोत तट की ओर आया और पूर्वोक्त टूटे घाट के किनारे लग गया। घाट पर से स्त्रियों का आर्तनाद होने लगा जिसे सुनकर युवक ने कहा—'भुवन, नाव खोल दो।'

'हुजूर कहते क्या हैं? हम लोग ठहरे केवल दो आदमी, उधर बेड़े की नाव में पचास बंदूकधारी व्यक्ति हैं। जान बूझकर मौत के मुँह में जाऊँ?'

'कहता हूँ, नाव खोल दो; नहीं खोलोगे तो मैं किनारे पर उतर जाऊँगा।'

'एक ही बात है। अच्छा, ऐसा कीजिए कि नाव को इस बाँस की झाड़ी में छिपा दीजिए। इससे यह सरलता से दिखाई न देगी। आइए, हम दोनों बाण चलाना आरंभ करें।'

छोटी सी नाव सहज ही बाँसों के झुरमुट में घुस गई। युवक ने देखा कि घाट पर एक फिरंगी एक स्त्री को उठाकर नाव में ले जाने की चेष्टा कर रहा है और स्त्री सीढ़ियों को पकड़कर आत्मरक्षा का प्रयत्न कर रही है और कह रही है—'हे भगवन्, रक्षा करो!'

सहसा दो पैने तीर आकर फिरंगी दस्यु की आँख और बाएँ कंधे में घुस गए। वह घाट से लुढ़ककर जल में गिर पड़ा। उसकी नाव के मल्लाह और दो तीन फिरंगी नाव के छेदों की मरम्मत कर रहे थे। वे घायल फिरंगी को किनारे निकाल ले गए। बाँस के झुरमुट में से सावन की झड़ी की भाँति तीरों की बौछार होने लगी। दस पंद्रह व्यक्ति आहत हो गए। यह देखकर मल्लाहों और फिरंगियों ने घाट की ओट में होकर बंदूकें सँभालीं। फिरंगी द्वारा परित्यक्त स्त्री घाट पर अचेत पड़ी रही।

बंदूक के साथ धनुष लेकर लड़ाई कब तक टिकती है? भुवन को दो तीन जगह घाव लग चुके थे। धीरे धीरे तरकस के तीर समाप्त हो चले। किंतु गोलियाँ तब भी अविराम गति से बरस रही थीं। एक गोली आकर युवक की कनपटी के पास लगी और वह मूर्च्छित होकर अपनी डोंगी में गिर पड़ा। यह देख भुवन ने नाव को खींचकर बाहर किया और बाँधनेवाली रस्सी को दाँतों से पकड़कर जल में कूद पड़ा। धारा में पड़कर छोटी सी नाव तेजी से जाने लगी। फिरंगी लोग अपने पोत की मरम्मत करके अचेत स्त्री को उसमें उठा ले गए तथा उसे आगे बढ़ाकर दक्षिण दिशा की ओर चलते बने।

फिरंगियों की नाव आँखों से ओझल होने पर पूर्वोक्त संन्यासी महाराज आकर घाट पर खड़े हो गए और बोले—'आज ही से मेरा प्रतिशोध आरंभ होगा ! सारे बंगाल को मैं फिरंगी दस्युओं के अत्याचार से मुक्त कराऊँगा।'

वे जल में उतर गए और वेगवती धारा में पहुँचकर दक्षिणाभिमुख आगे बढ़ चले।

द्वितीय परिच्छेद

समाज का शासन

'इस बार देख लूँगा गोसाईं जी को। अभी धर्म कर्म संसार में बचा है! ब्राह्मण के ऊपर कब तक अत्याचार सहा जायगा? हे दर्पहारी मधुसूदन! तुम धन्य हो! मैं फुलिया का मुखर्जी हूँ, विष्णु पंडित की संतान! मेरे ऊपर अत्याचार!'

भागीरथी के पश्चिमी तट पर एक छोटे से गाँव में पुराने पीपल के नीचे ईंट के बने चबूतरे पर बैठे कतिपय प्रौढ़ और वृद्ध जन समाज-संस्कार की व्यवस्था में प्रवृत्त थे। उनमें से एक व्यक्ति ने उपर्युक्त बातें कहनेवाले से कहा—'अरे भाई हरिनाथ, यह तो बताओ कि अब किया क्या जाय?'

'करना क्या है? इस गोसाईं ने जो व्यवस्था मेरे लिये बताई थी, वही व्यवस्था इसके लिये भी होगी। आज ही से राधामोहन गोस्वामी का हुक्का बंद, नाई बंद, धोबी बंद। गोसाईं चाहे सपरिवार बैरागी हो जाय, चाहे बृंदावन चला जाय। क्या राय है, माधव काका?'

तीसरे वृद्ध व्यक्ति ने धीरे धीरे कहा—'व्यवस्था तो यही ठीक है। राधामोहन गोस्वामी की अविवाहिता युवती कन्या को जब फिरंगी पकड़ ले गए हैं तो दोष पितृकुल को ही लगता है।'

दूसरे वक्ता ने माधव काका से पूछा—'काका, यही क्या आखिरी निश्चय है? यह तो बिचारे ब्राह्मण के लिये बड़ा कड़ा दंड है?'

'कड़ा क्या है ? ऐसे मामलों में कठोर दंड का विधान न करने से कुछ दिन बाद राधामोहन गोस्वामी समाज की छाती पर लात मारकर फिरंगी दामाद को घर ले आएगा । क्यों कालिदास, क्या कहते हो ?

'यही तो बात है; क्या किया जाय ?'

हरिनाथ—'देखो कालिदास, तुम लोग अगर राधामोहन गोस्वामी को समाज से बाहर नहीं करोगे तो मैं अपने प्राण दे दूँगा और ब्रह्म-हत्या का पाप तुम्हीं लोगों पर पड़ेगा ।'

माधव—'कैसी बातें कहते हो हरिनाथ ! तुम ठहरे रोटी बेटी के संबंधवाले अपनी ही जाति बिरादरी के; तुम्हें छोड़कर उस स्वर्णकार ब्राह्मण राधामोहन गोसाईं का पक्ष लूँगा ?'

हरिनाथ—'तब फिर गोसाईं जातिबाहर हुआ न ?'

माधव—'और नहीं तो क्या ?'

इसी समय एक लंबे तड़ंगे श्यामवर्ण ब्राह्मण उस पीपल तले आ पहुँचे । उन्हें देखकर वहाँ उपस्थित सभी ब्राह्मणों ने उनका अभिवादन किया । उन्होंने पूछा—'कहो माधव, क्या मामला है ?'

'तर्करत्न महाशय, सुना जा रहा है कि राधामोहन गोस्वामी की लड़की को फिरंगी पकड़ ले गए हैं ।'

'यह क्या, कब ले गए ?'

'अभी अभी, थोड़ी देर पहले ।'

'राधामोहन को मालूम हुआ ?'

'सब मालूम है, मैंने स्वयं जाकर बताया था ।'

'तुम्हारी वृद्धमंडली यहाँ बैठी क्या कर रही है ?'

'करेगी क्या, जाति बिरादरी की रक्षा की व्यवस्था कर रही है ।'

'तुम लोग मर्द हो या औरत ? डाकू लोग ब्राह्मणकन्या को उठा ले गए और तुम लोग उसके उद्धार की चेष्टा न करके निश्चिंत बैठे हो !

कुलीन ब्राह्मणों में तुम्हीं लोग अगुआ हो, राढ़ी ब्राह्मणों के मुकुटमणि! माधव, भला जातिरक्षा के लिये क्या व्यवस्था कर रहे हो तुम?'

'गोस्वामी का धोबी नाई बंद कर दिया गया है।'

'गोस्वामी का अपराध?'

'कैसी बात करते हैं तर्करत्न महाशय? गोस्वामी की युवती कुमारी कन्या को फिरंगी पकड़ ले गए तो क्या समाज इसकी व्यवस्था नहीं करेगा? कड़ा दंड न दिया गया तो समाज रसातल में चला जायगा। दो दिन बाद राधामोहन गोस्वामी फिरंगी जामाता को घर लाकर समाज को न्योता देंगे।'

'हरिनाथ, राधामोहन ने क्या फिरंगी को निमंत्रण देकर बुलाया था?'

'नहीं।'

'तब क्या हुआ?'

'गोस्वामी की लड़की गंगा नहाने गई थी। फिरंगी उसे घाट पर से पकड़ ले गए।'

'इसमें राधामोहन का क्या अपराध है?'

'अविवाहिता कन्या को म्लेच्छ फिरंगी पकड़ ले गया, इसमें पितृकुल को दोष नहीं लगेगा क्या?'

'पितृकुल का क्या अपराध है? इतना ही कह सकते हो कि कन्या गंगास्नान के लिये क्यों गई। इस समाज में किसकी माँ, किसकी बेटी, किसकी बहन गंगा नहाने नहीं जाती?'

राढ़देशीय वह कुलीन समाज निरुत्तर हो गया। कुछ देर बाद हरिनाथ ने साहस करके पूछा—'लेकिन समाजरक्षा का क्या उपाय होगा?'

'समाज की तो कोई हानि हुई नहीं। तुम्हारी बहन जिस समय मुसलमान के साथ घर से भाग गई थी, उस समय तुमने यह चेष्टा की थी कि वह घर लौट आए। इसी कारण तुम्हारे लिये दंड निश्चित करके समाज की सुरक्षा की व्यवस्था मैंने की थी। राधामोहन की कन्या ने क्या फिरंगी के औरस पुत्र को जन्म दिया है?'

हरिनाथ अंततः चुप हो रहे। तर्करत्न ने पुनः जिज्ञासा की—'समाज की कोई हानि न होने पर भी उसकी रक्षा की व्यवस्था तुमने की, लेकिन वृद्ध और पुत्रहीन राधामोहन की एकमात्र कन्या को जो डाकू उठा ले गए, उसके उद्धार की तुमने कौन सी व्यवस्था की?'

'क्या करूँ? फिरंगी बेड़ा गोला बारूद लेकर लड़ाई करता है, कोई ऐरे गैरे डाकू हैं कि लठैतों को लड़ने भेज दूँ। फौजदार, सूबेदार तक फिरंगी के भय से जहाँ चिंतित रहते हैं, वहाँ हम लोग कर ही क्या सकते हैं?'

हरिनाथ—'लेकिन गोस्वामी को जातिच्युत करना ही उचित है।'

'तुम लोग आदमी हो कि पत्थर! भलाई नहीं कर सकोगे, लेकिन बुराई करना जानते हो। अभागी लड़की का उद्धार न करके उसके पिता को जातिच्युत करने बैठे हो? नारायण! नारायण! यह ब्राह्मण समाज भला रसातल को क्यों न जायगा?'

पीछे से गंभीर स्वर में किसी ने कहा—'मुद्दत हुई, चला गया तर्करत्न! यह तो समाज की सिरकटी लाश है!'

सबने विस्मित होकर देखा कि वृद्ध राधामोहन गोस्वामी अर्धनग्न अवस्था में खड़े हैं। तर्करत्न ने उन्हें तुरत अपनी बाहों में भर लिया। सहानुभूति पाकर वृद्ध ब्राह्मण फफक फफककर रोने लगे। कुलीन-कुल-चूड़ामणि हरिनाथ मुखोपाध्याय मौका पाकर वहाँ से नौ दो ग्यारह हुए।

तर्करत्न के कंधे पर सिर रखे जोर जोर से रोते हुए वृद्ध गोस्वामी कहने लगे—'भैया, मेरी ललिता ने दो दिन से उपवास कर रखा था; व्रत पूरा करके गंगास्नान करने गई थी। उसी अवस्था में नीच फिरंगी उसे पकड़ ले गए। हाय हाय! कहाँ गई मेरी बेटी! संसार में ऐसा कौन है जो उन प्रचंड डाकुओं के हाथ से उसे छुड़ा लाएगा?'

पीछे से सुनाई पड़ा—'है। जो वास्तविक राजा है, वही तुम्हारी कन्या का उद्धार करने गया है।'

सबने मुड़कर देखा कि दूर पर कटहल के पेड़ के नीचे एक दीर्घकाय गेरुआ वस्त्रधारी संन्यासी खड़े हैं। उन्होंने फिर कहा—'गोस्वामी, तुम घर जाओ, तुम्हारी लड़की लौट आएगी। आज देवेंद्रनारायण नहीं हैं, लेकिन उनका पुत्र वर्तमान है। उत्तरी राढ़ देश का जो वास्तविक अधीश्वर है, वह डाकुओं की दंडव्यवस्था करने गया है। तुम लौट जाओ और घर जाकर गृहदेवता से उसकी मंगलकामना करो।'

उत्तर मिलने की प्रतीक्षा किए बिना संन्यासी महाराज वहाँ से चले गए। ग्रामवासी स्तंभित खड़े रहे। कुछ देर बाद खून से लथपथ देह लिए वृद्ध भुवन ने आकर तर्करत्न को प्रणाम किया और पूछा—'पंडित जी, महाराज जी को कहीं देखा है?'

तर्करत्न ने चकित होकर कहा—'नहीं भुवन; तुम्हें यह चोट कहाँ लगी?'

'फिरंगियों से लड़ने में।'

'कब?'

'थोड़ी देर पहले, गोसाईं की लड़की को छुड़ाते समय।'

'महाराज कहाँ हैं?'

'वे भी घायल हुए हैं। तीर और धनुष लेकर जितनी देर बंदूक-धारियों से लड़ना संभव था, हम दोनों लड़ते रहे। वे मूर्च्छित होकर

नाव में गिर पड़े तो मैंने नाव आगे बढ़ा दी और पानी में उतरकर नाव की रस्सी पकड़ तैरता तैरता निकल भागा। राँगामाटी के पास नाव को किनारे लगाया। महाराज की संज्ञा लौटने पर उन्हें गंगा किनारे बैठाकर गाँव में आदमियों को बुलाने गया था। लौटकर देखा कि न तो वहाँ नाव ही है और न कोई आदमी। गंगा के किनारे उन्हें खोजता चला आ रहा हूँ मगर उनका कहीं कोई पता नहीं।'

कुछ देर सोच विचार करके तर्करत्न ने कहा—'भुवन, हम लोगों ने महाराज को नहीं देखा। मालूम होता है, तुम्हारी नाव लेकर वे फिरंगी बेड़े की नाव का पीछा कर रहे हैं। तुम अपनी बड़ी नाव तैयार करो। देवेंद्रनारायण के अन्न का ऋण जो लोग अभी तक स्वीकार करते हैं उनसे तैयार होने के लिये कहो। महाराज अकेले गए हैं। पता नहीं, क्या हो। हो सकता है, देवेंद्रनारायण के कुल का दीपक ही आज बुझ जाय। तुम देर मत करो। घड़ी भर में ही हमलोग तुम्हारी नाव से सातगाँव जायँगे। मैं कोठी की ओर चला।'

तर्करत्न जल्दी जल्दी पैर बढ़ाकर निकल गए। भुवन भी दूसरी ओर निकल गया। कुछ देर तक मंत्रमुग्ध भाव से खड़े रहने के अनंतर गोस्वामी भी घर लौट आए। तब माधव काका ने कहा—'क्यों कालिदास, क्या समझे? इस गोस्वामी को जातिच्युत करना असंभव है।'

'जब तर्करत्न ही विरुद्ध हैं, तब उपाय क्या है?'

'तर्करत्न क्या फौजदार का सिपाही है?—हरिनाथ कहाँ हैं?'

'गोस्वामी को देखते ही भाग गया!'

'संध्या हुई; चलो, घर चलें।'

—:—

तृतीय परिच्छेद

आश्रयलाभ

ईसा की १७वीं शताब्दी के अंतिम वर्ष के भाद्रपद मास में भागीरथी के विस्तीर्ण वक्ष पर एक दीर्घाकार नौका वेगपूर्वक दक्षिण दिशा की ओर चली जा रही थी। संध्या होनेवाली थी। भागीरथी के दोनों किनारे धूसरवर्ण छाया से ढकते जा रहे थे। सायंकालीन धुँधलेपन में नौका के मल्लाहों ने अपने सामने एक छोटी सी नाव देखकर उसे दूर हट जाने के लिये आवाज लगाई। किंतु छोटी नाव के यात्री या मल्लाह ने कुछ सुना नहीं। देखते देखते वेगवती नाव छोटी नाव की बगल में आ पहुँची। मल्लाहों ने देखा कि कर्णधारहीन छोटी नाव धारा के बीच बही जा रही है और पेंदे में एक मनुष्य पड़ा हुआ है। सहसा बड़ी नाव की गति बदली, वह घूमकर छोटी नाव की बगल में आ लगी। दो तीन मल्लाहों ने छोटी नाव में उतरकर उसमें पड़े व्यक्ति के शरीर की परीक्षा करके देखा कि वह अभी जीवित है किंतु रक्तस्राव के कारण अत्यंत शिथिल हो गया है। मल्लाहों ने उसे अपनी नाव में चढ़ा लिया और छोटी नाव को बहा दिया। बड़ी नाव पुनः दक्षिण की ओर बढ़ने लगी। नौकारोहियों की सुश्रूषा से आहत व्यक्ति की चेतना लौट आई। मल्लाहों ने उसका परिचय पूछा। किंतु उसने अपना परिचय न देकर जिज्ञासा की—'तुम लोग कहाँ जाओगे?'

मल्लाहों ने कहा—'हमलोग सातगाँव जायँगे।'

'रास्ते में और कोई नाव तुम लोगों ने देखी है?'

'नहीं।'

'तुम घायल कैसे हुए ?'

'फिरंगी के साथ लड़ने में।'

'झगड़ा क्यों हुआ; और लड़ाई कहाँ हुई ?'

'मकसूसाबाद के पास गौरीपुर में।'

'फिरंगी ने क्या तुम्हारी नाव पर हमला किया था ?'

'नहीं, वे हमारी एक आत्मीया को पकड़ ले गए हैं।'

'इतनी बात सुनकर एक मल्लाह नाव की कोठरी के भीतर चला गया और थोड़ी देर बाद एक प्रौढ़ व्यक्ति के साथ बाहर आया। प्रौढ़ व्यक्ति ने युवक की कहानी सुनकर उससे अपना परिचय देने का आग्रह किया किंतु युवक ने और कोई विशेष बात नहीं बताई।

इसपर प्रौढ़ व्यक्ति ने कहा—'युवक, तुम बहादुर हो, अस्त्र चलाना जानते हो। पर क्या बंदूक भी चला सकते हो ?'

'ऐसा कोई अस्त्र नहीं जिसे चलाना न सीखा हो।'

'किस जाति के हो ?'

'मैं ब्राह्मण हूँ। और कुछ कृपाकर मत पूछिए। आप जीवनदाता हैं, आपकी आज्ञा का पालन न करने में संकोच होता है।'

युवक को ब्राह्मण कुलोत्पन्न जानकर प्रौढ़ व्यक्ति ने प्रणाम कर उसकी चरणधूलि ग्रहण की और बोले—'पंडित जी, आप भीतर आ जाइए।'

नाव में एक ही कमरा था। उसके भीतर बहुमूल्य बिस्तरे पर एक अत्यंत रूपवान युवक बैठा था। प्रौढ़ व्यक्ति ने कमरे के भीतर प्रवेश करने पर उससे कहा—'गोष्ठ, हमारे ये अतिथि ब्राह्मण हैं, इन्हें प्रणाम करो।'

युवक ने उठकर अतिथि को प्रणाम किया। तदनंतर प्रौढ़ व्यक्ति ने कहा—'गोष्ठ, हमलोगों की जो निजी बंदूकें हैं, उन्हें ले आओ।'

युवक कमरे के नीचे से सात आठ बहुमूल्य बंदूकें ले आया। प्रौढ़ व्यक्ति ने मयूख से कहा—'पंडित जी, इनमें से एक अच्छी सी बंदूक छाँट लीलिए।'

मयूख ने एक छोटी सी बंदूक छाँट ली। युवक नाव की पाटन में से बारूद भरी एक थैली और गोली ले आया तथा मयूख दे दिया। इसके बाद प्रौढ़ व्यक्ति ने पूछा—'आप क्या थक गए हैं?'

मयूख बोले—'नहीं।'

'तो बाहर चलिए, रात की लड़ाई की तैयारी की जाय।'

'नाव के मल्लाह और माँझी क्या बंदूक चलाना जानते हैं?'

'पंडित जी, नाव खेनेवालों में कोई मल्लाह नहीं है, ये सभी शिक्षित सैनिक हैं। आवश्यकता पड़ने पर मल्लाही भी कर लेते हैं।'

'कुल कितने मल्लाह हैं?'

'डेढ़ सौ। सबके पास बंदूकें हैं।'

'उन्हें भरकर तैयार रखना चाहिए।'

'चलिए, बाहर चलें।'

तीनों व्यक्ति कमरे से बाहर आ गए। शुक्ल पक्ष की नवमी की चाँदनी चारों ओर छिटकी हुई थी। अंधकार ने तटवर्ती वृक्षसमूह के अंचल में आश्रय ग्रहण किया था। प्रौढ़ व्यक्ति ने नाव के कर्णधार को पुकारा। पतवार एक मल्लाह को पकड़ाकर वह पास आ गया। प्रौढ़ व्यक्ति बोले—'तैयार हो जाओ केनाराम; जान पड़ता है, रात में लड़ाई होगी।'

केनाराम ने बिना लेशमात्र आश्चर्य प्रकट किए कहा—'किसके साथ हुजूर?'

'फिरंगी बेड़े के साथ।'

म० २ (११००-६२)

'यहाँ भी फिरंगी हैं ? हमलोगों ने तो सोचा था कि बंगाल भर में केवल सातगाँव ही जलकर नष्ट हुआ है। खैर; तो फिर दोनों तोपें बाहर निकाल लूँ ?'

'निकाल लो। बारूद की कमी तो नहीं पड़ेगी ?'

'बारूद काफी है हुजूर। कमी होगी आदमियों की। इतना बड़ा पोत लेकर युद्ध करने के लिये तीन सौ आदमियों की आवश्यकता है—दो सौ नाव खेवेंगे और एक सौ युद्ध करेंगे।'

'लोगों से कह दो, अपनी अपनी बंदूकें भर लें।'

'सारी बंदूकें तैयार हैं; केवल दोनों तोपें भरनी हैं।'

'उन्हें भी जल्दी भर लो।'

कर्णधार के आदेश से दस पंद्रह मल्लाह नाव के नीचे से दोनों तोपें उठा ले आए और उन्हें ऊपर जमा दिया तथा गोला बारूद भरकर उन्हें तैयार कर दिया। तदनंतर सब मिलकर नाव खेने लगे। नाव तीर की तरह आगे बढ़ने लगी।

रात का दूसरा प्रहर बीतने पर भागीरथी के पश्चिमी तट पर तीव्र प्रकाश दिखाई दिया। प्रौढ़ व्यक्ति ने कर्णधार से पूछा—'केना, यह किसका प्रकाश है ?'

'किसी गाँव में आग लगी जान पड़ती है।'

'बड़ा तेज उजाला है। एक दो घर में आग लगने से इतना उजाला न होता।'

नाव देखते देखते प्रकाश के पास पहुँच गई और सब लोगों ने देखा कि एक बहुत बड़ा पूरा गाँव जल रहा है। प्रौढ़ ने जिज्ञासा की—'इतना बड़ा गाँव एक साथ कैसे जल उठा ?'

'हुजूर, जान पड़ता है किसी ने जान बूझकर आग लगाई है।'

'फिरंगी लोग तो नहीं हैं ?'

'भगवान जानें हुजूर; आज्ञा हो तो नाव किनारे लगाऊँ ? छाया छाया में चलने से विपत्ति की आशंका कम रहेगी।'

'ऐसा ही करो।'

नाव मुड़ गई और भागीरथी के पश्चिमी तट से सटकर चलने लगी। सहसा कर्णधार को एक दीर्घाकार नाव दिखाई पड़ी। तत्क्षण उसने अपनी नाव एक छोटे से निकटवर्ती दह में उतार दी। सघन वृक्षों के नीचे अंधकार में नाव बाँधकर सब लोग किनारे पर उतर पड़े, केवल पचीस व्यक्ति नाव के पहरे पर रह गए। किनारे उतरकर प्रौढ़ व्यक्ति ने जिज्ञासा की—'पंडित जी, यह गाँव क्या आपका परिचित है ?'

मयूख बोले—'नहीं, गाँव के भीतर न जाकर, गंगा के किनारे किनारे चलिए। इससे डाकुओं की नाव और उनके दल के बीच हमलोग पहुँच जायँगे।'

प्रौढ़ व्यक्ति बोले—'बड़ी अच्छी राय है ! पंडित जी, देखता हूँ, आप युद्ध की बारीकियों के भी पारखी हैं। साथियो, आओ, हमलोग किनारे की ऊँची भूमि की आड़ लेकर आगे बढ़ें।'

प्रौढ़ व्यक्ति, उनका युवक पुत्र और मयूख नाविकों के आगे आगे चलने लगे। कुछ दूर आगे बढ़ने पर मयूख ने कहा—'देखिए, नाविकों को दो भागों में बाँट दिया जाय। एक दल ग्रामवासियों की रक्षा के लिये जाय, दूसरा दल दस्युओं के लौटनेवाले रास्ते का मोर्चा सँभाले।'

'ठीक है, कौन किधर जायगा ?'

'मैं गाँव की रक्षा के लिये चलता हूँ। आप पिता पुत्र आगे बढ़ें।'

मयूख के साथ सत्तर नाविक गाँव की ओर बढ़ चले। शेष नाविक प्रौढ़ और उनके पुत्र के साथ डाकुओं की नाव की ओर अग्रसर हुए।

थोड़ी देर बाद गाँव की ओर से रह रहकर बंदूक दगने का शब्द होने लगा। कुछ काल पश्चात् एक नाविक ने लौटकर प्रौढ़ व्यक्ति को सूचित किया—'हमलोगों को देखकर डाकू भाग रहे हैं। उनकी नाव कहाँ है?'

प्रौढ़ बोले—'नाव तो ढूँढ़ने पर मिली नहीं। डाकू लोग क्या फिरंगी हैं?'

'या तो फिरंगी हैं या मग[1]।'

इसी समय फिरंगियों के बेड़ेवाली नाव जैसी एक बड़ी सी नाव एक दूसरे दह से निकलकर गंगा की धारा में आ गई। उसे देखकर प्रौढ़ व्यक्ति ने अपने नाविकों से कहा—'जान पड़ता है, यही डाकुओं की नाव है। तुम जाकर पंडित जी से कहो कि गाँव में अब देर लगाने की आवश्यकता नहीं है, डाकू लोग नाव पर चढ़कर भागने की तैयारी में हैं इसलिये जितनी जल्दी हो सके अपनी नाव पर आ जायँ।'

नाविक चला गया। प्रौढ़ व्यक्ति नाव की ओर चले। थोड़ी देर में मयूख और अन्य नाविक भी नाव पर पहुँच गए। नाव तुरंत दक्षिण दिशा की ओर आगे बढ़ी। कमरे में बैठकर प्रौढ़ ने मयूख से पूछा—'पंडित जी, दो दिन बाद सातगाँव पहुँच जायँगे। आप सातगाँव में कहाँ जायँगे?'

'फौजदार कलीमुल्ला खाँ के यहाँ।'

'फौजदार से क्या एक ही दिन में भेंट हो जायगी? सातगाँव में क्या आपका कोई परिचित व्यक्ति है?'

'कोई नहीं। मेरे पिता के एक दो मित्र हैं।'

'वे आपको जानते हैं?'

---

१. अराकान, बर्मा आदि के दस्यु।—अनु०।

'मेरा नाम सुना है, पर मुझसे भेंट नहीं है।'

'ठहरिएगा कहाँ ?'

'कोई पहचानेगा ही नहीं तो सराय में ठहर जाऊँगा।'

'सातगाँव में यदि मेरी कुटिया में ठहरें तो बड़ी कृपा हो।'

'आप मेरे प्राणदाता हैं, जब जो आज्ञा होगी, वही करूँगा। मैं सातगाँव में अपरिचित हूँ, धनहीन भिखारी! आप अनुग्रह करके मुझे दूसरी बार आश्रय देना चाहते हैं, यह मेरा परम सौभाग्य है!'

सहसा तोप दगने की आवाज हुई और उसके साथ ही नाव हिलने लगी। प्रौढ़ व्यक्ति कमरे का दिया बुझाकर जल्दी जल्दी बाहर आए और देखा कि दूर अँधेरे में एक बड़ी सी नाव खड़ी है। उन्हें बाहर आया देख केनाराम उनके पास पहुँचा और बोला—'हुजूर, फिरंगी नाव जान पड़ता है, पीछा कर रही है। गोला लगने से एक मल्लाह बेचारा समाप्त हो गया।'

प्रौढ़ व्यक्ति ने कहा—'हमारी तोप तैयार है न?

'तैयार तो है, मगर उसका गोला इतनी दूर नहीं पहुँचेगा।'

'तो जल्दी नाव घुमाओ।'

तुरंत नाव घूम गई और उत्तर की ओर जाने लगी। उसी समय प्रौढ़ व्यक्ति ने मयूख से कहा—'पंडित जी, यह अत्याचार अब सहा नहीं जाता। इस बार मैं स्वयं अस्त्र धारण करूँगा।'

विस्मित मयूख ने जिज्ञासा की—'आपके ऊपर कौन अत्याचार कर रहा है?'

'पुर्तगाली बनिए या डाकू?'

'पुर्तगाली लोग व्यापारी हैं या डाकू?'

'जब सुविधा होती है, ये लोग व्यापार करते हैं और जब मौका पाते हैं तब लूटपाट करते हैं।'

'फौजदार इन्हें मना नहीं करते?'

'वे कुछ कर ही नहीं पाते।'

'ये सब बातें सूबेदार को क्या नहीं मालूम हैं?'

'भीतर चलिए, बताता हूँ।'

———

चतुर्थ परिच्छेद

अतिथिपरिचय

'पंडित जी, मैं ढाका से आ रहा हूँ। बंगाल के सूबेदार डाकुओं से गरीब प्रजा की रक्षा करने में असमर्थ हैं।'

'तो बादशाह से प्रार्थना की जाय?'

'पंडित जी, मैं व्यापारी हूँ। फिरंगियों के अत्याचार के कारण मेरा सर्वस्व नष्ट हो गया। जो कुछ बचा है, दिल्ली जाने में वह भी चला जायगा।'

'क्यों, बादशाह क्या उसे छीन लेंगे?'

'नहीं; लेकिन बादशाह के दरबार में मेरे पहुँचने के पहले ही फिरंगी बनिए और ईसाई पादरी मेरी बची खुची जमा पूँजी, यहाँ तक कि स्त्री और पुत्र को भी हर ले जायँगे।'

विस्मयपूर्वक मयूख प्रौढ़ व्यक्ति की ओर देखते रहे। कुछ देर बाद उन्होंने पूछा—'आप हैं कौन?'

प्रौढ़ व्यक्ति ने थोड़ा हँसते हुए कहा—'पंडित जी, आपने अपना परिचय छिपा रखा, लेकिन मैं वैसा नहीं करूँगा। मैं सातगाँव का स्वर्णकार वणिक् हूँ। वाणिज्य ही मेरा व्यवसाय है। नाम है गोकुलविहारी सेन। सातगाँव, गौड़, सुवर्णग्राम[1] और ढाका में मेरी कोठियाँ हैं। मेरे पास पहले दस जहाज थे। एक एक करके सब डूब गए।

---

1. आधुनिक विक्रमपुर—अनु०।

गौड़ देश और ढाका में रोजगार ठप हो गया है और सातगाँव में कुछ करना तो असंभव है।'

मयूख ने कहा—'महाशय, मेरा नाम मयूख है। मेरे पिता उत्तर राढ़देश के एक प्रसिद्ध राजा थे। मेरे बचपन में बादशाह के आदेश से मेरे पितृव्य को वह पद मिल गया। मैं अब एकाकी, संवलहीन भिखारी हूँ। आपके दसो जहाज किस प्रकार नष्ट हुए ?'

'पुर्तगाली व्यवसायियों ने कुछ को डुबा दिया और कुछ को छीन ले गए।'

'इसका कोई उपाय नहीं हो सकता क्या ?'

'मैंने बड़ी चेष्टाएँ कर देखीं, लेकिन कोई फल नहीं हुआ।'

'अब क्या कीजिएगा ?'

'अपनी सुरक्षा का प्रबंध।'

'फौजदार और सूबेदार जिनसे पार नहीं पा रहे हैं, उनके साथ आप अकेले कैसे युद्ध करेंगे ?'

'मेरे पास थोड़ी सी सेना है। दूसरे फिरंगी भी मेरी सहायता करेंगे।'

'फिरंगी भी दो तीन तरह के हैं क्या ?'

'आप नहीं जानते क्या ? आजकल जिनका प्रभाव अधिक है वे पुर्तगाली हैं। इसके एक संत जल और स्थल का राज्य लिख पढ़कर इनके नाम दान कर गए हैं, इसीलिये ये संसार भर में सर्वत्र अत्याचार करते घूमते फिरते हैं। दूसरे फिरंगी इनकी तरह उच्छृंखल नहीं हैं। उनमें भी ओलंदेज जाति बड़ी पराक्रमी है। अँगरेज और फ्रांसीसी जाति के लोग धीरे धीरे यहाँ अपना व्यापार फैला रहे हैं। सुनते हैं, इनमें फ्रांसीसी लोग बड़े पराक्रमशाली हैं। परंतु उनके पराक्रम का कोई

प्रभाव इस अंचल में नहीं दिखाई देता। पुर्तगाली बनिए मुझसे इसलिये अप्रसन्न हैं कि मैं दूसरे फिरंगियों के साथ व्यवहार करता हूँ। मेरे जहाज इसी कारण नष्ट हुए। मेरी सातगाँव की कोठी जला दी गई। सभी मामलों में मेरा सर्वनाश करने की चेष्टा की जा रही है।'

'दूसरे फिरंगियों की कोठियाँ कहाँ हैं?'

'इस प्रदेश में नहीं हैं। थोड़े दिन पहले दो अँगरेजों ने पटना में अपनी कोठी खोली थी, लेकिन जान पड़ता है, वह अब बंद हो गई है। ये सब लोग सातगाँव में या उसके आसपास कोठी खोलने की चेष्टा में हैं। सभी फिरंगियों के गुमाश्ते सातगाँव के बाजार में खरीद बिक्री करने आते हैं। पुर्तगाली बनियों की बराबरी इस समय कोई कर नहीं पाता। लेकिन ओलंदेज और अँगरेज अगर एक साथ मिल जायँ तो संभवतः पुर्तगलियों का प्रभाव कम हो जायगा।'

'सूबेदार के दरबार में उपस्थित होने से कोई लाभ नहीं हुआ क्या?'

'ना! मोकर्रम खाँ बड़ा विलासी है। पुर्तगाली बनियों ने अनेक उपायों से उसे संतुष्ट कर रखा है इसलिये वह प्रजावर्ग की या दूसरी जाति के फिरंगियों की कोई अर्जी बादशाह के सामने पेश नहीं होने देता।'

'पुर्तगालियों से युद्ध आरंभ करने पर क्या सूबेदार असंतुष्ट न होंगे?'

'संभवतः होंगे। लेकिन उनको संतुष्ट रखने में तो मेरे वंश के प्राणी प्राणी समाप्त हो जायँगे।'

'तब आप क्या करेंगे? सूबेदार यदि स्वयं फिरंगियों का साथ देंगे तो उनके मुकाबले में आप कब तक ठहर सकेंगे?'

'देखिए, भगवान् की जैसी मर्जी ! पर पंडित जी, आप क्या कीजिएगा ?'

'महामाया ने मुझे आपके आश्रय में पहुँचा दिया है। आप मुझे जैसा करने की आज्ञा देंगे, वैसा ही करूँगा।'

'देखिए, पुर्तगाली बनियों की अपेक्षा पुर्तगाली पादरी और भयानक हैं। आपकी आत्मीया यदि पादरी के हाथ पड़ जायगी तो उसका उद्धार करना कठिन होगा।'

'हम लोग क्या कल सातगाँव पहुँच जायँगे ?'

'नहीं। सातगाँव यहाँ से दो दिनों के मार्ग पर है। मामूली नाव तो एक सप्ताह के पहले नहीं पहुँच पाएगी।'

'फिरंगियों की नाव कितने दिन में पहुँचेगी ?'

'रात दिन चलने पर कल सायंकाल बंदरगाह में पहुँच जायगी।'

'हम लोग एक दिन बाद पहुँचेंगे, इसमें कोई विशेष हानि तो न होगी ?'

'शायद नहीं।'

'सातगाँव में आपके कौन कौन परिचित हैं ?'

'बंदरगाह के मुंशी हाफिज अहमद खाँ, नौबारा के मीर आतिश इनायतउल्ला खाँ, खालसा महाल के नायब दीवान चिंतामणि मजूमदार और फौजदार के खजांची हरिनारायण शील।'

'चिंतामणि मजूमदार और हरिनारायण शील अभी सातगाँव में हैं। दो वर्ष हुए, हाफिज अहमद खाँ की मृत्यु हो गई और इनायतउल्ला खाँ जहाँगीरनगर[1] चले गए। फौजदार के साथ क्या आपका परिचय है ?'

---

१. आधुनिक ढाका नगर—अनु०।

'नहीं ! लेकिन बादशाह शाहजहाँ के साथ जब उड़ीसा के नायब नाजिम अहमदबेग खाँ की लड़ाई हुई थी, उस समय पिता जी और कलीमुल्ला खाँ पिपली से लेकर बर्दवान तक एक साथ रहे। अकबरनगर और जहाँगीरनगर के युद्ध में तो पिता जी अहमदबेग खाँ के दाहिने हाथ ही रहे। नौबारा का कोई कर्मचारी क्या इस समय सातगाँव में है ?'

'है। अमीरुलबहर असद खाँ थोड़े दिन पहले ही सातगाँव में आ गए हैं।'

'हमारा अहोभाग्य है ! असद खाँ भी मेरे पिता जी के मित्र हैं। महावत खाँ और खानाजाद खाँ की सूबेदारी के समय बहुत दिनों तक पिता जी असद खाँ के साथ साथ विद्रोहियों का दमन करने के लिये नियुक्त किए गए थे।'

'सूबेदार के कर्मचारियों में से किसी के साथ बातचीत है ?'

'नायब कानूनगो भगवानराय पिता जी के मित्र हैं। और किसी का स्मरण नहीं है।'

'रात अधिक हो गई है। अब आराम कीजिए। सातगाँव पहुँचकर बाकी परामर्श किया जायगा।'

गोकुल, गोष्ठ और मयूख कमरे में सो रहे। रात के पिछले पहर नाव रुकी। केनाराम ने आकर गोकुल को जगाया और कहा—'हुजूर, आगे बहुत सी नावें दिखाई देती हैं। सभी नावें बड़ी बड़ी हैं। पचास तोपोंवाली एक नाव ठीक मझधार में लंगर डाले खड़ी है। अपनी नाव क्या आगे बढ़ाऊँ ?'

गोकुल, गोष्ठ और मयूख नाव के बाहर आकर खड़े हुए। उन्होंने देखा कि नौसेना के दीपों के प्रकाश में गंगा का वक्ष दिन की भाँति प्रकाशित हो उठा है। यह देखकर गोकुलविहारी ने कहा—'बादशाही

बहर जान पड़ता है। केनाराम तुम धीरे धीरे नाव खेकर शाही गरारे के पास ले चलो।'

नाव धीरे धीरे चली। ग़रारे से कोई सौ हाथ दूर रह जाने पर गरारे पर से पहरेदार संतरी ने हाँक लगाई—'नाव रोको! किसकी नाव है?'

नाव पर से गोकुलविहारी ने कहा—'सातगाँव के व्यापारी गोकुलविहारी सेन की नाव है। सात़गाँव जाना है।'

'आते कहाँ से हो?'

'जहाँगीरनगर से।'

'हुक्मनामा है?'

'है।'

'ठहरो।'

गरारे से एक छोटी सी डोंगी खुली और नाव की बगल में आकर लग गई। एक नौकाधिकारी आकर जहाँगीरनगर का हुक्मनामा देख गया। थोड़ी देर बाद गरारे पर से संतरी ने हाँक लगाई—'नाव बढ़ाओ; मगर होशियार, फिरंगियों की एक नाव इधर ही गई है।'

अपनी नाव पर खड़े खड़े गोकुलविहारी बोले—'कोई हर्ज नहीं।'

बहर को पीछे छोड़ नाव नवद्वीप की ओर बढ़ चली।

पंचम परिच्छेद

आशिक और माशूक

सरस्वती और भागीरथी के संगम के पास इमली के पेड़ की छाया में बैठा एक युवक एकाग्र मन से असंख्य नावों का जमाव देख रहा था। सरस्वती उस समय क्षीण हो चली थी, किंतु फिर भी आजकल की भाँति नाले जैसी नहीं हुई थी। उस समय भी उसमें चार पाँच हजार मन तक की नावें हिजली से आकर सातगाँव तक जाती थीं। साल के बारहो महीने उसमें नावें चला करती थीं। सरस्वती के मुहाने पर छोटी बड़ी बहुत सी नावें भाटा की प्रतीक्षा में खड़ी थीं। उनमें दो तीन बजड़े भी थे। एक बजड़े पर कमरे के सामने दो मुसलमान स्त्रियाँ बैठी थीं। उनमें से एक युवती और सुंदरी थी, दूसरी प्रौढ़ा और कुरूपा। कपड़े लत्ते से वे संपन्न घराने की जान पड़ती थीं, पर थीं वे वेश्या, क्योंकि दिन के समय कोई मुसलमान कुलललना बाहर नहीं निकलती।

सुंदरी ने कुरूपा से कहा—'फातिमा, उस इमली के पेड़ तले जो काफिर जवान बैठा हुआ है, अगर पा जाऊँ तो उससे ब्याह कर लूँ।'

प्रौढ़ा खिन्न होकर बोली—'इतनी बड़ी हुई, लेकिन गंभीरता नहीं आई। कौन सी तकलीफ है, जो काफिर से ब्याह करेगी। मुसलमान घराने में कोई काबिल लड़का नहीं रह गया?'

'जरूर है। मगर पसंद भी तो होना चाहिए।'

'इतनी जगह घूमीं फिरीं, इतने आदमियों को देखा सुना, मगर बेटी, तुम्हें कोई पसंद ही नहीं हुआ?'

'हुआ तो।'

'कौन?'

'यही काफिर जवान।'

'इसकी बात नहीं पूछती। सूबा बंगाल भर में मुसलमान घराने का कोई मन पसंद लड़का नहीं मिला?'

'ना।'

'धन्य है तुम्हारा मन!'

'सो तो बिलकुल ठीक है फातिमा; जरा सितार निकाल लाओ।'

'यहाँ इतने आदमियों के बीच बजड़े पर बैठकर तुम सितार बजाओगी? लोग क्या कहेंगे?'

'मैं क्या सुलताना आरजूमंद बानू बेगम हूँ कि सारे हिंदुस्तान के लोग मुझे दोष देंगे? मैं तवायफ की बेटी हूँ। मेरी माँ जहाँगीरनगर से लेकर लाहौर तक सारे हिंदुस्तान में नाचती गाती फिरती थीं।'

'छिः छिः बिटिया, ऐसी बात मुँह पर नहीं लाते। तुम्हारी माँ स्वर्ग में हैं। वे तवायफ जरूर थीं, मगर कसबी नहीं थी।'

'धत्! मैं यह नहीं कह रही हूँ। माँ पेशवाज पहनकर महफिल में जाती थीं। फिर मैं अगर बजड़े के सामने बैठकर सितार बजाऊँगी तो क्या हर्ज होगा?'

'तुमसे बातों में पार नहीं पाऊँगी बिटिया, तुम्हारी जो मरजी हो, वही करो।'

इतना कहकर फातिमा सितार लेने के लिये उठकर चली गई। बजड़े की छत पर एक वृद्ध मुसलमान व्यक्ति बैठा था। युवती ने उसे इशारा किया और वह आकर सलाम करके खड़ा हो गया। युवती बोली—'हबीब, उस इमली के पेड़ के नीचे जो काफिर बैठा है, गुप्त रूप से उसका पता लगाते आओ। खबरदार, हम लोगों का परिचय मत देना।'

वृद्ध सलाम करके बजड़े पर से नीचे उतर गया। इतने में फातिमा सितार लेकर आ गई। युवती सुर ठीक करने लगी। सुर मिल जाने पर युवती ने तिरछी निगाहों से देख लिया कि हबीब इमली के पेड़ के नीचे जाकर युवक के पास बैठ गया है। युवती के तांबूलरंजित कुसुमकोमल अधरों पर हँसी की एक क्षीण रेखा आई और तुरंत विलीन हो गई।

युवती सितार उठाकर बजाने लगी। तब तक एक पहर दिन भी नहीं चढ़ा था। युवती ने गलत ढंग से पूरबी का आलाप आरंभ किया, पर गलती मालूम होने पर उसे बंद कर दिया। हाथीदाँत के बने छोटे से सितार पर सिंधु राग की एक बड़ी मीठी गत बजने लगी। उस समय सातगाँव में गुणियों की कमी नहीं थी। देखते देखते नदी किनारे लोगों की भीड़ लग गई। युवती ने सितार की आड़ से झाँककर देखा कि काफिर युवक एकटक उसकी ओर देख रहा है। गुलाब की पंखड़ी की भाँति सुंदर अधरों पर पुनः हँसी की रेखा फूट पड़ी। सितार रखकर युवती कमरे में चली गई। किनारे पर और नदी में खड़ी नावों पर लोग साँस रोककर सितार का आलाप सुन रहे थे। सितार बंद होते ही लोग एक साथ बातचीत करने लगे। कोई बोला—'यह बादशाहजादी है। फिरंगी लोग इसे पकड़ लाए थे, पर प्राणों के भय से अब छोड़ दिया है।'

एक अन्य व्यक्ति बोला—'यह ईरान की तवायफ है। सूबेदार की महफिल में मोजरा करने जा रही है।'

एक बुड्ढा फकीर दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ बोला—'जरूर यह परीजादी है। आसमान से शिकार करने जमीन पर आई है।'

इतने में युवक के पास खड़े होकर हबीब ने कहा—'बाबू साहब, इस शहर में शायद नया नया आना हुआ है?'

युवक ने मुड़कर देखा कि एक वृद्ध मुसलमान प्याज की दुर्गंध से भरा अपना मुँह और मेहँदी चढ़ी दाढ़ी उनके मुँह के पास लाकर प्रचुर परिमाण में थूक उड़ा रहा है। युवक को विरक्ति हुई; किंतु वृद्ध इतनी नरमी से बातें कर रहा था कि युवक को अपनी विरक्ति प्रकट करने में संकोच हुआ। उसने कहा—'हाँ।'

वृद्ध ने एक लंबा सलाम खींचते हुए कहा—'बाबू साहब, आप रईस घराने के हैं, यह तो चेहरा ही बता रहा है। घूमने घामने निकले हैं न? सातगाँव बड़ा अजीब शहर है। गौड़ को छोड़कर सारे सूबा बंगाल में ऐसा शहर नहीं है।'

युवक की समझ में न आया कि क्या उत्तर दे। यह बुड्ढा कौन है? दयार्द्र होकर मुझसे बातें करने क्यों आ पहुँचा? युवक यह सोच विचार कर ही रहा था कि वृद्ध ने पुनः जिज्ञासा की—'बाबू साहब, आपने गाजी जाफर खाँ की दरगाह देखी है? ऐसी खूबसूरत इमारतें हिंदुस्तान में कम हैं।'

युवक ने धीरे से कहा—'नहीं।'

'तो चलिए, आपको दिखा लाऊँ।'

युवक ने उसकी इस आकस्मिक कृपा का कारण समझे बिना ही कहा—'चलिए।'

दोनों व्यक्तियों ने उस इमली के वृक्ष के पीछे अवस्थित पत्थर के बने मकबरे में प्रवेश किया।

बजड़े की खिड़की में से युवती ने उन्हें देखा। अपने साथवाली स्त्री से उसने पूछा—'फातिमा, नजीर अहमद क्या नाव पर हैं?'

'फातिमा बोली—'खाँ साहब शायद बाजार गए हैं; मगर ठीक ठीक नहीं कह सकती। देखती आऊँ।'

बाहर जाकर फातिमा ने देखा कि बजड़े के पीछे सारंगा पर खड़ा एक वृद्ध व्यक्ति हुक्का पी रहा है। फातिमा ने उससे कहा—'खाँ साहब, बीबी जी ने आपको तलब किया है।'

इतना सुनते ही वृद्ध ने हुक्का नीचे रख दिया और बोला—'फातिमा बीबी, बीबी जी शायद नाराज हैं। कल रात उन्होंने सितार का मेजराफ खरीद लाने का हुक्म दिया था। मगर शाम को अफीम लेने के बाद उसे एकदम भूल गया। बीबी जी के हाथ में सितार देखते ही डोंगे में छिप रहा। खुदा ताला की कसम बीबी जान, सच बताओ, आज बीबी जी का मिजाज सबेरे से कैसा है?'

फातिमा हँसती हुई बोली—'तुम्हारी तकदीर आज अच्छी है। बीबी जी बहुत खुश हैं। उनके दिल में इश्क ने घर कर रखा है। तुम जल्दी चलो।'

खाँ साहब दाढ़ी मूँछ पर हाथ फेरकर बजड़े पर चढ़ आए और बोले—'फातिमा बीबी, तुम इत्तला कर दो।'

फातिमा ने कहा—'इत्तला करने की जरूरत नहीं है, तुम चले आओ।'

बजड़े के पहले कमरे पर पड़ा किमखाब का पर्दा उठाकर खाँ साहब ने कमरे में प्रवेश किया। युवती उस समय बजड़े की एक खिड़की के पास बैठी पत्र लिख रही थी। यह देखकर खाँ साहब सलाम करके

दरवाजे के पास खड़े रहे। पत्र लिखना समाप्त करके युवती ने उसे अपने मोती जैसे दाँतों में दाब लिया, फिर लिफाफे में उसे बंद करके हाथी-दाँत जड़ी एक अत्यंत सुंदर डिबिया में से लाह और मुहर निकाला। यह देख खाँ साहब दूसरे कमरे से एक जलती हुई बत्ती ले आए। पत्र पर मुहर लगाकर युवती ने उसे खाँ साहब के हाथ में दिया और बोली—'गोकुलविहारी की कोठी से एक हजार मुहरें ले आओ। और देखो, आज ही एक मकान किराए पर ठीक कर आओ। मैं अकबर-नगर नहीं जाऊँगी, सातगाँव में ही रहूँगी।'

खाँ साहब सलाम बजाकर लपकते हुए बाहर चले गए।

अपने साथ युवक को जाफर खाँ की कब्र, मसजिद, मदरसा इत्यादि दिखाकर हबीब उसे इमली के पेड़ के पास लौटा लाया। युवक ने उसे कुछ इनाम देना चाहा, लेकिन वृद्ध व्यक्ति ने किसी प्रकार उसे लेना स्वीकार नहीं किया। वह बोला—'हुजूर अपना पता बता दें तो मैं कल सबेरे घर पर हाजिर हो जाऊँगा और आज्ञानुसार हुजूर को शहर घुमा लाऊँगा।'

युवक ने उसे मना करने की बड़ी चेष्टा की लेकिन वृद्ध व्यक्ति ने कुछ नहीं सुना। लाचार होकर युवक ने बताया—'मैं मीनाबाजार में गोकुलविहारी सेन के यहाँ रहता हूँ। मेरा नाम है मयूख।'

इतना सुनते ही वृद्ध व्यक्ति ने मुँह से थूक का फुहारा छोड़ते हुए कहा—'तोबा तोबा, बाबू साहब; क्या आला नाम है! खुदाताला ने हुजूर को जैसी खूबसूरती दी है वैसा ही हुजूर का नाम भी है। कल सुबह मैं हुजूर के दौलतखाने पर हाजिर हो जाऊँगा।'

इतना कहकर वृद्ध चला गया।

जितनी देर तक मयूख हबीब के साथ बातचीत करत रहे उतनी देर तक एक दीर्घाकार ब्राह्मण एक नाव पर से उन्हें देखते रहे। हबीब के चले जाने पर जब मयूख नदी की ओर लौटे तब ब्राह्मण ने उनका चेहरा देखा। उन्होंने दो तीन बार पुकारा मगर मयूख सुन नहीं सके। ब्राह्मण-वाली नाव कुछ दूर थी। उसके किनारे लगते लगते मयूख चले गए। किनारे पर चढ़कर देखने पर ब्राह्मण को उनका कोई पता नहीं चला।

षष्ठ परिच्छेद

पतितोद्धार में बाधा

सातगाँव आकर मयूख एक बार नित्य प्रातःकाल बंदरगाह तक हो आते थे। वे सोचते थे कि भीमेश्वर से कोई न कोई मेरी खोज-खबर लेने आएगा क्योंकि भुवन लौट गया है। और कोई आए या न आए, भुवन अवश्य आएगा, इस संबंध में उनके मन में कोई संशय नहीं रह गया था। इसीलिये प्रातःकाल वे एक बार बंदरगाह तक, अर्थात् सरस्वती और गगा के संगम तक आ जाते थे। उनके पिता के सभापंडित जगदीश तर्करत्न ने गौरीपुर और भीमेश्वर में उनकी सहायता के उद्देश्य से जो विशाल आयोजन कर रखा था उसका उन्हें कुछ भी पता न था।

दिन का दूसरा पहर आरंभ होता देख मयूख बंदरगाह से शीघ्रता-पूर्वक घर लौट रहे थे। गोकुलविहारी के घर से सातगाँव का बंदरगाह लगभग दो कोस पर था। सड़क पर बड़ी भीड़भाड़ थी, इसलिये जल्दी जल्दी पैर बढ़ाकर चलना असंभव था। फिर भी जहाँ तक हो सकता था, मयूख शीघ्रता से चल रहे थे। बंदरगाह का बाजार पार करके मयूख सातगाँव के किले के नीचे आ गए। उसी समय एक संभ्रांत मुसलमान सज्जन किले के फाटक से निकलकर मयूख के साथ

साथ आगे बढ़ने लगे। थोड़ी देर बाद मयूख ने देखा कि एक मकान के सामने तीन फिरंगी खड़े हैं। उनमें से एक काला कपड़ा पहने था और अन्य दो साधारण सैनिक थे। मकान के सामने बैठा एक युवक बड़े कातर स्वर से कह रहा था—'मैं हिंदू हूँ। मैं ईसाई नहीं हुआ हूँ और न होऊँगा।' और रह रहकर काला वस्त्र पहने फिरंगी के दोनों पैर पकड़कर अपने को छोड़ देने के लिये अनुनय विनय कर रहा था।

फिरंगी कह रहा था—'इसने कल ही ईसाई धर्म ग्रहण किया है। यह अगर अपने घर में रहेगा तो इसके नाते रिश्तेदार मिलकर इसके लिये नरक का रास्ता तैयार करेंगे, इसलिये इसे हुगली जाना पड़ेगा।'

इसी समय मयूख और उनके साथी मुसलमान सज्जन वहाँ पहुँच गए। मुसलमान सज्जन ने फिरंगी से जिज्ञासा की–'क्या हुआ है?'

फिरंगी बोला—'मैं पादरी हूँ। इस हिंदू ने कल पवित्र ईसाई धर्म स्वीकार किया, पर अपने रिश्तेदारों के बहकाने से आज भाग आया है। इसीलिये मैं इसे हुगली लिवा ले जाने के लिये आया हूँ।'

मुसलमान सज्जन ने उस युवक से पूछा—'क्यों, तुम ईसाई हुए हो?'

युवक उस व्यक्ति के पैर पर गिर पड़ा और बोला—'दोहाई है हुजूर; भगवान की सौगंध, मैं ईसाई नहीं हुआ। यह पादरी जबरदस्ती मुझे क्रिस्तान बनाना चाहता था इसलिये मैं हुगली से सातगाँव भाग आया।'

'तो पादरी क्या झूठ बोलता है?'

'जी हुजूर, रक्षा कीजिए।'

तब मुसलमान सज्जन ने पादरी की ओर घूमकर पूछा—'इसने जो कुछ कहा, तुमने सुना न? जबरदस्ती मत करो। तुम लोग काजी के

पास चलो; इस हिंदू पर अगर तुम्हारा अधिकार साबित होगा तो काजी इसे तुम्हारे हाथ सौंप देंगे।'

पादरी ने उद्दंडतापूर्वक कहा—'काजी को हमारा विचार करने का कोई अधिकार नहीं है। यह हिंदू ईसाई हो गया है; मैं फौरन इसे हुगली ले जाऊँगा।'

'सुनो फिरंगी, यह शाहंशाह बादशाह सलामत का इलाका है। तुमने यहाँ जोर जबरदस्ती की को उसकी सजा भुगतोगे।'

'मुझे सजा देने की ताकत तुम्हारे बादशाह के बाप दादों तक में नहीं है। ज्यादा बक बक करोगे तो मारे हंटरों के······।'

क्रोध के मारे मुसलमान सज्जन का चेहरा तमतमा आया। स्वभावतः वे अपनी कमर टटोलने लगे, मगर वहाँ अस्त्र नहीं था। उन्होंने आँखें उठाईं तो देखा कि साथ आया हिंदू युवक बगल में खड़ा खड़ा धीरे धीरे मुसकुरा रहा है। मुसलमान सज्जन ने पुनः पादरी से कहा—'जाओ फिरंगी, तुम्हारा कसूर माफ किया जाता है। शाहंशाह बादशाह सलामत की शान के खिलाफ बदजबानी करने पर हिंदुस्तान के आईन के मुताबिक शूली की सजा दी जाती है। पर तुम विदेशी हो और शायद आईन कानून से नावाकिफ हो। सातगाँव छोड़कर फौरन भाग जाओ, नहीं तो तुम्हारी जान ले ली जायगी।'

फिरंगी क्रोधावेश में ज्ञानशून्य हो गया था। बोला—'तेरे जैसे बेदीन कुत्तों को हम लोग जेल में बंद करके सुअर का मांस खिलाते हैं।'

मुसलमान सज्जन ने क्रुद्ध होकर कहा—'फिरंगी, देखता हूँ तुम्हारी मौत सर पर नाच रही है।'

इसके उत्तर में पादरी उनकी दाढ़ी पकड़कर खींचने लगा। मुसलमान सज्जन ने उसकी चौड़ी कनपटी पर तानकर ऐसा करारा तमाचा जमाया कि स्थूलकाय तोंदैल पादरी मुँह के बल जमीन पर आ रहा।

तब उसके साथ के दोनों सैनिकों ने मुसलमान सज्जन पर आक्रमण कर दिया। पर मयूख ने तुरंत पीछे से एक ऐसी लात जमाई कि वह चार पाँच हाथ दूर जा गिरा। यह देख दूसरे सैनिक ने मुसलमान सज्जन को छोड़कर बंदूक सँभाली। रास्ते में बहुतेरे व्यक्ति इकट्ठे हो गए थे। बंदूक देखते ही वे उल्टी साँस खींचकर भाग खड़े हुए, यहाँ तक कि जिस हिंदू युवक को छुड़ाने के लिये मुसलमान सज्जन ने पादरी के साथ झगड़ा किया था, उसने भी घर में घुसकर किवाड़ बंद कर लिए।

फिरंगी ने बंदूक दाग दी किंतु मयूख पैतरा काटकर बच गए और क्षण मात्र में उन्होंने मुसलमान सज्जन को भी खींचकर सड़क के किनारे लगे पीपल के पेड़ की आड़ में कर लिया। पलक मारते ही फिरंगी सिपाही के बंदूक से छूटी गोली आकर पेड़ के तने में घुस गई। तदनंतर मयूख ने अपने कपड़े के अंदर से चाँदी की बनी एक छोटी सी पिस्तौल निकाली। मुसलमान सज्जन को उसे देखकर बड़ा विस्मय हुआ और उन्होंने जिज्ञासा की—'यह क्या चीज है?'

फिरंगी सिपाही की ओर निशाना साधते हुए मयूख बोले—'यह नए ढंग की बंदूक है; इसे पिस्तौल कहते हैं।'

उस समय तक विलायत में पिस्तौल का व्यवहार आरंभ हुए थोड़े ही दिन हुए थे और मात्र दो चार पिस्तौलें ही हिंदुस्तान में मँगाई गई थीं। पिस्तौल छूटने की आवाज के साथ ही एक सिपाही घायल होकर भूमि पर गिर पड़ा। यह देख पादरी और दूसरे सैनिक ने थोड़ी दूर पर स्थित एक अन्य पेड़ की आड़ में आश्रय लिया। मयूख झपटकर बाहर आए और घायल फिरंगी की बंदूक छीनकर फिर पेड़ की आड़ में हो रहे। किंतु इसी बीच दूसरे फिरंगी की बंदूक से निकली एक गोली उनके बाएँ हाथ में लग गई। पर इसकी चिंता किए बिना उन्होंने मुसलमान सज्जन से पूछा—'आप बंदूक चलाना जानते हैं?'

मुसलमान सज्जन हँसकर बोले—'जानता हूँ, मैं भी सैनिक हूँ।'

बंदूक लेकर उन्होंने पूछा—'गोली और बारूद कहाँ है!'

मयूख बोले—'ठहरिए, लाता हूँ।'

मयूख का दाहिना हाथ थामते हुए उन्होंने कहा—'तुम घायल हो गए हो; ठहर जाओ; अब मेरी बारी है। फिरंगी का सिर दिखाई पड़ते ही गोली मार देना। और अगर मैं काम आ जाऊँ तो फौजदार कलीमुल्ला खाँ को खबर कर देना कि जहाँगीरी अमलदारी का एक अमीर फिरंगी के हाथों मारा गया।'

इतना कहकर उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना मुसलमान सज्जन दौड़कर बाहर निकले। उन्हें देखकर जैसे ही फिरंगी ने अपना सिर बढ़ाया वैसे ही मयूख के पिस्तौल की गोली उसका टीका फोड़ती हुई भीतर घुस गई। अब उस हिंदू युवक के उद्धार की आशा छोड़ स्थूलकाय पादरी हुगली की ओर भागा।

लड़ाई समाप्त हुई देख मयूख पेड़ की आड़ से बाहर आकर मुसलमान सज्जन से बोले—'अब आप निश्चित होकर जाइए; मैं भी घर जा रहा हूँ।'

बंदूक में बारूद भरते हुए उन्होंने कहा—'तुम बहादुर आदमी हो। आज तुमने मेरी जान बचाई है दोस्त; तुम्हें यों नहीं जाने दूँगा, तुम्हें मेरे साथ किले में चलना होगा। फिरंगी की जान लेने के बाद सूबा बंगाल में तुम्हारे लिये और कहीं सुरक्षित जगह नहीं रह गई है। हाँ, यह तो बताओ कि तुम कौन हो, कहाँ से आना हुआ है?'

'कुछ विशेष कारण हैं जिनसे मैं अपना परिचय आपको अभी न दे सकूँगा। फिरंगी लोग मेरे दुश्मन हैं। ये मेरे यहाँ से एक लड़की को जबरदस्ती उठा ले आए हैं। मैं उसी को छुड़ाने की चेष्टा के लिये सातगाँव आया हूँ।

'देखो, मैं तुम्हारे पिता की उम्र का हूँ। मुझसे सच्ची बात छिपाकर तुम अच्छा नहीं कर रहे हो। तुमने मेरे लिये फिरंगी की हत्या की है। तो, अगर तुम सूबा बंगाल में रहना चाहते हो तो तुम्हें मेरे साथ रहना पड़ेगा। मैं शाही नौबारे का अमीर हूँ; मुझे असद खाँ कहते हैं।'

युवक विस्मित होकर अमीर की ओर देखते रहे। थोड़ी देर बाद बोले—'खाँ साहब, आप मेरे पिता जी के मित्र हैं। आपसे कोई बात न छिपाऊँगा। मेरा नाम मयूख है; बारबकसिंह परगने के स्वर्गीय जमीदार महाराजा देवेंद्रनारायण राय का मैं पुत्र हूँ···।'

'तुम देवेंद्रनारायण के लड़के हो! सातगाँव आए और मुझे खबर क्यों न दी? खानाजाद खाँ की अमलदारी के समय अनूपनाराण ने बारबकसिंह का बंदोबस्त अपने नाम करा लिया। उस वक्त जहाँगीरनगर में अगर तुम्हारी ओर से कोई वकील मौजूद होता तो तुम्हें अपने पिता की जमींदारी मिल जाती। आजकल तुम क्या करते हो?'

'साहब, बचपन में ही माँ नहीं रहीं; कोई भाई बहन भी नहीं है। पिता जी की मृत्यु के समय मैं केवल चौदह वर्ष का था। उस वक्त काका जी ने चुपके चुपके शाही सनद हासिल करके सारी संपत्ति पर कब्जा कर लिया। पिता जी की मृत्यु के बाद चार बरस तक शास्त्र और शस्त्रविद्या सीखता रहा। सोच रहा था, जीविका के प्रयत्न के लिये कहीं बाहर चलूँ, इसी बीच फिरंगियों के झगड़े में पड़ गया।'

ललित के अपहरण का सारा वृत्तांत आरंभ से अंत तक मयूख ने असद खाँ को बता दिया। असद खाँ को यह जानकर संतोष हुआ कि मयूख को गोकुलविहारी का आश्रय मिल गया है। उन्होंने कहा—'बहुत अच्छा किया। गोकुलविहारी जैसा पराक्रमी पुरुष सातगाँव भर में दूसरा नहीं है। लेकिन अब तुम मीनाबाजार में बिलकुल अकेले घूमने नहीं

पाओगे। मेरे साथ किले में चलो। वहाँ से तुम्हारे साथ पहरेदार करके तुम्हें भेजवा दूँगा।'

मयूख और असद खाँ किले में लौट गए। फौजदार कलीमुल्ला खाँ भोजन के बाद अफीम जमाकर पीनक ले रहे थे। असद खाँ ने मयूख को साथ लेकर फौजदार की बारहदरी में प्रवेश किया। बूढ़े फौजदार डर के मारे चौकी पर से गिरते गिरते बचे। असद खाँ पहुँचते ही बोले—'खाँ साहब, फौरन फौज की एक टुकड़ी और बड़ी बड़ी दस तोपें बंदरगाह की राह पर भेजवा दीजिए।'

वृद्ध अफीमची फौजदार ने काँपते काँपते कहा—'जो हुक्म खुदाबंद; हुआ क्या है?'

'शाहंशाह बादशाह, दीन और दुनियाँ के मालिक नूरुद्दीन जहाँगीर बादशाह के राज्य में राहचलते दिनदहाड़े फिरंगी ने मुझपर गोली चलाई है।'

बूढ़े फौजदार काँपते काँपते लुढ़क गए।

सप्तम परिच्छेद

सातगाँव का युद्ध

संध्या हो चली है। भगवान् मरीचिमाली पश्चिम की ओर जब आम और कटहल के कुंजों के पीछे छिप गए तो विशाल सातगाँव नगर के असंख्य मार्गों में सहस्रों दीप जला दिए गए। एक प्रशस्त राजमार्ग के किनारे एक दोमंजिली अट्टालिका के ऊपर बरामदे में बैठी हमारी परिचिता युवती सितार बजा रही थी। उसकी बगल में गलीचे पर बैठी फातिमा चाँदी का पानदान लिए पान लगा रही थी और नजीर अहमद संगत कर रहा था। बरामदे के एक किनारे खड़ा बुड्ढा हबीब चाँदी की चिलम में फूँक मार रहा था। पुरबी, केदारा, पूरिया और गौरी दो तीन तोड़ बज चुकी। और किसी दिन सतगाँव नगर के बीच बाजार में राजपथ पर दिन में रूपसी युवती के सितार की बोल सुनकर भीड़ लग जाती। किंतु आज सातगाँव के मार्ग में अभूतपूर्व भीड़भाड़ है। नगर में चारों ओर भयंकर कोलाहल हो रहा है। सितार का सुमधुर स्वर किसी के कानों तक पहुँच नहीं पा रहा है। कोलाहल क्रमशः बढ़ने लगा। विरक्त होकर युवती ने सितार अलग रख दिया। इसी समय जनरव को भेदता हुआ सुनाई पड़ा—'फिरंगी आ गए, फिरंगी आ गए। बाजार लूटेंगे।'

दूकानदार अपनी अपनी दूकानें बंद करने लगे। फिरंगी के आने की खबर सुनकर, युवती, फातिमा और नजीर अहमद उठकर खड़े हो गए थे। सहसा नजीर अहमद कहने लगा—'बीबी जी, गजब हो गया; मेरी अफीम चुक गई है, मुझे तुरंत एक बार बाजार जाना पड़ेगा।'

युवती का मुँह सूख गया। वह बोली—'क्या कहते हो नजीर; इस हंगामें में हमें झोंककर कहाँ जाओगे ?'

बुड्ढे ने हाथ जोड़कर अनुनयपूर्वक कहा—'दोहाई है बीबी जी, बुड्ढा आदमी हूँ; अफीम न मिली तो अभी ढेर हो जाऊँगा। दूकानें बंद हो रही हैं।'

बुड्ढा दरवाजे की ओर बढ़ा। मगर युवती ने उसे पकड़ लिया और कातर भाव से बोली—'नजीर, ऐसे वक्त हमें अकेला छोड़ चले मत जाना।'

ये बातें पीछे से आकर कहीं कान में पड़ जायँ, इस भय से नजीर ने कानों में उँगली दे ली और हाथ छुड़ाकर भागा। युवती हताश हो बैठ रही। नगर में हो हल्ला धीरे धीरे बढ़ रहा था। देखते देखते सातगाँव की हजारों दूकानों के दिए बुझ गए। कुछ देर तक युवती धीरे धीरे रोती रही, फिर बुढ़िया से बोली—'फातिमा, अब क्या होगा ? कहाँ जाऊँ, क्या करूँ ?'

फातिमा ने सिर पीटकर कहा—'खुदा को जो मंजूर होगा, वही होगा। तुमने तो कोई बात ही नहीं मानी। नहीं तो आज ही अगर सातगाँव में न ठहरकर जहाँगीरनगर चल देतीं तो क्यों ऐसी आफत में पड़तीं ?'

'तुम्हारी बात मानकर आज बजड़ा खोल देती तो अब तक हुगली बंदरगाह में गिरफ्तार कर ली गई होती।'

'हाँ, सो तो है।'

हबीब अब तक चुपचाप बैठा था। वह बोला—'बीबी जी, इस आफत में रोने धोने से क्या फायदा होगा ? मैं दरवाजा बंद करता आऊँ।'

हबीब उठकर गया और थोड़ी देर बाद एक मुरचा लगी तलवार लाकर उसपर सान धरने लगा। डबडबाई आँखें उठाकर, किंचित् मुसकुराकर युवती बोली—'हबीब, यह टूटी तलवार कहाँ मिली ?'

हबीब गंभीरतापूर्वक बोला—'बाप दादों की है। मेरे दादाजान अकबर बादशाह की फौज में सिपाही थे।'

'तलवार लेकर क्या करोगे ?'

'काफिर फिरंगियों से लड़ूँगा।'

'लड़ना जानते हो ?'

'जानूँ या न जानूँ, दो चार चोटें तो कर ही सकता हूँ।'

'वे लोग तो बंदूक लेकर लड़ेंगे ?'

'तो मरकर बिहिश्त पहुँचूँगा; मगर बीबी जी, इस बुड्ढे के दम में जबतक दम रहेगा, तुम्हारे बदन में कोई हाथ न लगाने पाएगा।'

'मैंने अपना इंतजाम कर रखा है।'

'क्या ?'

युवती ने अपनी कुरती के भीतर से चाँदी की एक छोटी सी डिबिया बाहर निकाली। हबीब ने उत्सुकतापूर्वक पूछा—'इसमें क्या है ?'

युवती ने हँसते हुए कहा—'जहर।'

फातिमा सिहर उठी।

इसी समय दूर पर बंदूक छूटने का शब्द सुनाई पड़ा। हबीब बोला—'बीबी जी, अब बरामदे में बैठने का कोई काम नहीं है, भीतर चलिए।'

तीनों व्यक्ति बरामदे से हटकर कमरे में चले आए। हबीब ने समस्त जँगले दरवाजे बंद कर दिए और फिर तलवार पर सान चढ़ाने लगा।

थोड़ी देर बाद दूर पर किसी का आर्तनाद हुआ। क्रमशः ऐसे शब्द पास आने लगे। एकाएक उसकी कोठी का दरवाजा किसी ने तोड़ डाला। युवती ने विषवाली डिबिया बाहर निकाली मगर फातिमा ने उसका हाथ पकड़ लिया। उसी समय कमरे का बंद दरवाजा तोड़कर पाँच सात फिरंगी भीतर घुस आए। हबीब अपनी टूटी तलवार लेकर उनसे युद्ध करने के लिये संनद्ध हुआ लेकिन एक फिरंगी ने संगीन मारकर तलवार तोड़ दी। दूसरे फिरंगी की बंदूक की चोट से वह बेहोश हो गया। तीसरे ने बेहोश पड़े हबीब को पैर की ठोकर मारकर किनारे कर दिया।

तदनंतर फिरंगियों ने युवती और फातिमा के हाथ पैर बाँध दिए और कुछ देर तक मनमानी लूटखसोट करते रहे। तत्पश्चात् उन्हें लेकर कोठी से बाहर हो गए। रास्ते में हजारों स्त्री पुरुष और बालक बालिकाएँ फ़िरंगियों द्वारा बंदी बनाई जाकर खड़ी थीं और उनके दोनों ओर श्रेणीबद्ध फिरंगी सैनिक बंदूक लिए पहरा दे रहे थे। फातिमा और युवती भी जाकर बंदियों के पास खड़ी हो गई। उस समय भी थोड़ी दूर पर लड़ाई हो रही थी। रह रहकर बंदूक और धनुष छूटने की आवाजें आ रही थीं। एक वृद्ध मुसलमान सज्जन युवती की बगल में खड़े थे। उन्होंने उससे पूछा—'तुम्हें बचानेवाला कोई नहीं था क्या बेटी? शरमाओ मत, मैं तुम्हारे बाप की उम्र का हूँ। विपत्ति के समय शरमाया नहीं जाता।'

युवती ने मुँह फिराकर कहा—'बाबू जी, संसार में अपना कोई नहीं नहीं है। एक बूढ़ा नौकर था। फिरंगियों ने उसे मार डाला और हमें पकड़ लाए।'

वृद्ध ने युवती के असामान्य रूपलावण्य को लक्ष्यकर कहा—'बेटी, तुम्हारी उम्र अभी बहुत थोड़ी है। बदकिस्मती से सारे हिंदुस्तान

में तुम्हारी सी सुंदर लड़कियाँ बहुत कम दिखाई पड़ती हैं। फिरंगियों के हाथों तुम्हारी बड़ी दुर्दशा होगी। तुम मुसलमान की लड़की हो; मरना सीखा है तुमने?'

युवती बोली—'सीखा है। मेरी कुरती के भीतर जहर मौजूद है, मौका न मिलने से अभी तक खा नहीं सकी।'

'मौका पाते ही खा लेना। और अगर थोड़ा बच रहे तो मेरी इस पतोहू को भी दे देना। मेरा लड़का असद खाँ के साथ लड़ने गया है। मैं बूढ़ा ठहरा, इसकी हिफाजत नहीं कर सकता।'

वृद्ध के बाद एक मुसलमान दूकानदार खड़ा था। वह बोला—'हुजूर, उसी समय कहा था फिरंगियों से लड़ाई छिड़ने के पहले ही सातगाँव से चले जाइएगा। आप यहाँ हाल ही में आए थे, इधर के हालचाल से वाकिफ नहीं हैं।

वृद्ध ने कहा—'अरे भाई, नहीं जानता था कि शाहंशाह नूरुद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह के राज में ऐसा होगा।'

'फौजदार कलीमुल्ला खाँ ठहरे बुड्ढे और अफीमची; सूबेदार मुकर्रम खाँ दूर जहाँगीरनगर में बैठे हैं, बादशाह सलामत और दूर आगरे या दिल्ली में मुकाम करते हैं। सातगाँव की सरकार नाम भर के लिये मुगल बादशाह की है। सच पूछिए तो यहाँ फिरंगी बेड़े की अमलदारी है।'

'दोस्त, हम लोग सिपाही हैं। मेरा बेटा गोलंदाज है। वह कहता था, असद खाँ के रहते बादशाही रियाया के डरने का कोई सबब नहीं।'

'असद खाँ बहादुर आदमी है, लेकिन कलीमुल्ला खाँ तो एकदम नामर्द है। उसके तमाम नौकर चाकर घूसखोर हैं।'

'भाई, आदमी पढ़कर सीखता है या ठोकर खाकर। संकट में पड़कर सातगाँव आया था, यहाँ जैसी सीख मिली उसे उम्र भर नहीं भूलूँगा। और अगर इस बूढ़ी देह को लेकर कभी शाही तख्त के पास तक पहुँच पाया तो सूबा बंगाल को फिरंगी डाकुओं से जरूर छुटकारा दिलाऊँगा।.........'

वृद्ध की बात पूरी होने के पहले ही घोड़े पर सवार एक पुर्तगाली सेनापति आया और उसने एक पुर्तगाली सिपाही से पूछा—'तुम्हारा नायक कहाँ है?'

फिरंगी सिपाही दौड़ता हुआ गया और नायक को बुला लाया। सेनापति ने उससे कहा—'समस्त बंदियों को छोड़ दो।'

नायक ने विस्मित होकर पूछा—'क्यों? पादरी अलवरेज ने तो तमाम मूर्तिपूजकों को पकड़ ले जाने के लिये कहा है?'

'इन पादरियों के ही कारण तो पुर्तगाली साम्राज्य रसातल को जाना चाहता है। ऐडमिरल डि सूजा की आज्ञा है, बंदियों को छोड़ दो। सामने से गोकुलविहारी ने और पीछे से असद खाँ ने हमला कर दिया है। गोकुलविहारी के एक सेनापति ने हमारी सारी तोपों पर कब्जा कर लिया है। अब जितनी भी सेना है सबको सामने की ओर आगे बढ़ाओ।'

नायक की आज्ञा से बंदी छोड़ दिए गए। सातगाँव के निवासी—आबालवृद्धवनिता—पुर्तगाली नौसेनाध्यक्ष डि सूजा को आशीर्वाद देते हुए जिधर रास्ता मिला उधर ही भाग चले। फिरंगी सेना भी पंक्तिबद्ध हो आगे बढ़ गई। वृद्ध मुसलमान अमीर, उसकी पुत्रवधू, फातिमा और युवती खड़ी रहीं। वृद्ध ने पूछा—'बेटी, अब कहाँ जाओगी?'

युवती बोली—'पास में ही मकान है, वहीं चलूँगी।'

वहाँ तुम्हारे कौन कौन लोग हैं?'

'कोई नहीं। वह बूढ़ा नौकर मरा न होगा तो वही होगा।'

'चलो, उसे देखता आऊँ।'

वृद्ध ने औरतों को साथ लेकर युवती के मकान में प्रवेश किया। हबीब संज्ञाशून्य हो गया था। फातिमा और युवती की सुश्रूषा से उसकी चेतना लौटी। तब वृद्ध ने कहा—'बेटा, आज रात में यह शहर खतरे से खाली नहीं रहेगा; चलो, सातगाँव को छोड़ कहीं और चलें।'

युवती बोली—'त्रिवेणी घाट पर मेरा बजड़ा है।'

वृद्ध बोले - 'तो चलो, त्रिवेणी ही चलें।'

घर से निकलकर तीनों व्यक्ति पूरब की ओर आगे बढ़े। कुछ दूर चलने पर वृद्ध एक विस्तृत राजमार्ग पर आ गए। रास्ते में चारों ओर लाशों का अंबार लगा हुआ था। तोपों के गोलों से जिधर देखिए उधर आग लग गई थी। वृद्ध व्यक्ति वहीं खड़े खड़े रास्ता तजबीज रहे थे। युवती अकस्मात् चीख मारकर एक हिंदू सैनिक की देह पर गिर पड़ी। वृद्ध व्यक्ति ने आश्चर्य से पूछा—'बेटी, यह कौन है?'

युवती ने भरे गले से कहा—'मेरे पति।'

फातिमा विस्मित हो युवती का मुँह देखने लगी। युवती ने उससे कहा—'मेरे पति अप्रसन्न होकर मेरा त्याग कर आए हैं।'

वृद्ध ने पुनः कहा—'बेटी, तुमने तो कहा था कि मेरी हिफाजत करनेवाला कोई नहीं।'

युवती ने मयूख के चेहरे के पास अपना चेहरा सटाए हुए बिना किसी संकोच के कहा—'मैं जानती नहीं थी कि ये अभी सातगाँव में ही हैं।'

वृद्ध ने परीक्षा करके देख लिया कि युवक के प्राण अब तक निकले नहीं हैं। वे और हबीब घायल युवक को उठाकर त्रिवेणी की ओर चले गए।

अष्टम परिच्छेद

बवंडर

जहाँगीरनगर के किले में नदी की ओरवाले एक कमरे में बैठे हुए बंगाल के सूबेदार मुकर्रमखाँ आराम कर रहे थे। भयंकर गरमी पड़ रही थी। एक बाँदी नवाब के पैर दाब रही थी और अन्य दो बाँदियाँ मोरछल डुलाकर हवा कर रही थीं; चौथी बाँदी शीतल जल लिए कमरे के कोने में खड़ी थी। इसी समय एक खोजा ने कमरे के दरवाजे पर खड़े होकर नवाब का अभिवादन किया। नवाब को नींद आ रही थी। उन्होंने विरक्तिपूर्वक आलस्यपूर्ण स्वर से जिज्ञासा की—'क्या चाहते हो?'

खोजा ने पुनः अभिवादन किया और बोला—'बंदानवाज, दीवान हरेकृष्ण सदर में इंतजार कर रहे हैं।'

'हरेकृष्ण बेवक्त क्यों आया?'

'बंदे ने उनसे कहा था कि हुजूर इस वक्त ख्वाबगाह में हैं, लेकिन दीवान साहब ने कहा कि बादशाह के दरबार से जरूरी पंजा लेकर एक सवार आया है।

नवाब विरक्तिपूर्वक बोले—'हरेकृष्ण से दीवानखाने में बैठने को कहो; मैं आ रहा हूँ।'

खोजा पुनः अभिवादन करके चला गया।

सदर खालसा के दीवान हरेकृष्ण राय वंगदेशीय कायस्थ थे। उनका डील डौल भयंकर और रंग गहरा काला था। अपने बुद्धिबल के कारण साधारण अवस्था से उन्नति करते करते उन्होंने यह उच्च पद प्राप्त किया था। उन दिनों सामान्य कुलोत्पन्न हिंदू व्यक्ति के लिये इससे अधिक उच्च राजपद प्राप्त करना प्रायः असंभव था। शाही सवार तब तक दीवानखाने में प्रतीक्षा कर रहा था, इसी कारण दीवान हरेकृष्ण अधीर भाव से इधर उधर टहल रहे थे। बादशाह का पत्र और फरमान सूबेदार के अतिरिक्त और कोई लेने का अधिकारी नहीं था। अचानक उन्हें सामने मनुष्य की परछाईं दिखाई पड़ी। दीवान साहब सहमकर दो डग पीछे हट गए। उसी समय दीवानखाने के एक खंभे के पीछे से आवाज आई—'डरो मत, हरेकृष्ण!'

दीवान साहब ने आँखें उठाकर देखा कि गेरुआ वस्त्र धारण किए एक दीर्घाकार संन्यासी खंभे की बगल में खड़े हैं। हरेकृष्ण ने घबड़ाहट में ही साष्टांग प्रणाम किया और जिज्ञासा की—'प्रभो, सब कुशल है न?'

'कुशल मंगल फिर पूछना; मैं विशेष प्रयोजन से ढाका आया हूँ। तुम सूबेदार से मेरा परिचय करा दो।'

'क्या परिचय दूँ? आपका वास्तविक परिचय?'

'नहीं। कह देना, मेरे गुरुजी हैं।'

'मेरे गुरु तो आप हैं ही, इसमें झूठ क्या है? शुमार और खजाने के कार्यों...।'

'उन सब बातों को जाने दो। मेरे एक मित्र की कन्या को फिरंगी बेड़ेवाले पकड़कर हुगली ले गए हैं। तुम सूबेदार से आग्रह करके उसे छुड़ाने की व्यवस्था करा दो।'

'बड़ा कठिन काम है, प्रभो !'

'मैं जानता हूँ।'

'फिरंगी लोग सूबेदार के बड़े प्रिय पात्र हैं।'

'यह भी जानता हूँ।'

'फिर कौन सा उपाय करूँ, प्रभो ?'

'नवाब से कह दो कि मेरी प्रार्थना अगर स्वीकृत नहीं हुई तो महीने भर के भीतर यह बात बादशाह के कानों तक पहुँच जायगी।'

'यह कैसी बात ? कौन ऐसा करेगा ?'

'नूरजहाँ बेगम या आसफ खाँ।'

'आपके लिये यह असाध्य नहीं है, प्रभो !'

'हरेकृष्ण, मेरा एक और अनुरोध है।'

'आज्ञा, प्रभो ?'

'आज नवाब के बजड़े पर मत जाना; जाओगे तो विपत्ति में पड़ोगे।'

'जो आज्ञा।'

इसी समय फाटक पर नौबत बजने लगी। दीवानखाने के दरवाजे पर खड़े होकर नकीब ने पुकार लगाई। आसासोटा और माहीमरातिब लिए अनेक हरकारे और सिपाही दीवानखाने में आ गए। तदनंतर सूबा बंगाल के सूबेदार नवाब मुकर्रम खाँ का पदार्पण हुआ। दीवान हरेकृष्ण राय ने नवाब की कोर्निश की और शाही दरबार के सवार को वहीं बुला लिया। सवार अभिवादन करके खड़ा रहा। नवाब ने तीन कदम आगे बढ़कर तीन बार कोर्निश की। एक हरकारे ने चाँदी का एक पात्र लाकर नवाब को दिया और कोर्निश करके चला गया। नवाब ने चाँदी के पात्र सहित बादशाह का पत्र दीवान को देकर कहा—'हरेकृष्ण, बजड़े पर ही ले जाओ, किले में बड़ी गरमी है।'

बजड़े का नाम सुनते ही दीवान का कलेजा काँपने लगा। हरेकृष्ण डगमगाते पैरों आगे बढ़कर बोले—'हुजूर !'

नवाब ने विरक्तिपूर्वक पूछा—'क्या बात है ?'

'मेरे गुरुदेव बड़ी विपत्ति में फँसकर जहाँगीरनगर आए हुए हैं। हुक्म हो तो उन्हें हुजूर के रूबरू पेश करूँ।'

'तुम्हारे गुरु क्या चाहते हैं ?'

'हुजूर के रूबरू वे खुद अपनी अर्जी पेश करेंगे।'

'वे हैं कहाँ ?'

'यहीं हैं।'

'लिवा लाओ।'

तदनंदर खंभे की आड़ से बाहर आकर संन्यासी बोले—'भगवान् आपका मंगल करें।'

नवाब ने दीवान से पूछा—'तुम्हारे गुरु क्या फकीर हैं ?'

हरेकृष्ण ने सलाम करते हुए कहा—'हुजूर।'

'दीवाने फकीर की सूबेदार से भला क्या अर्ज होगी ?'

संन्यासी ने आगे बढ़कर कहा—'मेरी प्रार्थना आपके ही संबंध में है।'

नवाब ने चकित होकर कहा—'मेरे संबंध में ? तुम पागल तो नहीं हो गए हो ?'

'पागल हुए बिना कहीं घर गृहस्थी का त्याग किया जा सकता है ? मेरी प्रार्थना सचमुच आप ही के संबंध में है।'

हरेकृष्ण बोले—'हुजूर, ये त्रिकालदर्शी महात्मा हैं। ये जो बातें कहने आए हैं उन्हें सुन लिया जाय।'

नवाब बोले—'बताओ फकीर, क्या कहना चाहते हो ?'

'आज आप नाव पर मत चढ़ें।'

'क्यों ? मैं तो अभी बजड़े पर जा रहा हूँ।'

'आज नाव की सवारी करने पर आप विपत्ति में पड़ जायँगे।'

'यह फकीर तो सचमुच पागल है। तुम क्या इतनी सी बात बताने जहाँगीर नगर आए हो?'

'मेरी और एक अर्ज है। मेरे एक मित्र की कन्या को पकड़कर फिरंगी लोग मकसूसाबाद से सातगाँव ले आए हैं। बादशाह उस पाक परवरदिगार की साया ठहरे, और आप हैं उनके नुमाइंदे। आपकी मिहरबानी हुए बिना उस गरीब लकड़ी का बचना नामुमकिन है।'

'फकीर, फिरंगी लोग लड़ने में बड़े बहादुर हैं। वे शाहंशाह बादशाह के ही हुक्म की तामील हमेशा नहीं करते, मेरी बात भला वे मानेंगे?'

'जरूर मानेंगे।'

हरेकृष्ण—'जनाब आली हिंदुस्तान के रुस्तम हैं, बादशाही दरबार के आफताब और माह। सूबा बंगाल में ऐसा कौन बेवकूफ है जो हुजूर की हुक्मउदूली करेगा? जनाब के मुँह से बात निकलने की देर है, सातगाँव और चटगाँव के तमाम फिरंगी उसकी तामील करेंगे।'

नवाब—'हरेकृष्ण, तुम्हारी खातिर फकीर की दरख्वास्त मंजूर करता हूँ। लेकिन उस लड़की को फिरंगियों के यहाँ से खरीदकर वापस लाना होगा।'

संन्यासी—'यदि वे बेचना न चाहें, तो?'

नवाब—'तब कलीमुल्ला खाँ को हुक्म दूँगा, वे तुम्हारे मित्र की लड़की को छीन लाएगा।

संन्यासी—'रुपए पैसे के लालच से या नवाब की खातिर पुर्तगाली सेनापति ने अगर लड़की को छोड़ना चाहा भी तो पादरी लोग उसे नहीं छोड़ेंगे।'

नवाब—'तुमने उस लड़की को खरीदने की कोशिश की थी?'

संन्यासी—'इस लड़की को खरीदने की चेष्टा तो नहीं की, लेकिन पहले दो एक बार करके यही जवाब पा चुका हूँ।'

नवाब—'मेरे कहने से एक बार और कोशिश कर देखो।'

इतना कहकर नवाब चलने का उपक्रम करने लगे। इसे देख हरेकृष्ण ने बड़े विनयपूर्वक कहा—'हुजूर, मेरी तबीयत ठीक नहीं है। हुक्म हो तो नायब दीवान को भेज दूँ।'

'काफिर की बातों से डर गए, हरेकृष्ण !'

'बिलकुल नहीं हुजूर; मैं सचमुच पिछले तीन दिनों से बीमार हूँ।'

'अच्छी बात है; मुहम्मद अमीन खाँ को ही भेज दो।'

हरेकृष्ण की जान में जान आई। लंबी साँस छोड़ वे चुप हो रहे।

नवाब जब महल के भीतर चले गए तब संन्यासी ने हरेकृष्ण से कहा—'साक्षात् यमराज उपस्थित हैं। मुकर्रम खाँ जैसा सामान्य व्यक्ति कर ही क्या सकता है ?'

हरेकृष्ण ने पूछा—'क्या बात है ?'

'मुकर्रम खाँ मरने जा रहा है।'

'कैसे ?'

'बाहर चलकर देख लो।'

दोनों व्यक्ति दीवानखाने से बाहर निकलकर खड़े रहे। दूर पर बूड़ीगंगा[1] के विस्तीर्ण वक्ष पर सूबेदार का प्रशस्त बजड़ा लंगर डाले खड़ा था। धीरे धीरे बजड़ा आकर किले के घाट पर लग गया। थोड़ी देर में

---

१. समुद्र में गिरने के पूर्व गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियाँ छोटी बड़ी अनेक शाखाओं में बँट गई हैं, जैसे हुगली, भागीरथी, पद्मा, यमुना, आदि। जिस शाखा पर ढाका (जहाँगीरनगर) बसा है उसे बूड़ीगंगा कहते हैं।—अनु०।

सूबेदार और अन्य विशिष्ट राजकर्मचारी जब बजड़े पर चढ़ गए, बजड़ा चलने लगा और उसे देखकर संन्यासी ने कहा—'हरेकृष्ण, मुकर्रम खाँ तो गया; असद खाँ कहाँ है ?'

विस्मयपूर्वक हरेकृष्ण ने पूछा—'क्यों, प्रभो ?'

'सूबेदारी अब असद खाँ को ही मिलेगी।'

सहसा उभयतटवर्ती विस्तृत बालुकाक्षेत्र मानों विक्षुब्ध हो उठा। उसके साथ ही साथ अब तक प्रशांत पड़े नदीवक्ष ने भी अत्यंत विकराल रूप धारण कर लिया। शुभ्र नीलाकाश को चारों ओर से आ आकर मेघमालाओं ने आच्छन्न कर लिया और वायु प्रचंड वेग से बहने लगी। वात्याचक्र में पड़कर सूबेदार की नाव वेगपूर्वक नाचने लगी। यह कांड देख किले के भीतर हाहाकार मच गया। वर्षा भी होने लगी। पर्वताकार तरंगमालाएँ आ आकर दुर्गप्राचीर को थपेड़े लगाने लगीं। अकस्मात् नवाब का बजड़ा लुप्त हो गया। संन्यासी ने हँसकर कहा—'देखा तुमने हरेकृष्ण ?'

दीवान ने खिन्न मन से उत्तर दिया—'देखा, प्रभो ! अब मेरे लिये क्या व्यवस्था होगी ?'

'तुम्हें कोई डर नहीं, तुम दीवान बने रहोगे।'

'प्रभो ! भवितव्य जब आपके समक्ष प्रत्यक्ष है, तब आपने आत्मरक्षा का कोई उपाय क्यों नहीं किया ?'

'विधि का विधान अखंडनीय होता है, हरेकृष्ण ! असद खाँ कहाँ है ?'

'शायद सातगाँव में ही है।'

'तो मैं चला; उसी के साथ लौटूँगा।'

इतना कहकर संन्यासी अंधकार में अदृश्य हो गए।

नवम परिच्छेद

बाबा चैतन्यदास

घोर कृष्णवर्ण, विकटाकृति, लंबोदर एवं मुंडितमुंड एक बैरागी सरस्वती और गंगा के संगम पर उसी इमली के पेड़ के नीचे बैठा दनादन सुँघनी सूँघ रहा था। उसकी बगल में कृष्णवर्ण, कृशकाय एवं लंबाकृति एक युवक खड़ा था। उस घाट पर जितनी नावें आईं उनमें से प्रत्येक के माँझी मल्लाह से बैरागी ने हुगली चलने का आग्रह किया, लेकिन कोई भी राजी नहीं हुआ। जो नावें घाट पर रह गईं उनके माँझियों ने कहा—'बाबा जी, हमलोगों ने तो पहले ही बता दिया कि सातगाँव की कोई नाव आज हुगली की ओर जाने की हिम्मत नहीं करेगी।'

बैरागी ने दीनतापूर्वक पूछा—'क्यों बच्चा! हुगली में हमलोगों का बड़ा जरूरी काम है?'

एक बूढ़े मल्लाह ने कहा—'आठ आने पैसे के लिये कौन अपनी जान गँवाने जायगा? कल रात सातगाँव में फिरंगियों के साथ फौजदारी के सिपाहियों की गहरी झड़प हो गई। फिरंगी परास्त होकर भाग गए इसलिये उनका क्रोध और बढ़ा हुआ है। अब सातगाँव के किसी आदमी को अगर वे पकड़ पाएँगे तो फाँसी दे देंगे।'

उसकी बात सुनकर बैरागी को कोई उत्तर नहीं सूझ पड़ा, वह घोंघे की नासदानी में से ढेर की ढेर सुँघनी ले लेकर सूँघने लगा। कुछ देर बाद एक दीर्घाकार, श्यामवर्ण ब्राह्मण उसी इमली के पेड़ के नीचे आकर खड़ा हो गया। उसे इधर उधर चकपकाते देख बैरागी को थोड़ा ढाढ़स हुआ। वह उठकर खड़ा हो गया; ब्राह्मण से उसने पूछा—'पंडित जी, प्रणाम। आपको कहीं जाना है क्या?'

ब्राह्मण विरक्तिपूर्वक बैरागी को ऊपर से नीचे तक कुछ देर पर्यंत देखता रहा, तदनंतर बोला—'कहाँ जाऊँ महाराज, इसे स्थिर नहीं कर पा रहा हूँ। तुम्हें कहीं जाना है क्या?'

'भगवान् की जैसी मरजी महाराज, हुगली जाना चाहता था मगर नाव नहीं मिल रही है। राधेकृष्ण, राधेकृष्ण! सातगाँव में हाल ही आना हुआ है क्या?'

'क्यों, ऐसा कैसे समझा?'

'चाल ढाल देखकर कह रहा हूँ। शहरी लोगों की चाल ढाल ही दूसरी तरह की होती है। मैं देहात का ही रहनेवाला हूँ।'

'अच्छा। कहाँ के रहनेवाले हो?'

'कटवा के पास उधारनपुर में रहता हूँ। आप कहाँ रहते हैं?'

'मकसूसाबाद के पास भीमेश्वर में।'

बैरागी बिलकुल बेहया था। ब्राह्मण देवता को कहाँ जाना है, यह जाने बिना उसे चैन नहीं पड़ती थी। उसने पुनः कहा—'तो शायद पंडित जी, सातगाँव जाना होगा?'

उसी समय उधर से होकर एक पियक्कड़ व्यक्ति झूमता झामता निकला। बैरागी की बात सुनकर वह बोला—'बाबाजी, ऐसा काम कभी मत करना, तुम्हारे जैसा नरम बकरा पाकर फिरंगियों का मन नहीं मानेगा, गिरजाघर में ले जाकर जरूर बलि चढ़ा देंगे।'

बलिदान की बात सुनते ही बाबाजी थू थू करके कहने लगे—'राधे गोविंद, राधे गोविंद; यह पाजी तो बड़ा बेहया है।'

पियक्कड़ वहीं खड़ा खड़ा झूमने लगा। बोला—'झूठ नहीं कहता बाबा जी; तुम्हारी तोंद में काफी गोश्त है, बड़ा बढ़िया कबाब होगा।'

बैरागी फिर थू थू करने लगा। ब्राह्मण क्रुद्ध हुआ और रोषपूर्ण नेत्रों से शराबी की ओर देखने लगा। पर उसने बिना लज्जा संकोच के कहा—'नाराज क्यों होते हैं पंडित जी, कबाब बड़ा जायकेदार होता है।'

ब्राह्मण ने कहा—'जायकेदार होता है तो तुम जाकर खाओ।'

'इस बकरे को छोड़कर कैसे जाऊँ?'

'तुम तो जी जलाने लगे, चलो भागो यहाँ से।'

बैरागी बोला—'पंडित जी, चलिए यहाँ से हट चलें। सातगाँव तो बड़ी वाहियात जगह है। यह बदमाश अभी उल्टी कर देगा।'

बैरागी की बात सुनकर शराबी को गुस्सा चढ़ आया। उसने बाबा की लंबी चुटिया पकड़ ली और कहा—'पाजी, नंगा कहीं का, हमें बदमाश कहता है! तेरी इतनी हिमाकत! चल, तुझे सिद्धेश्वरी के मंदिर में ले जाकर बलि चढ़ाता हूँ।'

मारे दर्द के बैरागी चिल्लाने लगा। लेकिन फिर भी सिद्धेश्वरी और बलि शब्द सुनकर थू थू करने से नहीं चूका। बैरागी वैष्णव की चुटिया कहीं उखड़ न जाय, इस कारण लोगों ने मिलकर उसे शराबी के हाथ से छुड़ा दिया। झूमता झामता वह शराबी एक ओर चला गया। तब सिर को हाथ से सहलाते सहलाते बैरागी ने कहा—'पंडित जी, बात ठीक है क्या?'

ब्राह्मण बोले—'कौन सी बात।'

'उस पाजी ने जो कहा।'

'फिर गाली देने लगे? अभी मर रहे थे।'

'वह सुनता तो नहीं है न?'

' न सुने, व्यर्थ गाली देने से फायदा?'

'अच्छी बात है, नहीं दूँगा। पंडित जी, वह बात ठीक है क्या?'

'कौन बात?'

'वही, जो वह कहता था।'

'उसने तो बहुत सी बातें कही थीं, तुम किस बात के बारे में पूछते हो?'

'यही कि गिरजाघर में जाकर...'

'गिरजाघर में जाकर क्या?'

'पंडित जी, वह बात भला मुँह से कैसे कहूँ?' थू थू।'

'तो मैं कैसे समझूँगा?'

'यही कि गिरजे में जाकर, वही बात जो आप लोग देवी के सामने करते हैं?'

'ओ! बलि की बात कहते हो?'

बैरागी पुनः थू थू करने लगा। ब्राह्मण भी अब बड़ा नाराज हुआ और बोला—'पाखंडी कहीं का, तू महामाया का नाम सुनकर थू थू करता है, नरक में भी तेरा ठिकाना नहीं लगेगा।'

बैरागी बड़ी विपत्ति में पड़ा। सातगाँव जाना उसके लिये बड़ा आवश्यक था मगर गिरजाघर में नरबलि की बात सुनकर वह बहुत डर गया था। अकेले सातगाँव जाने की अब उसमें हिम्मत नहीं रह गई थी। ब्राह्मण को अत्यंत क्रोध में देखकर उसने हाथ जोड़कर कहा—'पंडित जी, मेरा अपराध क्षमा कीजिए।'

ब्राह्मण ने मुँह फेर लिया। तब बैरागी पुनः बोला—'पंडित जी, क्या करूँ? गुरु जी की आज्ञा है।'

'तुम्हारे गुरु जी ने क्या तुम्हें महामाया के नाम पर थूकने की आज्ञा दी है?'

'नहीं, नहीं। यह तो चलन की बात है।'

'ऐसी चलन सब लोग क्यों बर्दाश्त करेंगे?'

'गलती हो गई, पंडित जी।'

ब्राह्मण का क्रोध अधिक देर नहीं टिकता। उन्होंने प्रसन्न होकर कहा—'तुम पागल हुए हो बाबा जी, क्रिस्तान लोग कहीं नरबलि देते हैं!'

बलि के नाम पर बैरागी फिर थूकने जा रहा था पर बड़े आयास से उसने अपने को रोक लिया। इसी समय सात आठ लठैतों ने आकर ब्राह्मण को प्रणाम किया। उनमें से एक ज्येष्ठ व्यक्ति ने कहा—'पंडित जी, कोई खबर नहीं लगी। शहर का कोना कोना छान डाला। जितने आदमी मरे या घायल हुए हैं उन सबको देख लिया गया, मगर महाराज कहीं नहीं दिखाई पड़े।'

समाचार पाकर ब्राह्मण चिंतित हुए; बोले—'वही तो भुवन, मैंने सोचा था, इस बार पता लग जायगा। नाव कहाँ है?'

'पास ही है, बादशाही पुल के नीचे।'

'तुम लोगों ने खा पी लिया है?'

उस समय दिन का दो पहर बीत चुका था, मगर ब्राह्मण ने स्नान और भोजन तब तक नहीं किया था। भुवन उनका चेहरा देखकर यह समझ गया और बोला—'खाता कहाँ पंडित जी, सबेरे से ही तो चक्कर लगा रहा हूँ। चलिए नाव पर लौट चला जाय।'

नाव की बात सुनकर बैरागी ने आग्रहपूर्वक पूछा—'आपकी ही नाव है क्या पंडित जी? तब तो हुगली तक जाया जा सकता है?'

ब्राह्मण ने हँसकर कहा—'जाया क्यों नहीं जा सकता बाबा जी ! चलो हमारे साथ, हम लोग शाम को हुगली चलेंगे।'

बाबाजी ने मगन होकर कहा—'नारायण, नारायण ! पंडित जी, हुगली में मेरा शिष्य है, वहाँ चरणों की धूल देनी होगी।'

ब्राह्मण ने पूछा—'तुम्हारा शिष्य किस जाति का है ?'

'जुलाहा है।'

'भगवान् आपका भला करे बाबा जी, मैं शूद्र के घर का अन्न कैसे ग्रहण कर सकता हूँ ?'

'फलाहार कीजिएगा। बढ़िया चिउड़ा, यथेष्ट दूध, घर का दही, मर्तबान का केला और नारियल।'

कहते कहते बैरागी के मुँह में पानी आ गया और लार चू पड़ी। उसे देखकर ब्राह्मण की हँसी नहीं रुकी। वे ठठाकर हँस पड़े। बैरागी का शिष्य पास ही आ गया था। उसे भी ढेर का ढेर लार टपकाते देखकर ब्राह्मण ने कहा—'हम लोग शूद्रों के यहाँ फलाहार भी नहीं करते। तुम लोगों ने शायद अभी भोजन नहीं किया है ?'

'जी नहीं।'

'अच्छा, तो आज तुम लोग हमारे अतिथि हुए।'

'पंडित जी, प्रसाद अनाज का होगा या फलाहार ?'

'इस समय तो अन्न का बना प्रसाद मिलेगा, फलाहार उस समय करना। भुवन, जान पड़ता है महाराज को फिरंगियों ने पकड़कर बंदी बना लिया है। भोजनादि के बाद हम लोग नाव लेकर हुगली जायँगे। तुम नाव में ही भोजन बनाने की तैयारी करो।'

'जो आज्ञा।'

सब लोग भुवन की नाव पर सवार हो गए।

दशम परिच्छेद

गंगागर्भ में

उसी दिन अपराह्लकाल में त्रिवेणी के मुकुंददेव घाट के पास एक बहुत बड़े बजड़े पर से संगीत के सुमधुर स्वर उठ रहे थे। बीच बीच में संगीत के बदले सितार की मीठी आवाज आ रही थी। तट पर गाना बजाना सुनने के लिये लोगों की भीड़ जमा हो गई थी। बजड़े पर एक बड़े से कमरे में गलीचे पर बैठी एक युवती सितार बजा रही थी। उसके पास बैठी एक अन्य युवती गाना गा रही थी। कमरे के एक किनारे हाथी दाँत की बनी एक छोटी सी चारपाई पर एक गौरवर्ण युवक सोया हुआ था। युवक अचेत था, उसके सारे शरीर पर घाव लगे थे। जहाँ जहाँ घाव थे वहाँ बड़ी बड़ी पट्टियाँ बँधी थीं जो स्थान स्थान पर खून से तर हो गई थीं। थोड़ी देर में युवक ने अस्फुट स्वर से कुछ कहा, जिसे सुनते ही युवती ने सितार रख दिया और चारपाई के पास जाकर खड़ी हो गई।

युवक ने आँखें खोलीं और युवती को देखकर बोला—'कौन, ललिता ! कब आई ?'

युवती चारपाई के किनारे बैठ गई और दोनों हाथों से युवक का दाहिना हाथ पकड़ती हुई बोली—'क्या कह रहे हो ! मुझे पहचान नहीं रहे हो, क्या ?'

युवक के होठों पर हँसी की क्षीण रेखा दिखाई पड़ी; वह बोला—'नहीं क्यों पहचानूँगा ?'

'अच्छा बताओ, मैं कौन हूँ ?'

'तुम ललिता हो ।'

'कौन ललिता ? मैं हूँ गुलरुख ।'

'गलत बात है । तुम ललिता हो । यह भीमेश्वर है । तुम कब आईं ललिता ? मैं सो गया था ।'

'तुम क्या कह रहे हो ? यह सातगाँव है । सरस्वती और गंगा के मुहाने पर हमारा बजड़ा खड़ा है । मैं गुलरुख हूँ । अब तक तुम मुझे पहचान नहीं पाए ।'

'पहचाना । ललिता, तुमने शायद एक नया मुसलमानी नाम सीख लिया है ।'

'ज्यादा बोलो मत । अभी तक तुम्हें होश नहीं आया है ।'

'ललिते, अब यह कैसी छलना हो रही है ? कहा था न कि शाम को गोपाल जी के मंदिर में आरती देखने जाऊँगा । चलो चला जाय ।'

युवक चारपाई पर से उठने की चेष्टा करने लगा जिसे देख युवती ने उसे बलपूर्वक दाब रखा और बोली—'उठना मत, नहीं तो घावों में से तुरंत खून जाने लगेगा ।'

युवक ने मुँह विकृत करते हुए कहा—'बड़ी पीड़ा है । उठ नहीं पाया । मुझे क्या हो गया था, ललिता ।'

'यह ललिता कौन है ?'

'तुम ललिता नहीं हो क्या ?'

'मैं गुलरुख हूँ न; प्राणनाथ ! तुम मुझे पहचान क्यों नही रहे हो ?'

'पहचानूँगा क्यों नहीं, तुम अवश्य ललिता हो ।'

'तो मैं ललिता ही हूँ ।'

'अब तक शरारत क्यों हो रही थी ? ललिता, मेरे सारे शरीर में पीड़ा क्यों हो रही है ?'

'तुम लड़ाई में घायल जो हो गए हो ।'

'लड़ाई ? कहाँ की लड़ाई ?

'क्यों ? सातगाँव की लड़ाई में ?'

'सातगाँव ? क्या मैं भीमेश्वर में नहीं हूँ ? तो वह स्वप्न शायद सच्चा था ?'

इसी समय कमरे के दरवाजे का परदा हटा। विगत रात्रिवाले वृद्ध दरवाजे पर खड़े खड़े बोले—'हकीम साहब आए हैं, बेटी !'

युवती चरपाई पर से उठकर बोली—'हकीम साहब को लिवा लाइए, मैं कमरे में ही रहूँगी ।'

वृद्ध हकीम को लिवाकर कमरे में आ गए। रोगी की परीक्षा कर चुकने पर हकीम ने कहा—'चोटें संगीन हैं, पर उम्र नौजवानी की है, इसलिये शायद अच्छे हो जायँगे। ये कहाँ जख्मी हुए थे ?'

वृद्ध बोले—'कल रातवाली लड़ाई में ।'

'ये शाही फौज के हैं ?'

'हाँ ।'

'सुनता हूँ, गोकुलविहारी के किसी सेनानायक ने कल बड़ा गहरा युद्ध किया। असद खाँ कहते थे कि उन्हीं की वजह से सातगाँव बचा रह गया ।'

'वह काफिर थे या मुसलमान ?'

'वह नौजवान काफिर था। बदकिस्मत बेचारा या तो मर गया, या पकड़ लिया गया ।'

'फिरंगी के हाथ पकड़े जाने से तो मौत हो जाना सौ गुना अच्छा है।'

'खुदा मालिक है। नूरुद्दीन जहाँगीर बादशाह के राज्य में यह अत्याचार सहा नहीं जाता। एक मलहम भेज दूँगा। उसे कटी हुई जगहों पर लगा दीजिएगा। दो तरह की दवाएँ होंगी जो दोनों वक्त दी जायँगी।'

'रोगी घबड़ाता बहुत है। छटपटाहट बढ़ जाने पर घावों में से खून जाने लगता है।'

'ज़ाफरानी रंग का एक सफूफ भी भेज दूँगा; घबड़ाहट बढ़े तो उसे शरबत में मिलाकर पिला दीजिएगा।'

हकीम साहब चले गए। वृद्ध ने लौटकर आने पर युवती के हाथ में एक डिबिया दी और बोले—'बेटी, घबड़ाहट ज्यादा बढ़ने पर इस दवा की एक खूराक शरबत में मिलाकर खिला देना।'

इतना कहकर वृद्ध कमरे से बाहर चले गए। युवक अब तक चुपचाप पड़ा था। अब उसने युवती को पुकारकर कहा–'ललिता, वैद्य जी ने दाढ़ी कब बढ़ा ली? व्रजनाथ सेन तो वैष्णव हैं न, वे मूँछ, दाढ़ी, बाल सब बनवा डालते थे?'

'ये वैद्य क्यों होगे लगे? ये तो सातगाँव के मशहूर हकीम अशरफ अली खाँ थे।'

युवक हँस पड़ा, बोला—'तुम सातगाँव का सपना तो नहीं देख रही हो?'

'सपना क्यों, यह सचमुच सातगाँव ही है?'

युवक विरक्तिपूर्वक बोला—'ललिता, या तो तुम्हारा दिमाग फिर गया है, या मेरा। यह सातगाँव नहीं भीमेश्वर है, तुम हो ललिता और

मैं हूँ मयूख। संध्या हो गई है। चलो तुम्हें घर पहुँचा आऊँ। राधिका बहन कहाँ चली गईं ?'

युवक पुनः बिस्तर पर से उठने की चेष्टा करने लगा। युवती ने उसे अपनी बाहों में भरकर बड़े परिश्रम से सँभाला। फातिमा तुरंत हकीम की दी हुई दवा शरबत में मिलाकर ले आई। युवती के हाथ से युवक ने दवा पी ली और तुरंत सो गया।

युवती धीरे धीरे चारपाई पर से उठकर बगल के कमरे में चली गई। वहाँ वृद्ध सज्जन स्वच्छ बिस्तर पर बैठे पत्र लिख रहे थे। युवती को देखकर उन्होंने पूछा—'क्या हुआ बेटी ?'

युवती ने कहा—'कुछ नहीं। आप चिठ्ठी किसे लिख रहे हैं ?'

'असद खाँ को। लड़के को लिवाकर दिल्ली जायगा। फौजदार कलीमुल्ला खाँ भाग गया है। असद खाँ से पूछकर लड़के के साथ दिल्ली जाना है। इसलिये आज रात को बजड़े पर जाने के लिये असद खाँ को लिख रहा हूँ।'

वृद्ध की बातें सुनकर युवती आशंकित हुई। उसने सोचा कि जब युवक सैनिक है तब वह अवश्य असद खाँ से परिचित होगा। असद खाँ के आते ही वृद्ध को सारी बातें साफ साफ मालूम हो जायँगी। अतः गुलरुख बोली—'अब्बा जान, आज असद खाँ को चिट्ठी लिखने की जरूरत नहीं है। वे साफ हवा के लिये घबड़ा रहे हैं। चलिए बजड़े पर थोड़ी दूर घूम आया जाय।'

'चलो।'

मल्लाहों ने बजड़ा खोल दिया। वह दक्षिण की ओर बढ़ चला। साँझ होती जा रही थी। गंगा की धारा पर घना कुहरा छा गया था। गंगा का वक्ष बिलकुल सूना था। फिरंगियों के मारे एक भी नाव सात-

गाँव से कहीं जा नहीं रही थी। सहसा बजड़े के पीछे बहुत सी लहरों का शब्द सुनाई पड़ा। बजड़े के माँझी ने वृद्ध को बताया कि पीछे एक बड़ी नाव तेजी से चली आ रही है। बजड़ा घुमा लिया गया। देखते देखते एक बहुत बड़ी नाव आ पहुँची। यह छिप नहीं थी बल्कि पश्चिमी बंगाल में नदी के आर पार जाने आने के लिये जैसी नावें रहती हैं वैसी ही थी। वह नाव बजड़े के पास आ पहुँची। वृद्ध ने देखा की उसपर पचास साठ सशस्त्र व्यक्ति डाँड़ा चला रहे हैं और माँझी के पास शुभ्र वस्त्रधारी एक वृद्ध ब्राह्मण खड़े हैं। नाव देखकर वृद्ध विस्मित हुए और उन्होंने बजड़े के माँझी से पूछा—'माँझी, यह कहाँ की नाव है?'

माँझी पूर्वी बंगाल का रहनेवाला था, बोला—'हुजूर, मैं कह नहीं सकता। उत्तर की नाव होगी।'

तब तक नाव आकर बजड़े के पास लग गई। उक्त ब्राह्मण ने वृद्ध से पूछा—'आप बजड़ा लिए कहाँ जा रहे हैं?'

वृद्ध बोले—'मैं सातगाँव से घूमने घामने चला हूँ, वहीं लौट जाऊँगा।'

'तुरंत लौट जाइए। मैं भी सातगाँव से ही आ रहा हूँ। वहीं घाट पर सुनाई पड़ा है कि रात होते ही फिरंगियों की तमाम छिपें हमारी नावों को लूटने के लिये निकल पड़ेंगी।'

'तुम लोग कहाँ जा रहे हो हो?'

'हुगली के बंदरगाह तक।'

'फिरंगी क्या तुम्हें छोड़ देंगे?'

'हम लोग स्वयं फिरंगियों को कुछ द्रव्य देने जा रहे हैं।'

नाव चलने लगी। बजड़ा भी सातगाँव की ओर लौटा। संध्या हो चुकी थी, परंतु गंगातटवर्ती किसी गाँव में दिया नहीं जलाया गया था।

गंगा का वक्ष वैसा ही सूना, निस्तब्ध और कुहासे से आवृत था। उस समय समुद्र का जल ज्वार के कारण नदी में प्रविष्ट होकर पुनः वापस हो रहा था। तीव्र प्रवाह में उलटी ओर वह बजड़ा बड़े धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। अकस्मात् अंधकार को भेदती हुई एक बड़ी सी छिप आकर बजड़े की बगल में लग गई। बंदूक लिए चार पाँच फिरंगी बजड़े पर आ गए। उन्होंने मल्लाहों को बाँध दिया। उसपर अन्य जितने व्यक्ति थे वे सब बंदी बना लिए गए और बजड़ा हुगली की ओर जाने लगा।

हुगली के किले के सामने जब बजड़ा पहुँचा तब छिप में से एक हवाई (अग्निवाण) छूटी। आकाश में जाकर उसमें से एक नीला, एक लाल और एक सफेद सितारा फूट निकाला। तुरंत किले में से भी एक हवाई छोड़ी गई और ऊपर आकाश में जाने पर उसमें से भी ऐसे ही तीन सितारे निकले। बजड़ा पुनः आगे बढ़ा। किले के सामने उत्तर-देशीय वही नाव खड़ी थी। बजड़ा देखकर पूर्वोक्त ब्राह्मण व्यक्ति ने अपने माँझी से कहा—'भुवन, यह तो वही बजड़ा है। यह सातगाँव जाकर हुगली क्यों आया? फिरंगी बेड़े ने अवश्य इसे पकड़ लिया होगा।'

भुवन बोला—'पंडित जी, रास्ते में तो कहीं फिरंगियों की कोई छिप या कोशा दिखाई नहीं पड़ी थी?'

'अँधेरे में छिपी रही होगी? भुवन, छीन लो बजड़े को!'

तत्काल साठ बलिष्ठ मल्लाह एक साथ डाँड़ा मारने लगे। पल मात्र में उन्होंने बजड़े को छोप लिया। फिरंगी सावधान नहीं थे, अतः वे अनायास ही बंदी बना लिए गए।

भुवन ने जोर से आवाज दी—'बजड़े का मुँह घुमाओ, सातगाँव चलना है।'

उसकी वाणी सुनते ही बजड़े के भीतर से उस घायल युवक ने कहा—'भुवन ?'

कंठस्वर सुनते ही भुवन के सारे शरीर में रोमांच हो आया। उसने गद्गद् कंठ से कहा—'आया महाराज जी !'

अकस्मात् किले पर मानों एक विशाल अग्निकुंड सहसा धधक उठा। उसके तीव्र आलोक से नदी की सारी धारा प्रकाशित हो उठी और 'धड़ाम', 'धड़ाम' करके दो तीन तोपें गरज उठीं। प्रकाश समाप्त होने के साथ साथ नाव और बजड़ा दोनों गंगागर्भ में समाहित हो गए। तुरंत चारों ओर से चार पाँच छिपें आईं और मल्लाहों तथा आरोहियों को बंदी बना लिया गया।

एकादश परिच्छेद

विनोदिनी वैष्णवी

हुगली के किले के पास ही गोबर से लिपी पुती छोटी सी एक स्वच्छ कुटिया थी। इस कुटिया में एक प्रौढ़ा वैष्णवी रहती थी। यौवन काल में वैष्णवी कितनी रूपमती रही होगी, यह उस सौंदर्य से ही अनुमान किया जा सकता था जिसे उसने अब तक सँजो रखा था। कहा जाता था, वैष्णवी किसी ब्राह्मण की कन्या थी और फिरंगी उसे किसी दूर देश से पकड़ ले आए थे। किसी फिरंगी सेनापति ने उसके रूपलावण्य पर मुग्ध हो उसे अपनी अंकशायिनी भी बनाया था और जब वह अपने देश चला गया तो वह भी किले से बाहर आकर रहने लगी थी। विगत-यौवना होने पर भी फिरंगियों के किले के भीतर उसका प्रायः आना जाना होता था। इसीलिये हुगली में निवास करनेवाली सारी हिंदू जनता उससे यमराज की तरह डरती रहती थी। लोग कहा करते थे कि विनोदिनी वैष्णवी हुगली के किले के बाहर रहनेवाली फिरंगियों की फौजदारनी है।

प्रातःकाल वैष्णवी अपनी कुटिया के आँगन में तुलसी चौरे के पास बैठी जप कर रही थी। उसके आसपास तीन चार बिल्लियाँ बैठी हुई थीं। दरवाजे पर बैठा एक विलायती कुत्ता अपना शरीर चाट रहा

था। तभी फूल सी सुंदर एक युवती स्नान करके गीले कपड़े लपेटे ही कुटिया के भीतर आई। उसे देख माला रखकर वैष्णवी बोली—'आ गई बिटिया? इतनी देर करनी होती है? तेरे कारण मुझे घड़ी भर भी चैन नहीं मिल पाता। तैंने तो सिर पर आँचल भी नहीं रखा है!'

युवती ने घूँघट नहीं रखा था। किशोरी लड़कियों की तरह उसके आँचल का एक कोना कमर में लपेटा हुआ था। वह एकदम लज्जा-शून्य थी। उसके सदृश रूपसी षोड़शी लड़कियों में वैसी लज्जाहीनता उस समय वंगदेश में प्रचलित नहीं थी।

युवती ने हँसकर कहा—'मैं सिर पर आँचल क्यों रखूँ माँ जी?'

वैष्णवी गहरी साँस लेकर बोली—'तुझे कैसे समझाऊँ, बेटी? अच्छा ही हुआ जो तू पागल हो गई, नहीं तो इस रूप के कारण जहा-जियों के इस शहर मे तेरी बड़ी दुर्गति होती। जा, कपड़े बदलकर फूल चुन ला।'

उन्मादिनी युवती के कलहास्य से कुटिया मुखरित हो उठी। उसने पूछा—'क्यों माँ जी, मेरा यह रूप कहाँ से आया? मैं पागल कैसे हुई?'

वैष्णवो ने पुनः गहरी साँस लेकर कहा—'जिन्होंने दया करके तुझे पागल बना दिया है, उन्होंने ही तुझे यह देवदुर्लभ रूपराशि दी है। बातें करने का समय नहीं है; तू जा, फूल चुन ला।'

युवती कुटिया के भीतर चली गई और थोड़ी देर बाद एक गेरुआ वस्त्र पहने और फूल की डलिया लिए बाहर निकल गई। विनोदिनी तुलसीचौरे के पास पुनः जप करने बैठी। आधी घड़ी में ही पगली 'माँ जी, माँ जो' चिल्लाती हुई दौड़ी। वैष्णवी पुनः उठ खड़ी हुई। पगली की कातर वाणी दूर से ही सुनाई दे रही थी। विनोदिनी का तो

मुँह सूख गया। पगली दौड़ती हुई आई और वैष्णवी के गले से लिपट गई। उसके साथ ही बस्ती के निवासी स्त्री पुरुष भी आए और उनसे कुटिया का छोटा सा आँगन भर गया। पगली को अनेक लोग वैष्णवी की पोष्य पुत्री के रूप में पहचानते थे। वे विनोदिनी से डरते थे, किंतु लड़की को पागल जानकर उसे स्नेह की दृष्टि से देखते थे। वैष्णवी की छाती में मुँह छिपाकर पगली जोर से रो उठी। चारों ओर से लोग जो तरह तरह के प्रश्न कर रहे थे, उनका उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

थोड़ी देर यों ही बीतने पर विनोदिनी उसे कमरे के भीतर ले गई और पूछने लगी—'हुआ क्या बेटी? रोती क्यों हो?'

पगली पुनः रोने लगी और रोते रोते ही उसने कहा—'माँ जी, वह आया है।'

वैष्णवी ने पूछा—'कौन आया है, बेटी?'

'वही।'

'वह कौन; वह तुम्हारा कौन है?'

'यह नहीं जानती, मगर उसे पहचानती हूँ। वही है।'

'कहाँ देखा उसे? वह है कहाँ?'

'गंगा किनारे घास पर लेटा है।'

'उसे बुलाती क्यों नहीं लाई बेटी?'

'बहुत बुलाया माँ जी, मगर वह उठा ही नहीं।'

'उसका नाम क्या है?'

'याद नहीं।'

'रहता कहाँ है?'

'इन्हीं लोगों के गाँव में।'

'किस गाँव में?'

'यह तो याद नहीं। पर वह गाँव भी गंगा किनारे ही है।'

'चल तो, देखूँ कौन है।'

विनोदिनी वैष्णवी अपनी माला लिए हुए आगंतुक को देखने चली। उसके पीछे पीछे पड़ोस के तमाम स्त्री पुरुष भी चले। गंगा-किनारे जाकर सबने देखा कि हरी हरी कोमल घास पर एक गौरवर्ण युवक पड़ा है। उसके सारे शरीर पर अस्त्र के घाव हैं जिनपर अनेक छोटी-मोटी पट्टियाँ बँधी हैं जो खून से तर हैं। मरा हुआ समझकर कोई उसके पास नहीं गया, केवल पगली उसकी बगल में जाकर बैठ गई। उसने आहत युवक का दाहिना हाथ उठाकर कहा—'मरा नहीं है भाई, तुम लोग दूर क्यों खड़े हो? माँ जी, इसे घर ले चलो।'

पगली की बातों से आश्वस्त होकर वैष्णवी धीरे धीरे युवक के पास पहुँची और उसका सिर उठाकर अपनी गोद में रख लिया। परीक्षा करके उसने देखा कि युवक सचमुच अभी मरा नहीं है, धीरे धीरे उसकी साँस चल रही है। वैष्णवी के कहने पर दो चार आदमियों ने भी आकर युवक की परीक्षा की। सभी लोगों ने कहा कि अभी हृदय की गति बंद नहीं हुई है। सब लोग उसे उठाकर वैष्णवी की कुटिया के भीतर ले आए।

कुटिया में आनेपर युवक को वैष्णवी ने अपनी चारपाई पर लिटा दिया और जहाँ जहाँ घाव लगे थे उन स्थानों को स्वच्छ करके उसे एक सूखा वस्त्र पहना दिया। पगली को सिरहाने बैठाकर वैष्णवी हकीम को बुलाने चली गई। उसे जाते देख पड़ोस की एक स्त्री ने कहा—'फिरंगी महल में तो विनोदिनी का बेखटक आना जाना है। फिरंगी डाक्टर को क्यों नहीं बुला लाती? दो दिन में आराम हो जाता।'

पगली ने आतुरतापूर्वक उससे कहा—'माँ जी, आप जाकर फिरंगी डाक्टर को क्यों नहीं लिवा लातीं?

उत्तर में पड़ोसिन ने हाथ और मुँह चमका मटकाकर सीधी सादी पगली को अच्छी तरह यह समझाने का प्रयत्न किया कि जिस कारण से विनोदिनी वैष्णवी का हुगली के फिरंगी महल में इतना आना जाना है, वह उसकी पिछली चौदह पीढ़ियों में से न तो किसी में रहा और न अगली चौदह पीढ़ियों में से किसी को होगा। गरजती चिल्लाती पड़ोसिन चली गई और पगली घायल युवक को लिए बैठी रही।

बड़ी देर बाद युवक ने आँखें खोलीं। उस समय पगली सिरहाने बैठी पंखा झल रही थी। युवक ने उसे देखते ही कहा—'ललिता, तुम हो? तो यह स्वप्न नहीं है!'

पगली उसकी बातें नहीं समझ सकी और विस्मयपूर्वक उसकी ओर देखती रही। युवक ने पुनः कहा–'यह कैसा वेश बना रखा है, ललिता?'

एक महीने से पगली को किसी ने 'ललिता' कहकर नहीं पुकारा था। बहुत दिनों बाद यह नाम सुनकर ललिता के सामने से मानों अत्यंत सघन अंधकार धीरे धीरे हटने लगा। नाम सुनकर उसे यह याद आ गया कि यह नाम तो उसी का है।

किंतु वह बोली—'तुम क्या कह रहे हो, मैं समझ नहीं पा रही हूँ।'

युवक ने जिज्ञासा की—'तुमने पेशवाज और ओढ़नी कहाँ फेंकी? बड़ी फबती थी तुम्हें!'

ललिता विस्मयपूर्वक बोली—'समझ में नहीं आ रहा है, तुम कह क्या रहे हो? यह किस चीज का नाम है?'

'बजड़े पर तुम्हीं न पेशवाज पहनकर आई थीं? और सितार पर तुमने सिंध और भूपाली बजाने में तो कमाल कर दिया था! सितार तुमने कब सीखा ललिता?'

'मैं सितार बजाना बिलकुल नहीं जानती।'

'बजड़े पर कैसे बजा रही थीं?'

'बजड़ा ! कहाँ था बजड़ा ?'

'तो वह सब सपना ही था क्या ?'

आहत युवक की क्षीण मानसिक शक्ति इस कठिन समस्या का समाधान नहीं कर सकी। उसने आँखें मूँद लीं। उसके कानों के पास सैकड़ों भौंरों के भनभनाने जैसा शब्द होने लगा। धीरे धीरे वह पुनः अचेत हो गया। आधी घड़ी बाद जब उसकी चेतना लौटी तब ललिता उसके सिरहाने बैठी पंखा डुला रही थी। मयूख ने आँखें खोलीं और जिज्ञासा की—'मैं सो गया था क्या ललिता ?'

ललिता बोली—'हाँ।'

'कितनी देर तक सोया था ?'

'लगभग आधी घड़ी तक।'

'हम लोग कहाँ हैं ललिता ? भीमेश्वर में या गौरीपुर में ?'

भीमेश्वर ! गौरीपुर !!

ललिता की स्मृति पर पड़े हुए परदे की एक और तह हट गई—भीमेश्वर ! गौरीपुर !! कलकलनादिनी जाह्नवी ! जीर्ण शीर्ण पुराना घाट और सर्वनाश ! फिरंगी, तदनंतर कुहासा, घनघोर अंधकार और इसके बाद ललिता कुछ नहीं जानती।

इसी समय विनोदिनी एक वैद्य को लेकर वापस आ गई। वैद्य जी को देखकर ललिता ने घूँघट खींच लिया। उसे घूँघट खींचते देख वैष्णवी को आश्चर्य हुआ, पर उसने कुछ कहा नहीं। वैद्य जी ने रोगी की नाड़ी देखी; लगाने और खाने की दवा की व्यवस्था की और अपनी दक्षिणा की एक अशर्फी लेकर चले गए। तब वैष्णवी ने कहा—'बिटिया, हुगली के जितने मुसल्ले हकीम थे सब मर गए; सातगाँव के हंगामे के डर के मारे सब के सब हुगली शहर छोड़कर

भाग गए हैं। इसीलिये एक वैद्य को पकड़ लाई। लेकिन पगली बेटी, आज तो तूने घूँघट निकाला था!'

हृदय का रुद्ध आवेग बाधा तोड़कर फूट निकला। ललिता ने अपनी मृणालकोमल दोनों बाहें अपनी आश्रयदात्री के गले में डालकर रोते रोते कहा—'माँ जी, आप कौन हैं? मैं गौरीपुर के राधा-मोहन गोस्वामी की कन्या हूँ। भीमेश्वर के घाट पर से जहाजी बेड़ेवाले मुझे पकड़ लाए थे। यह कौन सी जगह है माँ जी?'

वैष्णवी उसकी बातें सुन सिर थामकर बैठ रही।

द्वादश परिच्छेद

रोमन स्वर्ग का पथ

विनोदिनी जिस समय वैद्य को लेकर अपनी कुटिया में वापस आई थी उस समय हुगली के किले के भीतर एक अँधेरे कमरे में एक ईसाई पादरी दो 'पापियों' को अपने दयालु और रक्षक प्रभु की कहानी सुना रहे थे। दोनों पापियों में एक स्थूलकाय और घोर कृष्णवर्ण था। वह कोई बात सुनता ही नहीं था। दूसरा पापी दुबला पतला, लंबा और श्यामवर्ण था जो एकाग्र मन से पादरी की सब बातें सुन रहा था। मोटे आदमी को ध्यानपूर्वक बातें सुनते न देखकर पादरी क्रुद्ध हुआ। दो एक बार उसने और प्रयत्न किया; तब बोला—'चैतन्यदास, तुम मेरी पवित्र कथा नहीं सुन रहे हो; देखता हूँ तुम्हारे भाग्य में बड़ा दुःख भोगना बदा है!'

चैतन्यदास ने हँसते हुए कहा—'पादरी साहब, जबसे पैदा हुआ हूँ, तभी से दुःख भोग रहा हूँ। बैरागी होकर भी जब रुपए पैसे के लोभ का त्याग नहीं कर पाया, तब दुःख क्यों न भोगूँगा? मारना हो तो मारिए, जो चाहे सो कीजिए, पर मैं अखाद्य वस्तु नहीं खाऊँगा।'

पादरी बोला—'तुम अखाद्य वस्तु मत खाना, लेकिन परित्राता के बताए मार्ग पर तो चलो।'

'पादरी साहब, जिस मार्ग पर चल रहा हूँ उसी का कर्तव्य पूरा नहीं कर सका, नए मार्ग पर चलकर क्या होगा? तुम्हारे ईसा मसीह भी देवता हैं और हमारे कृष्ण जी भी देवता हैं। तब क्यों मुझे सता रहे हैं?'

'तुम्हारा कृष्ण देवता नहीं है; वह मनुष्य था, झूठा, लंपट...'

चैतन्यदास ने कानों में उँगली डालकर कहा—'कृष्ण जी की निंदा नहीं सुननी चाहिए। पादरी साहब, आपकी जो मर्जी हो वह कीजिए, मेरे कृष्ण जी जैसे हैं, वैसे ही रहेंगे।'

क्रुद्ध होकर पादरी ने यमदूत के सदृश दो भयंकर फिरंगियों को पुकारा। उन्होंने आकर चैतन्यदास को एक बड़े भारी चक्र में बाँध दिया। यह देखते ही दूसरे पापी ने आँखें बंद कर लीं। चक्र में बाँध दिए जाने पर भी चैतन्यदास आँखें बंद किए किए रट रहा था—'हरि बोल, हरि बोल, जय श्री राधे कृष्ण।'

पादरी ने विस्मित होकर पूछा—'तुम यह क्या बक रहे हो?'

लेकिन चैतन्यदास के कानों में उसकी आवाज नहीं पहुँची। मारे क्रोध के पादरी ने अपने आदमियों को चक्र घुमाने की आज्ञा दी। चक्र घूमने लगा और उसके साथ ही चैतन्यदास के हाथों और पैरों की हड्डियाँ टूट गईं। भयंकर पीड़ा के कारण चैतन्यदास की आँखों में आँसू आ गए लेकिन उसने कोई घबराहट नहीं दिखाई। उसके मुँह से पीड़ा और कष्ट व्यक्त करनेवाला एक शब्द भी नहीं निकला।

कुछ देर बाद चैतन्यदास ने गदगद कंठ से कहा—'और एक बार रुको! कोई कष्ट नहीं, कोई पीड़ा नहीं प्रभो! उसी रूप में एक बार और दर्शन दो प्रभो!'

उसकी बातें सुन ब्राह्मण का भय दूर हुआ। उन्होंने चक्र के पास जाकर चैतन्यदास का शरीर स्पर्श किया। चैतन्यदास कहने लगा—'यह

तो तुम्हारा स्पर्श नहीं है, प्रभो ! यह किसका कठोर स्पर्श है ? राधे-कृष्ण ! अपना नवनीत सा कोमल करकमल एक बार फिर मेरे शरीर पर फेरो, मधुसूदन !'

ब्राह्मण ने पूछा—'क्या देख रहे हो, चैतन्यदास ?'

आँखें बंद किए किए ही बैरागी ने कहा—'बड़ा सुंदर है, महाराज जी ! बड़ा ही सुंदर ! अब कोई डर नहीं। राधेकृष्ण आ गए हैं, मेरे सिरहाने खड़े हैं। उनके स्पर्श से मेरी सारी पीड़ा दूर हो गई है।'

ब्राह्मण के सारे शरीर में रोमांच हो आया। उसे ऐसा भासित हुआ मानों किसी की छाया चक्र में बँधे वैष्णव के चारों ओर घूम फिर रही है। ब्राह्मण का सारा शरीर काँपने लगा। उन्होंने भूमिष्ठ होकर उस अशरीरी छायापुरुष को दूर से ही साष्टांग प्रणाम किया।

चैतन्यदास कहने लगा—'राधेकृष्ण ! समस्त जीवन की संचित कलुषराशि का मार्जन करने के बाद यदि तुमने दर्शन दिया है तो थोड़ी देर और रुको ! अंतिम घड़ी तक तो रुके रहो !'

भूमि पर लेटे हुए ब्राह्मण को प्रतीत हुआ मानों सारा कमरा सुगंधित धूप से सुवासित हो उठा है। वैष्णव के आवेश से ब्राह्मण भी उन्मत्त हो उठे और उन्होंने चैतन्यदास के दोनों रक्ताक्त चरणों को पकड़-कर कहा—'बैरागी बाबा, तुमने क्या देखा ? समस्त जीवन की साधना के बाद भी जो दृष्टिगोचर नहीं हो पाता, उस दुर्लभ रूप का तुमने मुहूर्त मात्र के आह्वान से कैसे दर्शन कर लिया ? बाबा, मैं ब्राह्मण नहीं, चांडाल हूँ। जहाँ आ पहुँचा हूँ, वहाँ न कोई जातिभेद है, न कोई कुल-मर्यादा। जिस स्वरूप का दर्शन तुम कर रहे हो, उसका दर्शन एक बार मुझे भी करा दो।'

आवेगरुद्ध कंठ से बैरागी ने कहा—'कर लो भाई, तुम भी दर्शन कर लो।'

तत्क्षण ब्राह्मण देवता की दृष्टि के समक्ष वह छायापुरुष अकस्मात् शरीरी हो गया। अँधेरे कमरे का एक कोना शुभ्र आलोक से उद्भासित हो गया और उस छायापुरुष ने क्रमशः सुंदर, सुगठित, श्यामरूप धारण कर लिया। वैष्णवों में श्रीकृष्ण भगवान् का जो ध्यान प्रचलित है, ठीक वैसा ही स्वरूप धारण करके वह छायापुरुष ब्राह्मण देवता और वैष्णव के मानस चक्षु के समक्ष आकर प्रत्यक्ष खड़ा हो गया। ब्राह्मण देवता के मुँदे हुए नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली। पादरी और उसके अनुचर यह दृश्य देखकर स्तंभित हो रहे।

इसी समय एक फिरंगी युवक उस अँधेरे कमरे की ओर आया और उसने पुकारा—'ऐलवरेज !'

पादरी हड़बड़ाकर कमरे के दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। युवक ने उससे कहा—'तुम्हारी खून की प्यास क्या अभी तक मिटी नहीं? तुम मुझसे आज्ञा लिए बिना बंदियों को क्यों कारागार से निकालकर यहाँ ले आए?

पादरी ने संकुचित होकर कहा—'मूर्तिपूजकों का दमन करने के लिये पादरियों का आदेश ही उचित है। मैं नहीं जानता था कि इसके लिये भी शासकों की आज्ञा लेनी पड़ती है।'

'तुमने क्या बंदियों को कोई तकलीफ दी है?'

'ये दो बंदी शैतान के अनुयायी हैं। इन्हीं के कारण यहाँ के निवासी पवित्र धर्म स्वीकार नहीं कर रहे हैं।'

युवक ने आगे बढ़कर चक्र में बँधे वैष्णव और उसके पास ही भूमि पर बड़े ब्राह्मण को देखा और उँगली से संकेत किया। पादरी के दोनों

अनुचरों ने तुरंत चैतन्यदास के बंधन खोल दिए, पर चैतन्यदास खड़ा नहीं हो सका, भूमि पर लुढ़क गया। यह देख युवक ने पादरी से पूछा—'इसे मार डाला क्या?'

पादरी बोला—'आप शासक हैं, इसलिये आपका संमान करता हूँ। अन्यथा मैं अपने कर्तव्यपालन के लिये किसी शासक के सामने उत्तरदायी नहीं हूँ। स्वयं हमारे राजा मेरे कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। मेरे मालिक एकमात्र ईश्वर के प्रतिनिधि ही हैं।'

'ऐलवरेज! जानते हो, यह स्पेन नहीं, हिंदुस्तान है? यह भी जानते हो कि ये दोनों मूर्तिपूजक हम लोगों की प्रजा नहीं हैं?'

'जानता हूँ।'

'तुम्हें मालूम है कि यह हुगली बंदर युद्ध विभाग के अधीन है और यहाँ तुम लोगों का कानून नहीं चलता?'

'मालूम है।'

'यह भी जानते हो कि तुम यहाँ सत्यधर्म का प्रचार करने आए हो, हत्या या शासन करने नहीं?'

'जानता हूँ।'

'फिर तुमने नरहत्या क्यों की?'

'सत्यधर्म के प्रचार के लिये जो आवश्यक था, वही किया है। डिसूजा! इस समय तुम नौसेनापति हो; लेकिन याद रखो, एक दिन तुम्हें स्पेन लौटना है!'

'ऐलवरेज! मैं सिपाही हूँ, मौत को गले लगाने के लिये हमेशा तैयार रहता हूँ। तुम्हारे राज्य में लौटने के पहले ही मेरी मृत्यु होगी। लेकिन ऐलवरेज, तुम नरघाती पिशाच हो! ईसामसीह के पवित्र

धर्म की तुम्हारे जैसे चांडालों के कारण ही हिंदुस्तान में बदनामी और नफरत है। तुम्हीं लोगों के कारण एक दिन पुर्तगाली साम्राज्य नष्ट होगा। जो कुछ कर गुजरे हो, मेरे रहते अब दुबारा नहीं कर पाओगे।'

'क्यों नहीं कर पाऊँगा?'

'मेरा हुक्म है!'

'कोई भी ईसाई मेरे हुक्म की अवहेलना करने का साहस नहीं करेगा।'

'ऐलवरेज, मेरे हुक्म के विरुद्ध हुगली का कोई भी पुर्तगाली तुम्हारी आज्ञा नहीं मानेगा।'

'जो नहीं मानेगा, वह दंडित होगा।'

इसी समय एक और युवक फिरंगी दरवाजे पर उपस्थित हुआ और उसने जिज्ञासा की—'नौसेनापति महोदय क्या यहाँ हैं?'

डिसूजा ने कहा—'हूँ; क्या बात है?'

कमरे के भीतर आकर युवक ने कहा—'सेनापति महोदय, डिकुन्हा ने कल जो बजड़ा पकड़ा है वह नवाब शाहनवाज खाँ का बजड़ा है। मैं जेलखाने में उनसे मिल चुका हूँ।'

'शाहनवाज खाँ है कौन?'

'शाहजादा शाहजहाँ का एक विश्वासी आदमी है। तुरंत उसे छोड़ दीजिए, वरना मिनटों में हिंदुस्तान से पुर्तगालियों का बिस्तर गोल समझिए।'

डिसूजा ने पादरी के दोनों अनुचरों से कहा—'इन दोनों बंदियों को विनोदिनी वैष्णवी की कुटिया में ले जाओ। पादरी ऐलवरेज को फौरन गिरफ्तार कर लो, इन्हें मारना पीटना मत, नजरबंद रखना।'

डिसूजा आगंतुक के साथ चला गया। एक फिरंगी ने चैतन्यदास को गोद में उठा लिया। दूसरे ने ब्राह्मण को स्पर्श किया। ब्राह्मण देवता ने पूछा—'कहाँ चलना है?'

फिरंगी ने दरवाजे की ओर इशारा किया। सभी लोग कमरे से बाहर निकल आए।

त्रयोदश परिच्छेद

भाग्यचक्र

सातगाँव के किले के फाटक के पीछे अमीर-उल्-बहर असद खाँ उदास भाव से खड़े थे। उनके पीछे रादंदाज खाँ, अलीनकी खाँ आदि मुख्य मुख्य सेनापति और सेठ गोकुलविहारी, उनके लड़के गोष्ठविहारी, चिंतामणि मजूमदार, हरिनारायण शील आदि सातगाँव के विशिष्ट पुरुष खड़े थे। सभी के चेहरों पर खिन्नता थी। घायल सैनिक असद खाँ के सामने उपस्थित थे। असद खाँ मयूख को खोज रहे थे।

गोकुलविहारी बोले—'हुजूर, सातगाँव के लोगों ने जब सुना कि फिरंगियों के डर के मारे फौजदार कलीमुल्ला खाँ भाग गए हैं, तब सारा आशा भरोसा छोड़कर लोग मरने मारने पर उतारू हो गए। फौजदारी के सिपाही भागने की तैयारी कर रहे थे। ऐसे समय में उसी शेरमर्द जवान ने सबको हिम्मत और दिलासा दिलाकर सातगाँव को बचाने का उपाय किया था। डीकुन्हा की तोप पर उसी ने कब्जा किया था। उसी के भय से क्यूटिनहो का बेड़ा किले के सामने नहीं आ सका। त्रिवेणी की रक्षा उसी की वजह से हुई। उसी की सलाह से मैंने डिसूजा पर हमला किया था। कौन जानता था कि उससे फिर भेंट न होगी!

असद खाँ ने कहा—'वह जवान कौन है, जानते हो हरिनारायण?'

हरिनारायण—'नहीं हुजूर !'

असद खाँ—'वह देवेंद्रनारायण का लड़का है।'

चिंतामणि—'कौन ? भीमेश्वर के महाराज देवेंद्रनारायण !'

असद खाँ—'हाँ, जिसकी जवाँमर्दी देखकर एकबार शाहजादा खुर्रम ने भी दाँतों तले उँगली दबाई थी।'

इसी समय एक हरकारे ने आकर कहा—'बंदानवाज, हकीम अबू तोराब खाँ खिदमद में हाजिर होना चाहते हैं।'

असद खाँ बोले—'लिवा लाओ।'

हरकारे के साथ उन्हीं वृद्ध हकीम ने आकर असद खाँ का अभिवादन किया।

असद खाँ ने कहा—'हकीम साहब, आज तो सातगाँव में हकीमों की बड़ी जरूरत है।'

'हुजूर, शाही काम के लिये बंदा हमेशा हाजिर है। सुना है, किसी काफिर जवान ने फिरंगियों से लोहा लेकर सातगाँव को बचाया है। आप उसी की तलाश में हैं क्या ?'

'हाँ हकीम साहब, वह जवान काफिर होते हुए भी बड़ा बहादुर और मेरे दोस्त का लड़का है। आपको उसका कुछ सूराग लगा है क्या ?'

'कल शाम को शाहनवाज खाँ के बजड़े पर एक गोरे रंग के जवान का इलाज करने गया था। पोशाक से वह काफिर ही जान पड़ता था।'

'उसकी और हुलिया क्या थी ?'

'गोरा सा, ऊँचे कद का कद्दावर जवान था।'

'उसकी नाक पर चोट का निशान था ?'

'था।'

'तो वही है; चिंतामणि, नवाब शाहनवाज खाँ कहाँ हैं ?'

रादंदाज खाँ ने कहा—'कल शाम को अब्बाजान बजड़े पर सवार होकर सैर करने निकले थे। उसके बाद उन लोगों की कोई खबर नहीं मिली।

चिंतामणि मजूमदार बोले—'बंदरगाह के दारोगा ने खबर दी है कि कल सारी रात कोई नाव या कोई बजड़ा हुगली से सातगाँव की ओर नहीं आया।'

असद खाँ—'हरिनारायन, तुम नौबारे से एक कोशा लेकर दक्खिन की ओर जाओ, देखो तो सातगाँव में शाहनवाज खाँ का बजड़ा कहीं अब तक दिखाई देता है। और रादंदाज खाँ, आप त्रिवेणी बंदरगाह जाकर जितनी छिपें और कोशाएँ हैं सबको जंग के लिये तैयार रखें। जरूरत हुई तो आज ही हुगली पर हमला करना होगा।

रादंदाज खाँ—'अब्बाजान के साथ मेरी बेगम साहबा भी हैं। उनकी हिफाजत के लिये हुगली पर फौरन हमला करना जरूरी है।

असद खाँ—'एक पहर में ही हुगली पर हमला होगा। गोकुल-विहारी, तुम्हारे सिपाही तैयार हैं ?'

गोकुलविहारी—'हुजूर, मेरे सिपाही सारी रात सातगाँव के पहरे पर रहे और अब तक कोई भी वापस नहीं आया। फौजदारी के अहदियों की फौज को तैयार होने में थोड़ी देर लगेगी।

असद खाँ—'अलीनकी खाँ, आपकी फौज तैयार है ?'

अलीनकी खाँ—'ना; लेकिन पहर भर में ही कूच के लिये तैयार हो सकती है।'

असद खाँ—'हम लोगों के पास और सब चीजें तो हैं, सिर्फ तोपें नहीं हैं। नौवारे को अगर जहाँगीरनगर न भेजा गया होता तो शायद

हफ्ते भर में ही हुगली के किले पर कब्जा हो जाता। लेकिन किला फतह करने के लिये जरूरी एक तोप भी नहीं है।'

गोकुलविहारी—'लेकिन एक सुभीता है; फिरंगियों के सारे जहाज हिजली में रुके पड़े हैं क्योंकि इस साल गंगा में पानी काफी नहीं है।'

इसी समय हरकारे ने आकर खबर दी कि जहाँगीरनगर से दीवान हरेकृष्ण राय आए हुए हैं और फौरन हाजिर होना चाहते हैं। असद खाँ ने विस्मयपूर्वक कहा—'खालसा के दीवान हरेकृष्ण राय जहाँगीरनगर छोड़कर यहाँ सातगाँव क्यों आए? रादंदाज खाँ, दीवान हरेकृष्ण सेहजारी मनसबदार हैं। करीममुल्ला खाँ की ओर से तुम जाकर उन्हें बाइज्जत लिवा लाओ।'

हरकारा और रादंदाज खाँ चले गए। थोड़ी देर बाद सूबा बंगाल के राजस्व विभाग के दीवान हरेकृष्ण राय को साथ लेकर असद खाँ के पास वापस आ गए। दीवान महोदय ने यथोचित रीति से अभिवादन करने के बाद कहा—'जनाब आली, नवाबनाजिम नवाब मुकर्रम खाँ फौत कर गए हैं। शाहंशाह बादशाह का हुक्म इकलिम जितने दिनों बंगाल नहीं पहुँचता उतने दिनों आप ही सूबा बंगाल, बिहार और उड़ीसा के सूबेदार हैं।'

इतना कहकर दीवान हरेकृष्ण ने दुबारा अभिवादन किया। असद खाँ ने विस्मयपूर्वक पूछा—'नाजिमनवाब मुकर्रम खाँ कैसे फौत हुए?'

हरेकृष्ण ने दुबारा कोर्निश करके कहा—'नवाबनाजिम बजड़े पर सैर को गए हुए थे। एकाएक तूफान आ गया और बजड़ा डूब गया।'

'उड़ीसा और बिहार के फौजदार को क्यों नहीं खबर दी?'

'आपके अलावा सूबा बंगाल और बिहार में पंजहजारी मनसबदार और कोई नहीं है।'

हरेकृष्ण राय के आदेश से सूबेदारी के चिह्नस्वरूप छत्र, निसान, आसा सोंटा, माही मरातिब आदि राजचिह्न मँगाए गए। पेशकार की हैसियत से हरिनारायण शील ने उड़ीसा, जहाँगीरनगर, सातगाँव और पटना के नायब नाजिमों को नवाब असद खाँ की निजामत का समाचार लिख भेजा। मीरमुंशी की हैसियत से चिंतामणि मजूमदार ने बादशाह के दरबार में खबर भेजी। तदनंतर असद खाँ ने कहा—'दीवान साहब, यह निजामत न लाकर नौबारे का एक गरारा या दो बड़ी बड़ी तोपें लाते तो मैं ज्यादा खुश होता। मैं फौरन हुगली पर हमला करने जा रहा हूँ।'

'क्यों हुजूर?'

'तीन दिन पहले हुगली के फिरंगियों ने सातगाँव पर हमला किया था। बड़ी मुश्किल से शाही बंदरगाह बच पाया है। कल शाम को हजरत जलाली नबाब शाहनवाज खाँ अपनी बहू के साथ सैर को रवाना हुए थे मगर अभी तक लौटे नहीं। शायद फिरंगी बेड़े ने उनका बजड़ा छीन लिया है।'

'अब हुजूर खुद जब निजाम हो गए हैं तो यह बंगाल का सूबा फिरंगी बेड़े के जुल्म से जरूर छूट जायगा।'

'दीवान साहब, जितने दिन मैं निजाम रहूँगा उतने दिनों तक फिरंगी बेड़े के जुल्मों से इसे बचाने की कोशिश जरूर करूँगा; उसके बाद खुदाताला और शाहंशाह बादशाह की जैसी मर्जी।'

इसी समय किले के फाटक पर दमामा बज उठा। फौजदारी की अहदी सेना तैयार होकर बाहर निकली। नवाब नाजिम ने कहा—'दीवान साहब, अब आप आराम कीजिए। अगर हुगली से जिंदा लौटा तो जहाँगीरनगर चलूँगा।'

नवाब नाजिम, अलीनकी खाँ और गोष्ठबिहारी भी किले से निकले। किले के फाटक पर एक वृद्ध मल्लाह ने नवाब नाजिम को झुककर सलाम किया। अहदी लोग उसे भगा रहे थे, लेकिन असद खाँ ने उन्हें मना करके कहा—'बूढ़ा जो कुछ कहना चाहता है, कहने दो।'

तब वृद्ध ने आगे बढ़कर कहा—'हुजूर, मैं बुड्ढा आदमी हूँ। आँखों से अच्छी तरह दिखाई नहीं देता। मैं भीमेश्वर के स्वर्गीय महाराज देवेंद्रनारायण का मल्लाह हूँ। बड़ी मुसीबत में पड़कर हुजूर की खिदमत में आया हूँ।'

असद खाँ ने विस्मित होकर पूछा—'देवेंद्रनारायण? तो तुम क्या उनके लड़के के साथ आए थे?'

उत्तर देने के पहले भुवन ने असद खाँ के चेहरे की ओर ध्यानपूर्वक देखा, तदनंतर धीरे धीरे बोला—'हुजूर मैं बूढ़ा आदमी हूँ, नीच जातिका हूँ। भूलचूक माफ कीजिएगा। आप असद खाँ हैं न! पिपली और अकबरनगर की लड़ाई में आपको देखा था!'

असद खाँ ने मुसकुराते हुए कहा—'हाँ भाई, मैं असद खाँ ही हूँ। देवेंद्रनारायण के लड़के की कोई खबर है तुम्हें?'

भुवन असद खाँ के पैरों पर लेट गया। बोला—'वही खबर लेकर आया हूँ, हुजूर।'

भुवन गौरीपुर के घाट से ललिता के अपहरण का वृत्तांत, मयूख की यात्रा आदि सारी बातें सुना गया। अंत में उसने कहा—'उन बूढ़े अमीर की नौका में से जिस समय महाराज ने मुझे पुकारा उसी समय फिरंगियों द्वारा किले पर से छोड़ा गया गोला बजड़े और हमारी नाव पर गिरा और दोनों डूब गईं। हमारी नाव पर के भट्टाचार्य महाशय, एक बैरागी बाबा और दो तीन आदमी पकड़ लिए गए, लेकिन बजड़े पर का कोई नहीं बचा, सब लोग कैद कर लिए गए।'

असद खाँ ने पूछा—'बजड़ा हुगली क्यों गया ?'

'फिरंगी बेड़े की छिप उसे पकड़ ले गई !'

'अलीनकी खाँ, तुमने सारी बातें सुन लीं न ? अब हुगली पर हमला करने के अलावा और कोई चारा नहीं रह गया।'

इसी समय असद खाँ ने देखा कि दूर पर राद‌ंदाज खाँ एक वृद्ध मुसलमान सज्जन के साथ चले आ रहे हैं। नाजिम बोल उठे—'सुभान अल्लाह ! नवाब शाहनवाज खाँ तो फिरंगियों के हाथ से छूट गए।'

शाहनवाज खाँ ने पास आने पर बताया कि फिरंगी नौसेनापति डिसूजा ने उन्हें मुक्त कर दिया। असद खाँ यह सुनकर किले के भीतर वापस चले गए।

चतुर्दश परिच्छेद

परिचय

विनोदिनी को जोर से चिल्लाकर उठ बैठते देख ललिता दौड़ी आई और उसके गले से लिपटकर बोली—'क्या हुआ माँ जी? इस तरह चिल्लाती क्यों हो?'

विनोदिनी ने उत्तर नहीं दिया; ललिता से लिपटकर रोती रही। ललिता की आँखों में भी आँसू आ गए। दोनों देर तक इसी प्रकार चुपचाप रोती रहीं। मयूख की समझ में कुछ नहीं आया। थोड़ी देर बाद उन्होंने पूछा—'रोती क्यों हो ललिता, तुम लोगों को हो क्या गया है?'

उत्तर न मिलने पर पुनः उन्होंने यही बात पूछी। जब विनोदिनी ने आँखें बंद किए किए ही कहा—'बेटी, अपनी सारी कहानी तुम्हें सुना दूँगी। पहले तुम अपना परिचय दो। ये जामाता बाबू हैं?'

ललिता का मुख लज्जा से लाल हो आया। घूँघट हटाकर वह बोली—'ना, ना। ये भीमेश्वर महाराज के चिरंजीवी हैं। गौरीपुर के घाट पर जिस समय फिरंगी बेड़ेवालों ने मुझको पकड़ा था उस समय ये नाव पर बैठे मछली का शिकार कर रहे थे।'

'तब तू उन्हें यहाँ उस तरह क्यों लिवा लाई?'

ललिता का आरक्त मुख लज्जावश और लाल हो गया। वह बोली—'इसका कारण नहीं जानती।'

इतना कहकर ललिता ने मुँह फेर लिया। विनोदिनी ने फिर कुछ नहीं पूछा। मयूख ने सोचा कि हुगली आने की सफाई देना उनके लिये आवश्यक हो गया है। खाट पर लेटे लेटे ही उन्होंने ललिता के अपहरण का सारा वृत्तांत कहना आरंभ किया। मयूख की बातें समाप्त होने पर विनोदिनी ने गहरी साँस ली। तत्पश्चात् वह बोली—'बेटी, भगवान ने ही तुम्हारी रक्षा की है। तुम तो फिरंगियों के हाथ में पड़ने के साथ ही पागल हो गई थीं, इसी लिये दुष्टों ने तुम्हें छोड़ दिया। तुम्हें अकेली हुगली की सड़कों पर घूमते देख मैं लिवा लाई थी।'

'आप कौन हैं, माँ जी? मेरी कहानी सुनकर आप रोने क्यों लगी थीं?'

ललिता का प्रश्न सुनकर विनोदिनी पुनः रो उठी और उसे छाती से लगाकर बोली—'बेटी, जिस दिन तुम्हें धूल कीचड़ लपेटे, बाल बिखराए हुगली की सड़कों पर फिरती देखा था उसी दिन समझ गई थी कि तू मेरी आत्मीय है। मैं खड़दह के तारानाथ भट्टाचार्य की लड़की हूँ। तेरी माँ मेरी सगी बहन थीं।'

ललिता चकित होकर विनोदिनी का मुँह देने लगी। तदनंतर उसने पूछा—'मौसी, फिर आप यहाँ क्यों रहती हैं? माँ ने कभी ननिहाल की कोई बात बताई नहीं। इतना सुना है कि मेरे एक मामा थे। चौदह बरस हुए, वे संन्यासी हो गए।'

'चौदह बरस हुए दुष्ट फिरंगी मुझे और मेरी भतीजी को खड़दह से पकड़ लाए थे। मैं बालविधवा हूँ। तुम्हारी मामी का भी शरीरांत हो चुका है; मैं अभी तक पापों का बोझ ढोती फिर रही हूँ।'

इतना कहकर विनोदिनी पुनः रोने लगी। ललिता की समझ में नहीं आया कि अब क्या कहे। धीरे धीरे वह भी सिसकने लगी। थोड़ी देर बाद शांत होने पर विनोदिनी ने कहा—'बेटी, फिरंगियों को अगर पता चल गया कि तुम्हारा पागलपन जाता रहा तो वे तुम्हें फिर पकड़ ले जायँगे। तुम्हें तुरंत यहाँ से भाग जाना चाहिए।'

इसके अनंतर मयूख से उसने कहा—'बेटा, जहाँ तुमने ललिता के लिये इतना किया है, वहाँ इतना उपकार और करो कि तुम इसे लेकर भीमेश्वर वापस चले जाओ।'

मयूख ने थोड़ा हँसते हुए—'उठकर खड़ा होने लायक होते ही लिवा जाऊँगा।'

इतना सुनते ही ललिता ने कहा—'मौसी, भीमेश्वर में मैं कहाँ रहूँगी। बाबू जी क्या मुझे घर में स्थान देना मंजूर करेंगे।'

कहते कहते उसकी आकर्णविस्फारित नीलकमल सदृश दोनों आँखों में जल भर आया। मयूख बोले—'ललिता, गोस्वामी जी अगर तुम्हें घर में रखना चाहें भी तो गाँववाले स्वीकार करेंगे, इसमें संदेह है। हरिनाथ गंगोपाध्याय हैं, माधव गंगोपाध्याय हैं, कालिदास चट्टोपाध्याय हैं, ये लोग कभी भी स्वीकार न करेंगे।'

विनोदिनी ने लंबी साँस लेकर कहा—'यह तो है ही। तो फिर उपाय क्या है ? बेटा, तुम जब ललिता को छुड़ाने चले थे तब क्या सोचा था ?'

'माँ जी, मैंने इन बातों पर ध्यान ही नहीं दिया था।'

विनोदिनी सिर पर हाथ रखकर कुछ सोचने लगी। थोड़ी देर बाद बोली—'ललिता जब मेरी शरण में आ पहुँची है तब मैं उसे कहीं फेंकूँगी नहीं। पर यहाँ रखकर भी उसे बचा नहीं सकूँगी। मैं

आगरा जाना चाहती हूँ बेटा; और कहीं रहकर फिरंगियों से ललिता की रक्षा न कर पाऊँगी। हम लोगों के साथ चल सकोगे बेटा?'

मयूख ने कहा—'चलूँगा।'

उसी दिन से विनोदिनी ने ललिता को घर से कहीं बाहर नहीं निकलने दिया। मयूख जब स्वस्थ हो गए तो एक दिन रात में अपनी साफ सुथरी कुटिया का दरवाजा बंद करके विनोदिनी चली गई। उसके जाने के दो दिन बाद फौजदारी के सिपाहियों के साथ तर्करत्न महाशय और भुवन वहाँ पहुँचे इसलिये किसी से उनका साक्षात् नहीं हुआ।

भुवन की जबानी नाजिम असद खाँ ने मयूख का सारा वृत्तांत सुनकर तर्करत्न महाशय और भुवन को छिपकर पता लगाने के लिये हुगली भेजा था। तर्करत्न के सातगाँव लौटने पर शाहनवाज खाँ अलीन की खाँ और असद खाँ परस्पर परामर्श कर रहे थे। वृद्ध ब्राह्मण ने नवाब नाजिम को बताया कि मयूख जीवित हैं। राधामोहन गोस्वामी की कन्या और मयूख हुगली में विनोदिनी वैष्णवी के आश्रय में थे लेकिन दो तीन दिन हुए सबके साथ विनोदिनी वैष्णवी कहीं चली गई। वे लोग किस ओर गए, किसी को पता नहीं।

यह समाचार सुनकर शाहनवाज खाँ और असद खाँ उदास भाव से कुछ सोचने लगे। बड़ी देर बाद असद खाँ ने कहा—'नवाब साहब, आप अब शाही दरबार को वापस लौट जायँ। शाहंशाह बादशाह का हुक्म जब तक किसी और को सूबा बंगाल का नाजिम मुकर्रर करने का नहीं होता, तब तक मुझे जहाँगीरनगर में ही रहना होगा। नए सूबेदार के आ जाने पर मैं भी अकबराबाद जाऊँगा।'

शाहनवाज खाँ ने लंबी साँस लेकर कहा—'ठीक है। रादंदाज और मैं कल सातगाँव से रवाना होंगे।'

'देवेंद्रनारायण के ये जो आदमी मयूख की खोज में आए हैं, इन्हें भी अपने साथ लिवाते जाइए। मखसूसाबाद में इन्हें छोड़ दीजिएगा। काफिरो, तुम लोग नवाब साहब के साथ वापस चले जाओ। देवेंद्र-नारायण का लड़का अगर वापस लौटेगा तो मैं भीमेश्वर खबर भेजूँगा।'

तर्करत्न महाशय ने कहा—'हुजूर, मैं ब्राह्मण हूँ। हिंदुओं की ब्राह्मण जाति में ज्यादातर लोग साधु संन्यासी हो जाते हैं। संसार में मेरा अपना कोई नहीं रह गया है। जिस दिन भीमेश्वर से चला था उस दिन वहाँ की मिट्टी छूकर प्रतिज्ञा की थी कि भीमेश्वर वापस आऊँगा तो अपने स्वामी के पुत्र के साथ, नहीं तो काशीवास करने चला जाऊँगा। नवाब साहब आगरा जायँगे। हम लोगों को भी लेते चलें तो बड़ी दया हो।'

'तुम आगरा जाकर क्या करोगे?'

'बादशाह के दरबार में फिरंगियों के अत्याचार का हाल सुनाऊँगा।'

शाहनवाज खाँ ने कहा—'बड़ी अच्छी बात है। मैं भी चाहता हूँ कि फिरंगी बेड़े के जुल्मों के कुछ गवाह शाही दरबार में पेश हों। यह काफिर मुल्ला मेरे साथ चलने पर राजी है। पादरी ने जिस काफिर फकीर को तकलीफ दी है, वह चलता तो और अच्छा होता।'

असद खाँ ने कहा—'ठीक है।'

सातगाँव आकर गुलरुख रादंदाज खाँ के घर ही रह रही थी। उसके नौकर चाकर भी एक एक करके लौट आए थे। शाहनवाज खाँ ने वापस आने पर गुलरुख से पूछा—'बेटी, हम लोग कल आगरा जा रहे हैं। तुम कहाँ जाओगी?'

युवती ने कहा—'मैं सोच नहीं पा रही हूँ, कहाँ जाऊँ। आपके साथ ही आगरा चलूँ तो कैसा रहेगा?'

म० ७ (११००—६२)

'चलो ! हम लोग कल सुबह रवाना होंगे ?'

'मैं भी चलूँगी । उनकी कोई खबर लगी ?'

'लगी है । वे हुगली में एक काफिर औरत के घर ठहरे थे । बाद में वहाँ से चले गए । बेटी, तेरे शौहर क्या काफिर हैं ?'

'हाँ ! मुझसे ब्याह करने के लिये वे मुसलमान हो गए थे ।'

'उनका पहले का हाल चाल जानती हो ?'

'नहीं ।'

'वे राढ़ देश के एक बहुत बड़े जमींदार के लड़के हैं ।'

'फिरंगी बेड़े की वजह से सूबा बंगाल में अमन चैन नहीं रह गया है । इसलिये सोच रही हूँ, आगरा जाकर बादशाह के दरबार में सारी दास्तान अर्ज करूँ । मैं अकेली और यतीम हूँ । यहाँ रहकर शौहर का पता लगाना मेरे लिये मुमकिन नहीं दिखाई देता ।'

दूसरे दिन शाहनवाज खाँ, राद॑दाज खाँ और उनकी पत्नी, गुलरुख, फातिमा, नजीर अहमद खाँ, हबीब, चैतन्यदास बैरागी, तर्करत्न महाशय और भुवन जलमार्ग से आगरा के लिये रवाना हो गए ।

पंचदश परिच्छेद

पुनर्वार

यमुना किनारे आगरा के किले के सामने एक गौरवर्ण युवक एक नाव के सामने बैठा हुआ था। उस समय न तो यमुना नदी हटकर किले से दूर बहती थी और न किले के सामने कोई वृक्ष था। बड़ी कड़ी धूप थी, मगर क्योंकि बादशाह किले में ही विद्यमान थे, इसलिये किले के सामने कोई छाता नहीं लगा सकता था। युवक बीच बीच में रूमाल से आड़ करके धूप से बचने की चेष्टा करता था, लेकिन तुरंत किले की ओर देखकर रूमाल हटा लेता था। श्रावण मास था, वर्षा ऋतु आ गई थी, मगर धूप अभी बड़ी तेज थी। किले के भीतर सफेद संगमरमर के बने प्रासादों की असंख्य खिड़कियों पर विविध रंगों के स्वर्णखचित परदे पड़े हुए थे। बादशाह किले में ही थे, इसलिये उसपर हरा झंडा फहरा रहा था। किले के चारों ओर हजार हजार हाथ की दूरी पर एक एक सेनापति की छावनी पड़ी थी। हरबे हथियार से सुसज्जित सैनिक किले के चतुर्दिक् घूम घूमकर निरंतर पहरा दे रहे थे। किले के भीतर यमुना किनारे की ओर सम्राट् का अंतःपुर था। वहाँ तुर्की और तातारी पहरेदार दस दस हाथ पर नंगे सिर उसी कड़ी धूप में खड़े थे।

दो तीन पहरेदारों ने जाकर युवक से वहाँ प्रतीक्षा करने का कारण

पूछना चाहा, पर उसके पास शाही पंजा देखकर वापस चले गए। देखते देखते दो घड़ी बीत गई। युवक को नींद आ रही थी।

इसी समय किले के भीतर जहाँगीरमहल में सितार बजना आरंभ हुआ। युवक को लगा, जैसे वह बहुत दूर सूबा बंगाल में गंगा-यमुना-सरस्वती के संगम पर एक बड़े से बजड़े के कमरे में हाथीदाँत के पलँग पर लेटा हुआ है और उसकी बगल में बैठी एक अनिंद्य सुंदरी युवती सितार पर सिंध भूपाली रागिनी छेड़ रही है। थोड़ी ही देर में उसकी तंद्रा भंग हुई और वह चौंककर उठ खड़ा हुआ। किंतु सितार के स्वर तब भी आ रहे थे। उसने अपनी आँखें मलीं। सिंध भूपाली रागिनी तब भी यथावत् बज रही थी।

अकस्मात् जहाँगीरमहल की एक खिड़की का परदा हटा और उसके भीतर तातारी पहरेदार स्त्री और एक अन्य युवती के मुख दृष्टिगोचर हुए। युवक उधर ही देखने लगा। क्षण भर के लिये उनकी आँखें इधर फिरीं और तातारी औरत ने परदा पुनः यथास्थान ठीक कर दिया। युवक को प्रतीत हुआ मानों दूसरी युवती का मुख अपरिचित नहीं है। लेकिन परदा फिर नहीं हटा।

थोड़ी देर बाद किले के दरियाई फाटक से एक खोजा और एक परिचारिका के साथ एक प्रौढ़ा स्त्री बाहर निकली। उन्हें नाव पर बैठाकर युवक ने मल्लाहों को नाव खोल देने की आज्ञा दी। क्रमशः आगरे का किला बहुत पीछे छूट गया। प्रौढ़ा ने घूँघट हटाकर कहा—'बेटा, आज का समाचार अच्छा है। बादशाह बेगम को राजी कर आई हूँ। तुम कल नवाब आसफ खाँ से मिलना, वे तुम्हें दीवान खास में लिवा ले जायँगे।'

युवक ने प्रसन्न होकर कहा—'माँ जी, इतने दिनों बाद जान पड़ता है भगवान् ने अपनी कृपादृष्टि हम लोगों पर की है!'

'हाँ; और इतने दिनों बाद जान पड़ता है, ललिता का दुःख दूर हुआ !'

'असद खाँ का कुछ समाचार मिला ?'

'ना। मगर सुना है कि फिदा खाँ से मालगुजारी लेकर दीवान हरेकृष्ण राय आगरा आ रहे हैं।'

'मगर असद खाँ के आए बिना बादशाह के दरबार में हमारी सहायता कौन करेगा ?'

'देखो बेटा, तुम अब ललिता से विवाह कर लो।'

'बंगाली पुरोहित कहाँ मिलेंगे ?'

'बादशाह बेगम ने कहा है कि वृंदावन से किसी बंगाली गोस्वामी को बुला लेंगी। वे ललिता को देखना चाहती हैं। मैंने कहा है कि विवाह हो जाने पर ले आऊँगी।'

युवक ने कोई उत्तर नहीं दिया, यह देख प्रौढ़ा का मन आनंद से उल्लसित हो उठा। नाव शहर की ओर बढ़ चली। उस समय जहाँगीर-महल में स्वच्छ संगमरमर के कमरे में बैठी पूर्वोक्त युवती उसी तातारी स्त्री के साथ वार्तालाप कर रही थी। युवती ने पूछा—'जो औरत नाव पर सवार होकर गई है उसे तू पहचानती है ?'

तातारी बोली—'पहचानती हूँ।'

'कौन है वह ?'

'बंगालिन है। सुईकारी का काम बड़ा अच्छा जानती है। इधर दो दो दिनों के बाद हजरत बादशाह बेगम की खिदमत में आती है।'

'क्या नाम है ?'

'ठीक कह नहीं सकती; 'बिदनी' या 'बिंदानी' जैसा कोई नाम है।'

''विनोदिनी' तो नहीं है ?'

'हाँ, हाँ; आप तो ठीक काफिरों जैसा बोल लेती हैं !'

'हाँ; मैं बहुत दिनों तक सूबा बंगाल में रही हूँ न !'

'आप उसे पहचानती हैं ?'

'नहीं। तुझे जो कहती हूँ, गौर से सुन। नाव के पास जो आदमी बैठा था, वह मेरा शौहर है। तू उसका पता लगा सकती है ?'

'क्यों नहीं लगा सकती ? फुरसत मिलते ही पता लगाऊँगी। मगर कुछ खर्च बैठेगा।'

'जितने रुपए लगेंगे, मैं दूँगी। तू शहर के रास्ते अच्छी तरह पहचानती है ?'

'मैं तो नहीं जानती, मगर शहर में मेरा एक दोस्त है।' इतना कहकर तातारी मुसकुराने लगी। 'वह आगरा के बच्चे बच्चे को जानता है। लेकिन बेगम साहबा, वह बड़ा भारी शराबी है।'

'मैं खानसामा के नाम हुक्मनामा दिलवाती हूँ। तू उसे ईरानी और फिरंगी शराबों में डुबो देना।'

तातारी ने लंबा सलाम दागते हुए कहा—'तब तो हफ्ते भर में ही बेगम साहबा के शौहर का पूरा पूरा पता लगवा दूँगी।'

'उसे पकड़ लाना होगा।'

'कहाँ लाना है ?'

'महलसरा में ही।'

'महलसरा में लाने पर कोई जिंदा नहीं बच पाएगा।'

'क्यों ?'

'सुनती हूँ, नूरजहाँ बेगम की अमलदारी के वक्त दो एक मर्द औरत का भेस बनाकर महलसरा में आया जाया करते थे, लेकिन हजरत अर्जमंद बानू बेगम साहिबा के वक्त ऐसा नहीं हो सकेगा।'

'तो मैं बेगम साहबा से इजाजत ले लूँगी।'

'दुहाई है बेगम साहबा, इस वक्त हजरत बादशाह बेगम साहबा से कुछ भी मत कहिएगा, वरना फिर शौहर से मुलाकात हो चुकी। बेगम साहबा सुनेंगी कि आपके शौहर भाग गए हैं तो फौरन हुक्म देंगी कि उन्हें पकड़वा मँगाया जाय। शहर भर में शोहरत हो जायगी। कोतवाल के सिपाही जब तक तैयार होंगे तब तक आपके शौहर कहीं भाग निकलेंगे। आप घबड़ाइए मत, मैं पहले पता लगा लूँ।'

'अच्छी बात है।'

'बेगम साहबा, शरबत पानी का कुछ खर्च और बखशीश मिल जाती तो अच्छा होता।'

'कितना हूँ!'

'दस पंद्रह अशर्फियाँ अभी दे दें।'

'मुँहजली, इतने रुपए लेकर करेगी क्या?'

'क्यों? बेगम साहबा को दुआएँ दूँगी; दोस्त के साथ शराब ढालूँगी और गैरहाजिर शौहर को हुजूर के ख्वाबगाह में हाजिर कर दूँगी।'

'पंद्रह अशर्फियों की शराब पी जायगी?

'बेगम साहबा, ये सब बातें आप नहीं समझेंगी, यह आगरा शहर है जिसे लोग कहते हैं दारुलमुल्क आगरा। शाही महल में रहकर कंजूसी से काम नहीं बनेगा। अगर शौहर को वापस बुलवाना चाहती हैं तो दोनों हाथों से अशर्फियाँ लुटाइए।'

'तुझे जितने रुपयों की जरूरत होगी मैं जरूर दूँगी। मगर तू पंद्रह अशर्फियाँ लेकर क्या करेगी?'

'दो अशर्फियाँ साथी को बयाने के तौर पर दूँगी; एक अशर्फी एक फिरंगी गोलंदाज को घूस देकर दस कराबा शराब उतरवाऊँगी जिसमें करीबन दस अशर्फियाँ खर्च होंगी। शहर के और खर्चों के लिये सिर्फ दो अशर्फियाँ बचेंगी।'

युवती ने तातारी औरत को कागज कलम लाने के लिये कहा। कागज आ जाने पर उसने एक पत्र लिखा और बोली—'जामा मसजिद के पास मेरा आमिल नाजिर अहमद खाँ रहता है। उसे यह रुक्का दे देना, वह तुम्हें पंद्रह अशर्फियाँ दे देगा।'

तातारिन ने पत्र लेकर युवती को सलाम किया और बोली—'अब हजरत बादशाह बेगम छुट्टी दे दें तो बस काम बन जाय।'

युवती ने पूछा—'कितने दिनों की छुट्टी चाहिए?'

'एक हफ्ते की।'

'हफ्ते भर तो तेरी शराब ही ढलेगी, मेरे शौहर को ढूँढेगी कब?'

'बेगम साहबा, काल्मक तातार के पेट में जब तक फिरंगी शराब मौजूद रहती है तब तक उसके लिये कुछ भी कर गुजरना नामुमकिन नहीं होता। मगर नशा उतरते ही वह चौपट हो जाता है, कहीं हिलना डुलना भी नहीं चाहता। शराब न मिलने पर न जाने कितने तातार और तातारिनें अफीम खानें लगी हैं।'

'तू काल्मक ही है क्या?'

'नहीं; मैं याकूती हूँ, मगर मेरा साथी काल्मक है।'

इसी समय प्रायः चौदह वर्ष की एक परम सुंदर बालिका जहाँगीरी महल में आई और युवती से बोली—'गुलरुख, अम्माजान तुम्हें ढूँढ़ती फिर रही हैं।'

युवती ने घबराकर कहा—'अभी आई बेगम साहबा; हजरत बादशाह बेगम कहाँ हैं?'

'जोधाबाई महल में हैं।'

युवती और तातारिन जोधाबाई महल की ओर शीघ्रतापूर्वक चली गईं।

———

षोडश परिच्छेद

दीवान-ए-आम

इस घटना के दो तीन दिन बाद एक दिन पूर्वाह्न में अमीनुद्दौला नवाब आसफ खाँ हाथी पर चढ़े दरबारे आम की ओर चले जा रहे थे। आसफ खाँ नूरजहाँ बेगम के भाई और अर्जमंद बानू बेगम के पिता अर्थात् बादशाह शाहजहाँ के श्वसुर और मुगल दरबार के एक विशिष्ट और प्रधान व्यक्ति थे। उनके निजी अश्वारोही सैनिक और पैदल सिपाही उन्हें चारों ओर से घेरकर चल रहे थे। हाथी के पीछे सफेद सिंधी घोड़े पर सवार एक गौरवर्ण युवक धीरे धीरे आगे बढ़ रहा था। जामा मसजिद के पास पहुँचने पर हाथी रुक गया और नवाब उसपर से नीचे उतर आए। मसजिद के सामने ही आगरे के किले का प्रधान प्रवेश-द्वार था। प्रवेशद्वार के पास ही एक पंजहजारी मनसबदार की छावनी थी। इस छावनी के सामने पहुँचने पर बादशाह और शाहजादों के अतिरिक्त शेष सब लोगों को सवारी से नीचे उतर जाना पड़ता था। आसफ खाँ उस युवक को साथ लिए फाटक पर पहुँचे जहाँ एक तूरानी मनसबदार पहरे पर थे। उन्होंने बादशाह के श्वसुर को सलाम करके रास्ता दे दिया। फाटक के ऊपर नौबत बज रही थी क्योंकि बादशाह उस समय दरबार में थे। बादशाह जबतक दरबार किया करते थे तबतक किले

के दिल्ली दरवाजे और अमरसिंह दरवाजे पर नौबत बजती रहती थी। युवक के साथ आसफ खाँ दिल्ली दरवाजे से प्रविष्ट होकर पहले चौक बाजार में पहुँचे। यहाँ प्रति दिन प्रातःकाल बाजार लगता था और संध्या तक क्रय विक्रय चलता रहता था। बहुमूल्य मणि मुक्ता और दूर देशों से लाई हुई मूल्यवान् सामग्री का ही यहाँ क्रय विक्रय होता था। अमीर उमरा के अतिरिक्त और कोई इस बाजार में नहीं आ पाता था। बाजार की सजावट देखकर युवक के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। पहले चौक से आगे बढ़कर आसफ खाँ और युवक दूसरे चौक में पहुँचे। इस चौक के बीचोबीच लाल पत्थर का रास्ता बना हुआ था जिसके दोनों ओर मुगल, अफगान, ईरानी, तातार, राजपूत और फिरंगी सेनाएँ पंक्तिबद्ध खड़ी थीं। नंगी तलवारें हाथ में लिए मनसबदार लोग सेनाओं की पंक्तियों में रास्ता बना रहे थे। आसफ खाँ को देखते ही मनसबदारों ने दो पग पीछे हटकर सलाम किया। जो उच्च पदस्थ राज्याधिकारी थे, उन्होंने पास आकर आसफ खाँ से बातें कीं। सबसे यथा-योग्य अभिवादन संभाषण करते हुए बादशाह के श्वसुर तीसरे चौक में पहुँचे। चौक के सामने आमेर और जोधपुर की राजपूती सेना प्रतीक्षा कर रही थी। दोपहर की नौबत बजते ही दीवान-ए-आम और महल-सरा की सुरक्षा का दायित्व इन्हें सँभालना था।

तीसरे चौक के दाहिनी ओर सफेद संगमरमर द्वारा निर्मित विशाल मोती मसजिद और बाईं ओर लाल पत्थर की बनी आगरे की टकसाल के सामने श्वेत और रक्तवर्ण पत्थरों का बना गगनचुंबी नक्कारखाना था जिसपर शाही नौबत बज रही थी। नक्कारखाने के फाटक के भीतर झुंड के झुंड हाथी खड़े थे। आज एक हजार हाथी बादशाह की सलामी उतारनेवाले थे। नक्कारखाने की फर्श और दीवान-ए-आम का सारा रास्ता दूध की भाँति स्वच्छ संगमरमर का बना था। सामान्य' व्यक्ति

तो वहाँ पाँव धरते भी सहमते थे। नक्कारखाने के सामने बहुतेरे नौकर चाकर दरबारियों की जूतियों की सुरक्षा पर तैनात थे। इस स्थान के आगे बादशाह और शाहजादों के अलावा और कोई जूता पहनकर नहीं जाने पाता था। दसहजारी मनसबदार अमीनुद्दौला आसफ खाँ को भी सामान्य उमरा वर्ग की भाँति नक्कारखाने पर जूतियाँ उतारते देख युवक को अत्यंत विस्मय हुआ।

नक्कारखाने के सामने चौकी खास के मनसबदार आसफ खाँ के पुत्र शाइस्ता खाँ खड़े थे। उन्होंने अपने पिता का अभिवादन किया। यथोचित उत्तर देते हुए आसफ खाँ आगे बढ़े। इसी समय एक हजार हाथियों ने सूँड़ उठा उठाकर बादशाह की सलामी उतारी। युवक यह दृश्य देखकर आश्चर्य से अभिभूत हो गया। नक्कारखाने के आगे लाल पत्थरों का बना प्रशस्त चौक था जिसके चारों ओर सँकरा बरामदा खिंचा था। प्रत्येक ओर के बरामदे में हजार हजार हाथ की दूरी पर एक एक बारहदरी बनी थी। ये मनसबदारों की कचहरियाँ थीं। जो मनसबदार बादशाह की सेवा में उपस्थित रहा करते थे उनकी सेना तो किले के बाहर रहती थी लेकिन स्वयं उन्हें सारे दिन दीवान-ए-आम के चौक में हाजिर रहना पड़ता था। चौक के बरामदे में प्रत्येक मनसबदार को एक एक खिलस मिलता था और उन्हें दिन भर अपने अपने अनुचर वर्ग के सहित वहाँ उपस्थित रहना पड़ता था। पंजहजारी मनसबदार से नीचे दर्जे का कोई पदाधिकारी आगरा या दिल्ली के किले में पहरेदारी का अधिकार नहीं पाता था। छःहजारी, सातहजारी और दसहजारी मनसबदारों को बारहदरी में स्थान दिया जाता था।

बादशाह की सलामी उतारने के बाद एक हजार हाथियों का दल जब अमरसिंह दरवाजे के रास्ते बाहर चला गया तब नक्कारखानेवाले फाटक के रास्ते से एक हजार ऊँटों का दल भीतर आने लगा। उसी

समय आसफ खाँ युवक को साथ लिए आगे बढ़े। चौक के मध्यवर्ती भाग में ताँबे की बनी रेलिंग लगी हुई थी जिसके एक ओर लाल पत्थर का बना दीवान-ए-आम था और दूसरी ओर नागरिकों के लिये स्थान बना हुआ था। ताँबे की रेलिंग के सामने पाँच सौ हाथ चौड़ा प्रशस्त स्थान था जिसमें एक ओर घुड़सवार और दूसरी ओर पैदल सेना के सिपाही खड़े थे। चौकी खास के मनसबदार प्रतिदिन दोपहर पर्यंत पाँच हजार अश्वारोही और पाँच हजार पैदल सिपाही लेकर दिल्लीश्वर के दरबार-ए-आम में शांतिरक्षा के निमित्त नियुक्त रहते थे। किले के बाहर पचास हजार अश्वारोही और एक लाख पैदल सैनिक नित्य सुसज्जित रहा करते थे। ताँबे की रेलिंग के दूसरी ओर बादशाह के अंगरक्षक एक सौ अहदी सफेद पोशाक पहने पंक्तिबद्ध खड़े थे। दरबार-ए-आम के सिंहासन के सामने एक चौड़ा मार्ग था जिसके दोनों ओर निम्नपदस्थ उमरा और मनसबदार वर्ग के लोग खड़े थे।

अहदियों के सेनापति ने आसफ खाँ का अभिवादन करने के उपरांत युवक का परिचय पूछा। आसफ खाँ के उत्तर दे देने पर उसने पुनः अभिवादन किया। आसफ खाँ आगे बढ़े। दीवान-ए-आम के सामने तीन सीढ़ियाँ थीं। सीढ़ियों के नीचे खड़े होकर आसफ खाँ ने जमीन छूकर तीन बार सलाम किया। सीढ़ियों के ऊपर खुला हुआ चबूतरा था, जहाँ छोटे मोटे राजे रजवाड़े और जमींदार तथा सूबेदार लोग खड़े थे। उनके चारों ओर एक हजार अहदी सेना पहरे पर थी। सेनानायक को युवक का परिचय देकर आसफ खाँ दीवान-ए-आम के संमुख उपस्थित हुए। दीवान-ए-आम में तीन श्रेणियाँ थीं। पहली श्रेणी में दसहजारी मनसबदार और सूबेदार लोग थे। यहाँ चाँदी की बनी रेलिंग लगी हुई थी। दूसरी श्रेणी में मुख्य मुख्य हिंदू राजा, वजीर, बख्शी, सिपहसालार, खानसामा, सदर-उस्-सदूर, काजी-उल्-कुद्दत और प्रमुख सूबेदारों के

स्थान थे। यहाँ सोने की रेलिंग लगी हुई थी। तीसरी श्रेणी में बादशाह के चिरंजीवी, जामाता और अन्य आत्मीयगण के लिये स्थान था। इसके चारों ओर आसा सोटा, माही मरातिबबरदार लोग खड़े थे। युवक को दीवान-ए-आम के बाहर ही खड़ा करके आसफ खाँ ने दरबार के भीतर प्रवेश किया। नकीब ने हाँक लगाई और अर्जबेग ने उनका नामोच्चारण किया। आसफ खाँ ने सोने की रेलिंग के सामने खड़े होकर तीन बार कोर्निश की। सिंहासन पर बैठे बादशाह ने यथोचित रीति से अभिवादन ग्रहण किया। आसफ खाँ सिंहासन के नीचे जाकर खड़े हो गए।

एक एक सहस्र सुसज्जित साड़नियाँ और घोड़े बादशाह की सलामी उतारने के बाद जब बाहर चले गए तब चौकी खास के मनसबदार की सेना बादशाह के सामने उपस्थित हुई और अभिवादन के उपरांत अपने स्थान पर वापस चली गई। तदनंतर दल के दल अश्वारोही और पैदल सैनिक नक्कारखाने के मार्ग से बादशाह की सलामी के लिये आने लगे। पचास हजार अश्वारोही और एक लाख पैदल सैनिकों के आने जाने में काफी समय लग गया। इस बीच बादशाह अर्जियाँ सुनते रहे।

सारी सेना ने जब सलामी उतार ली तब नक्कारों का बजना बंद हुआ। तत्क्षण आसफ खाँ ने बादशाह से धीरे से कुछ कहा। बादशाह ने स्वीकृति दे दी। एक चोपदार युवक को चाँदी की रेलिंग के पास ले आया। युवक ने भी आसफ खाँ की तरह ही बादशाह का अभिवादन किया।

बादशाह ने जिज्ञासा की—'यह नौजवान कौन है?'

आसफ खाँ ने सलाम करके उत्तर दिया—'इसका नाम मयूख है। इसके वालिद देवेंद्रनारायण सूबा बंगाल के जमींदार थे। जन्नतमकानी

नूरुद्दीन जहाँगीर बादशाह की अमलदारी में इसके वालिद ने तख्त की बहुत खिदमत की थी।'

बादशाह ने हँसते हुए कहा—'मुझे याद है। मैं जब बागी हो गया था, तब उड़ीसा और अकबराबाद में इसके वालिद ने मेरे साथ जंग की थी।'

'शाहंशाह के हुक्म के मुताबिक ही देवेंद्रनारायण ने शाहजादा खुर्रम के खिलाफ तलवार उठाई थी। उम्मीद है, शहरउद्दीन मुहम्मद शाह-जहाँ बादशाह लाजी साहिबी किरानिमानी इसे कुसूरवार न समझेंगे।'

इसी समय तीसरी श्रेणी से इफ्तिखार-उल्-मुल्क असद खाँ और दूसरी श्रेणी से मुनीरउद्दौला शाहनवाज खाँ ने सलाम किया। दीवान-ए-आम की प्रथा के अनुसार नकीब ने हाँक लगाई—'रौशन-उल्-मुल्क मुनीरुद्दौला शाहनवाज खाँ हैबतजंग हजरत अलाली।'

बादशाह ने शाहनवाज खाँ की ओर देखा। वृद्ध नवाब ने पुनः अभिवादन किया और बोले—'शाहंशाह, फिरंगियों ने जिस वक्त सातगाँव के शाही बंदरगाह पर हमला किया उस समय इस काफिर नौजवान ने ही उसे बचाया था।'

बादशाह ने असद खाँ की ओर नजर घुमाई और नकीब की हाँक लगी—'इफ्तिखार-उल्-मुल्क सैफुद्दौला अमीरुलबहर असद खाँ शमशेर जहाँगीरी।'

असद खाँ ने अभिवादन किया और कहा—'जहाँपनाह, सूबेदार मुकर्रम खाँ की अमलदारी में फिरंगियों के साथ जो लड़ाई सातगाँव में हुई थी, उसका दास्तान बंदा पहले ही अर्ज कर चुका है। फिरंगियों के गोले के डर से कलीमुल्ला खाँ जब भाग गया तब इसी जवान ने सात-गाँव के एक सेठ की फौज की मदद से बंदरगाह की हिफाजत की थी।'

बादशाह ने पूछा—'सूरत के फिरंगियों का वकील हाजिर है?'

वजीर साहब ने कहा—'जनाब आली, अँगरेज फिरंगियों का वकील नक्कारखाने में हाजिर है। हुक्म हो तो दीवात-ए-आम में हाजिर किया जाय।'

'नवाब शाहनवाज खाँ, असद खाँ और फिरंगी वकील को गुसलखाने में लाया जाय। नवाब साहब के साथ जो काफिर फकीर आया था, वह क्या वापस चला गया?'

'शाहंशाह बादशाह के हुक्म के मुताबिक वह फकीर मथुरा में मुकाम कर रहा है।'

'उसे तलब किया जाय। नवाब असद खाँ साहब, अमीनुद्दौला और देवेंद्रनारायण का लड़का दीवान-ए-खास में हाजिर हों।'

बादशाह तख्त से उठ गए। तत्क्षण नक्कारे पर चोटें पड़ने लगीं और दरबार बर्खास्त कर दिया गया।

———

सप्तदश परिच्छेद

मथुरा का पुरोहित

उसी दिन तीसरे पहर पसीने से लथपथ मयूख ने सिंकदरपुर मुहल्ले के एक छोटे से मकान का दरवाजा खटखटाया। भीतर से श्रीकंठ द्वारा प्रश्न हुआ—'कौन है?'

'मैं हूँ, दरवाजा खोलो।'

पुनः बँगला में प्रश्न हुआ—'मैं कौन?'

'मैं हूँ मयूख, डरो मत, दरवाजा खोल दो।'

तब जाकर किवाड़ खुले और मयूख ने भीतर प्रवेश किया। किवाड़ के पास विनोदिनी खड़ी थी। उसने पूछा—'क्या हुआ बेटा?'

'दीवान-ए-आम में गया था। बादशाह ने दीवान-ए-खास में आने की आज्ञा दी है। शाम को जाऊँगा।'

'मैंने गोविंद जी की पूजा मान रखी है। बेटा, बादशाह बेगम की बाँदी आई थी। आज शाम को मथुरा से बंगाली पुरोहित आएँगे। कल अधिवास[1] और परसों विवाह है।

---

[1] बंगाल में प्रचलित वैवाहिक कृत्यों के अंतर्गत एक पूजन संस्कार जो विवाह के एक दिन पहले किया जाता है।—अनु०।

ललिता भी दरवाजे के पास खड़ी दरबार का हालचाल सुन रही थी। विवाह की बात सुनते ही उठकर भागी। मयूख हाथ मुँह धोकर निश्चिंत बैठे तो विनोदिनी ने पूछा—'बेटा, कैसी आशा है ?'

'माँ जी, जान पड़ता है, अभाग्य पीछा छोड़ रहा है। इतने दिनों तक असद खाँ को ढूँढता खोजता मर मिटा, मगर आज देखता हूँ कि वे दीवान-ए-आम में ही उपस्थित हैं।'

'कल दीवान हरेकृष्ण राय भी आनेवाले हैं।'

मयूख जिस समय घर के भीतर प्रविष्ट हुए थे उस समय एक लंबा चौड़ा कालमक तातार और बुरका पहने एक मुसलमान औरत दरवाजे पर रुकी थी। कालमक दूर ही रहा, और स्त्री दरवाजे के पास कान लगाकर भीतर की आहट लेने लगी। थोड़ी देर बाद कालमक ने पूछा—'क्या सुनाई दिया ?'

'बंगाल मुल्क की जबान है, कुछ समझ में नहीं आ रहा है।'

'मर्द का नाम क्या है ?'

'अरे मर ! वही तो सुन रही हूँ। शराब की शीशी इधर ला।'

'और पिएगी तो लेट जायगी। सिपाही कोतवाली में धर ले जायँगे।'

राजधानी के भीड़ भरे मार्ग पर बहुत से लोग आ जा रहे थे। छोटे से मकान के सामने सशस्त्र कालमक को देखकर किसी किसी को आश्चर्य हुआ लेकिन उसके साथ तातार स्त्री को भी देखकर किसी ने संदेह नहीं किया। इसी समय मयूख से विनोदिनी ने पूछा—'मयूख, दीवान-ए-खास में तुम्हें कब जाना है ?'

मयूख बोले—'शाम के बाद'

यह सुनते ही दरवाजे के बाहरवाली औरत बोल उठी—'दोस्त, शीशी जल्द इधर करो।'

कालमक ने पूछा—'क्यों ?'

'मुगल बादशाहों के महलसरा की नौकरी, मुल्के बंगाल की जबान और रेगिस्तान, ये तीनों एक जैसे होते हैं।'

'अरी, कुछ समझ पाई या नहीं ?'

'नाम सुनाई पड़ा है।'

'क्या है ?'

'महुक्।'

'ठीक ठीक सुना है न ?'

'बिलकुल ठीक है; तू शीशी तो निकाल।'

'अब यहाँ और खड़े रहने का काम नहीं है, सड़क पर चली आ।'

कालमक और तातारिन घर का दरवाजा छोड़ आगे बढ़ गए। संध्या समय जब मयूख घर से चले तब थोड़ी दूर पर छिपे हुए कालमक ने उन्हें देखा और दूर ही रहते हुए उनका पीछा करने लगा। प्रायः दो घड़ी बाद लौटकर कालमक ने घर का दरवाजा खटखटाया। भीतर से पूछा गया—'कौन है ?'

कालमक बोला—'मैं हूँ।'

भीतर से विनोदिनी पूछताछ कर रही थी। कंठस्वर सुन उसे संदेह हुआ। उसने दरवाजे के पास आकर पुनः पूछा—'कौन है भाई ?'

कालमक ने कहा—'मैं हूँ।'

विनोदिनी चिढ़ गई, बोली—'तू है कौन रे ?'

कालमक ने हिम्मत बाँधकर कहा—'मैं महुक् हूँ।'

विनोदिनी दबे पैर लौट गई और ललिता से बोली—'सुनती है ललिता, कोई चोर है। तू सड़े गोबरवाली 'हाँड़ी लेकर ऊपर चली जा, मैं ज्यों ही दरवाजा खोलूँ, हाँड़ी उसके सर पर दे मारना।'

ललिता गोबर की हाँड़ी लेकर चली गई। विनोदिनी ने गोठ बुहारनेवाली पुरानी झाड़ू ले ली और दरवाजा खोल दिया। ठीक उसी समय ललिता ने बहुत दिनों से इकट्ठा किए गए सड़े और दुर्गंधमय गोबरवाली हाँड़ी कालमक के सिर पर पटक दी। उसकी आँख, मुँह, नाक में वह सड़ा गोबर भर गया। ऊपर विनोदिनी की झाड़ू पीठ पर सटासट पड़ने लगी। कालमक मैदान छोड़कर उलटे पैर भाग खड़ा हुआ।

मयूख के घर से थोड़ी दूर पर कालमक की साथिन प्रतीक्षा कर रही थी। कालमक के पास पहुँचते ही मारे बदबू के वह घबरा उठी। नाक पर रूमाल दाबकर बोली—'यह सड़ी हुई बू कहाँ से ले आया? नाबदान में गिर पड़ा था क्या?'

कालमक 'आक् थू! आक् थू' करता हुआ बोला—'बंगालिन बीबी ने मुहब्बत जताई है, मुल्के बंगाल का एकदम निखालिस इत्र उड़ेल दिया!'

दुर्गंध सहन न कर सकने के कारण तातारिन हटकर अलग जा खड़ी हुई और बोली—'तो तू लौट जा अपनी बंगालिन बीबी के पास, मेरे पास फटका तो जूतियाँ खाएगा।'

कालमक ने रूमाल से गोबर पोंछते पोंछते कहा—'यही तो बात है प्यारी! मौका हाथ से जाता रहा। सोचा था, दरवाजा खुलते ही घर में घुसकर दोनों औरतों को बाँध डालूँगा और रात में जब वह आदमी वापस लौटेगा तो उसे पकड़कर बेखटक जहाँ चाहूँगा ले जाऊँगा। क्या करूँ अब?'

इसी समय एक अहदी, महलसरा की एक बाँदी और एक बंगाली ब्राह्मण मयूख के घर के दरवाजे पर पहुँचे। अहदी ने दरवाजे पर

दस्तक दी। भीतर विनोदिनी तैयार बैठी थी। बोली—'फिर लौट आया ?'

अहदी हिंदू राजपूत था; हिंदी में बोला—'माता जी, मैं हजरत बादशाह बेगम के यहाँ से आ रहा हूँ। वृंदावन से पुरोहित जी आए हैं।'

भीतर से विनोदिनी ने कहा—'तुम कोई भी हो, अभी रुके रहो; मेरा बेटा बाहर गया है, उसके आए बिना दरवाजा नहीं खोलूँगी।'

रात अधिक होते देख पुरोहित जी ने कहा—'माँ जी, आप बिलकुल न डरें; मैं बंगाली ब्राह्मण हूँ। रात बहुत हो गई है। दरवाजा खोल दें।'

बादशाह बेगम की बाँदी ने भी विश्वास दिलाया। तब कहीं विनोदिनी ने दरवाजा खोला।

अहदी ने दरवाजे पर खड़े खड़े ही पूछा—'माता जी, आपके बेटे कहाँ गए हैं ?'

विनोदिनी ने कहा—'दीवान-ए-खास में।'

कालमक पास ही अँधेरे में छिपा था। इतनी बात सुनकर वह वहाँ से चल पड़ा। थोड़ी दूर हटकर एक वृक्ष के नीचे उसकी साथिन खड़ी थी। उसके पास पहुँचकर वह बोला—'काम बन गया।'

तातारिन ने पूछा—'क्या हुआ ?'

'शराब कितनी बची है ?'

'दो शीशी।'

'एक मुझे दे।'

'क्यों दूँ ? पहले बता तो ?'

'बस, काम बन गया।'

'कौन सा काम बना, बोल तो सही !'

'आदमी का पता चल गया।'

'क्या पता चला?'

'वह दरबार-ए-खास में गया है।

'तो अब देर करने का काम नहीं है। तू अगर और पिएगा तो फिर चल नहीं पाएगा। इस वक्त चला चल, अमरसिंह दरवाजे पर छिप रहना।'

उस समय घर के भीतर विनोदिनी मथुरा के पुरोहित जी का स्वागत सत्कार कर रही थी। उसने आसन बिछा दिया। पुरोहित जी विराजमान हो गए। तत्क्षण ललिता पगली की तरह दौड़कर वृद्ध ब्राह्मण के पैरों पर गिर पड़ी। वह मात्र इतना ही बोल सकी—'तर्करत्न काका!'

तत्पश्चात् वह अचेत हो गई।

अष्टदश परिच्छेद

दीवान-ए-खास

बादशाह जब आगरे में रहते थे तब प्रतिदिन आगरे का दुर्ग और प्रासादसमूह प्रतिदिन विविध वर्णों की दीपमालाओं से सजाया जाता था। सुगंधित तेल के लाखों दीपक शीशे की रंगबिरंगी हाँडियों में जला करते थे। स्वच्छ संगमरमर के जलाशयों में रंगबिरंगे सुगंधित जल के सैकड़ों फव्वारे छूटते रहते थे। फव्वारों के चारों ओर और संगमरमर के कुंडों के चतुर्दिक् छोटे छोटे असंख्य दीपाधार सुसज्जित रहते थे जिनकी उज्वल आलोकराशि से सारा जल प्रकाशित होता रहता था।

संध्या के ठीक बाद जिस समय मयूख ने आगरे के किले के भीतर पैर रखा उस समय समस्त दीपमालाएँ आलोकित हो चुकी थीं। फाटक पर आसफ खाँ का एक अनुचर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उनके पहुँचते ही वह व्यक्ति उन्हें किले के भीतर लिवा ले गया। आसफ खाँ की मुद्रा से युक्त पत्र देखकर प्रहरियों ने उन्हें रास्ता दे दिया।

पहला, दूसरा और तीसरा चौक उस समय जनशून्य हो चुका था। मोती मस्जिद, टकसाल और नक्कारखाना भी जनशून्य था। दीवान-ए-आम का प्रशस्त चबूतरा तक एकदम जनशून्य था। चबूतरे के चारों

ओर बनी मनसबदारों की कचहरियों में बहुतेरे दीपक जल रहे थे क्योंकि दो चार मनसबदार तब तक बख्शी की आज्ञा की प्रतीक्षा में रुके हुए थे। मयूख और उनके साथ का व्यक्ति नक्कारखाने से होकर, पश्चिम की ओर जाकर, दीवान-ए-आम के बाईं ओर बने एक छोटे से दरवाजे के भीतर प्रविष्ट हुए। इस दरवाजे के भीतर नंगी तलवार हाथ में लिए एक हब्शी खोजा पहरा दे रहा था। आसफ खाँ के अनुचर ने उसे वजीर की मुद्रा से युक्त पत्र दिखाया और उसने रास्ता छोड़ दिया। दरवाजे के बाद सीढ़ियाँ थीं जिनपर होकर मयूख ऊपर चढ़े। सामने लाल पत्थर का बना दोतल्ला मकान था जिसमें अनेक चोपदार, हरकारे, खोजे और बाँदियाँ प्रतीक्षा कर रही थीं। मयूख और उनका साथी यह महल पारकर दीवान-ए-खास के चबूतरे पर उपस्थित हुए। चबूतरे पर बने दरवाजे पर चौकी खास के दारोगा शाइस्ता खाँ उपस्थित थे। मयूख को उनके पास तक पहुँचाकर उनके साथ का व्यक्ति लौट आया।

शाइस्ता खाँ ने मयूख को आपादमस्तक निरीक्षण करके एक खोजा को संकेत किया। खोजा मयूख को साथ लेकर दीवान-ए-खास के भीतर प्रविष्ट हुआ। आगरा के किले के पानी दरवाजे के पीछे श्वेत संगमरमर की बनी बड़ी लंबी चौड़ी एक छत है। इसके एक ओर संगमूसा का और दूसरी ओर संगमरमर का बना एक एक सुखासन है छत के उत्तर की ओर श्वेत संगमरमर द्वारा निर्मित एक छोटे से महल में दीवान-ए-खास है। इस छोटे से महल की प्राचीर में चित्रांकन के निमित्त जितने बहुमूल्य प्रस्तर और मणिमुक्ताओं का उपयोग किया गया था, लोग कहते थे कि उनके मूल्य से एक दूसरा आगरा शहर बनवाया जा सकता था।

बादशाह अभी आए नहीं थे। दीवान-ए-खास के समक्ष वजीर

आसफ खाँ मीरबख्शी नूरुल्ला खाँ के साथ परामर्श कर रहे थे। मयूख आसफ खाँ को अभिवादन करके प्राचीर में बने चित्र देखने लगे।

पन्ने का बना मोर चुन्नी और पोखराज की बनी अपनी पूँछ फैलाए मोतियों के बने अंगूर के गुच्छों पर चोंच मार रहा था।

रत्नों द्वारा निर्मित ये चित्र अब नहीं रहे। बहुत दिन हुए, दस्युराज सूरजमल जाट इन्हें लूट ले गया। मयूख चित्र देख ही रहे थे कि एक व्यक्ति ने उनके कंधे पर हाथ रखा। घूमकर उन्होंने देखा कि उनके पीछे असद खाँ खड़े हैं। असद खाँ ने उन्हें छाती से लगा लिया और बोले—'मयूख, तुम देवेंद्रनारायण से लड़के हो, जिन्होंने मेरे प्राणों की रक्षा की थी। बहुत दिनों बाद तुम्हें देखकर बड़ी खुशी हुई। अब आगे तुम्हारा क्या करने का इरादा है?'

'बादशाह की सेवा करने का कोई अवसर मिला तो उसे स्वीकार कर लेना चाहता हूँ।

'इतने दिनों तक कहाँ रहे?'

सातगाँववाली लड़ाई के बाद मयूख पर जो कुछ बीती थी वह सब, जितना वे जानते थे, सुना गए। असद खाँ ने तब जिज्ञासा की—'आगरा आए तुम्हें कितने दिन हुए?'

'लगभग तीन बरस।'

'इतने दिनों तक करते क्या रहे?'

'रोजी रोटी का उपाय ढूँढता रहा। बादशाही दरबार के किन्हीं उपयुक्त सज्जन से परिचय न होने के कारण अब तक कुछ कर नहीं सका था।'

'आज उसी सिलसिले में आना हुआ है?'

'वह वैष्णवी बादशाह बेगम को सुईकारी का काम सिखाने जाती

है। उन्होंने मेरे बारे में नवाब आसफ खाँ को लिखा था, इसलिये वे स्वयं मुझे यहाँ लिवा लाए हैं।

'फिरंगी बेड़े को खत्म करने की तरकीब खुदाताला ने आज खुद कर दी है। नए फिरंगियों की मदद से मैं पुराने फिरंगियों का खात्मा कर दूँगा।'

मयूख विस्मित होकर असद खाँ का मुँह देखने लगे। सहसा नक्कार-खाने में नगाड़े बजने लगे। असद खाँ घूमकर सीधे खड़े हो गए। मयूख ने देखा कि दीवान-ए-खास के पीछे बना सोने का एक दरवाजा खुल गया और हाथीदाँत के बने एक छोटे से तामजाम पर बैठे हुए बादशाह सलामत आ रहे हैं। समवेत सभासदों ने तीन बार भूमिस्पर्श कर जिस रीति से उनका अभिवादन किया, मयूख ने भी उसका अनुकरण किया। बादशाह के बैठ जाने पर वजीर आसफ खाँ, बख्शी नूरुल्ला खाँ, असद खाँ, शाहनवाज खाँ आदि सभासदगण सिंहासन के अगल बगल खड़े रहे। सबसे पहले आसफ खाँ ने मयूख को बादशाह सलामत के रू-ब-रू पेश किया।

बादशाह शाहजहाँ ने हर्षित मन से कहा—'बंगाली बहादुर, तुम्हारी बात भूला नहीं हूँ, लेकिन पहले फिरंगियों की बाबत......।'

आसफ खाँ ने विषण्ण भाव से कहा—'हुजूर, यह नौजवान आगरा शहर में तीन बरस से बेकार बैठा है। इसके वालिद ने जन्नत-मकानी जहाँगीर के जमाने में सरकार की बहुत खिदमत की थी...।'

'आज ही इसका इंतजाम होगा। फिरंगियों का वकील कहाँ है?'

'हाजिर है।'

थोड़ी देर में शाइस्ता खाँ ने एक वयस्क फिरंगी के साथ दीवान-ए-खास में प्रवेश किया। फिरंगी ने जमीन चूमकर बादशाह का अभिवादन किया।

वजीर आसफ खाँ ने जिज्ञासा की—'फिरंगी, तुम्हारा क्या नाम है?'

फिरंगी ने पुनः अभिवादन किया और बोला—'मेरा नाम वाइल्ड है। मैं सूरत बंदर की अँगरेजी कंपनी का मुखिया हूँ।'

'तुम लोगों से क्या पुर्तगाली फिरंगियों की दुश्मनी है?'

'हुजूर!'

'तुम लोग ईसाई हो न?'

'हुजूर, मगर पुर्तगालियों जैसा नहीं।'

'अगर शाहंशाह बादशाह के हुक्म की तामील करोगे तो तुम्हारी मुरादें पूरी होंगी।'

बादशाह ने जिज्ञासा की—'असद खाँ, सातगाँव में फिरंगियों से तुम्हारा झगड़ा क्यों हुआ था?'

'जहाँपनाह, एक काफिर ने पादरी के यहाँ से भागकर शाही बंदर में पनाह ली थी। पादरी इस कोशिश में था कि फिरंगी सिपाहियों की मदद से उसे फिर पकड़ ले जाय। मैंने उसे रोका था, इसलिये उसने मुझपर भी हमला कर दिया। उस दिन देवेंद्रनारायण के इस बेटे ने ही मेरी जान बचाई थी। फिरंगी उसे पकड़ नहीं पाए थे, इसी वजह से उनकी फौज ने रात में बंदरगाह पर हमला कर दिया और बड़ी लूट खसोट की। उस वक्त भी इसी नौजवान ने सातगाँव की हिफाजत की थी।'

'आप उसी रात फिरंगियों से लड़े थे?'

'हुजूर! नवाब शाहनवाज खाँ भी उस रात मौजूद थे।'

शाहनवाज खाँ आगे बढ़ आए। आसफ खाँ ने जिज्ञासा की—'फिरंगियों के हंगामेवाले दिन आप क्या सातगाँव मे ही थे?'

'जी हाँ; मुझे और मेरी पतोहू को उसी रात फिरंगियों ने कैद कर लिया था। सातगाँव के सेठ गोकुलविहारी के हमले पर फिरंगियों के

पैर उखड़ गए और वे भाग निकले। दूसरे दिन सातगाँव में ही फिरंगियों ने मेरा बजड़ा छीन लिया और मुझे, मेरी पतोहू को और मेरे यहाँ रहनेवाली एक और लड़की को पकड़कर हुगली ले गए। फिरंगी अमीर-उल्-बहर डिसूजा ने मिहरबानी करके हमें छोड़ दिया।'

आसफ खाँ ने फिरंगी वकील से कहा—'सुना आपने?'

'सुना।'

सहसा असद खाँ बादशाह की ओर थोड़ा अग्रसर हुए और अभिवादन करके बोले—'शाहंशाह बादशाह की इजाजत हो तो यह खादिम कुछ अर्ज करे।'

बादशाह ने सिर हिलाकर अनुमति दी। तब असद खाँ ने वृद्ध वजीर आसफ खाँ से कहाँ—'जनाबमन, अँगरेज सौदागरों के वकील ने सारी दास्तान सुनी है। नवाब शाहनवाज खाँ हिंदुस्तान के एक मशहूर उमरा हैं। मैं भी बादशाह का खादिम हूँ। अदने फिरंगी बनिए जब हम लोगों पर इतना जुल्म ढा सकते हैं, तो सूबा बंगाल की लाखों गरीब रिआया के साथ उनका बरताव कैसा होता होगा, इसे आसानी से सोचा जा सकता है। मेरे पास दो दो गवाह हैं।'

बादशाह अब तक चुपचाप थे। अकस्मात् वे सिंहासन से उठ खड़े हुए। उनके मस्तक पर से रत्नजटित मुकुट लुढ़ककर दूर जा गिरा। अत्यंत क्रुद्ध होकर वे बोले—'असद खाँ, गवाह पेश करने के कोई जरूरत नहीं है। मैं जिस वक्त शाहजादा था, मुझे बेसहारा जान इन्हीं फिरंगियों ने मेरे तमाम नौकर चाकरों को कैद करके मेरी और मेरी बेगम की बड़ी बेइज्जती की थी। बादशाह होने पर भी मैं उन्हें छुड़ा नहीं सका।'

बादशाह का क्रोध देखकर असद खाँ डरकर पीछे हट गए। बादशाह आगे कहने लगे—'पुर्तगाली फिरंगियों ने अब्बाजान को यह

समझाया था कि शाहजादा खुर्रम उनके खिलाफ पुर्तगालियों की मदद चाहते थे। मदद न मिलने की वजह से झूठी तोहमत लगा रहे हैं। बादशाह बेगम की दो बाँदियाँ आज तक सातगाँव में कैद हैं। जल्द ही इन पुर्तगाली बनियों का गरूर चूर करूँगा। वाइल्ड, तुम मेरी मदद कर सकते हो?'

'जो हुक्म, जहाँपनाह!'

'पुर्तगालियों का जहाज देखते ही पकड़ लेना होगा। उनके माल असबाब को देखते ही लूट लेना होगा। ऐसा कर सको तो सूबा बंगाल और उड़ीसा में अपनी कोठी खोल सकते हो।'

सूरत बंदर की अँगरेजी कंपनी के मुखिया ने संमानसहित अभिवादन करके कहा—'शाही फरमान पाने पर ऐसा ही करूँगा।'

'फरमान कल सुबह पा जाओगे।'

उन दिनों अँगरेजी कंपनी पुर्तगालियों की प्रतिद्वंद्वी थी। अरब सागर, फारस की खाड़ी और सूरत बंदरगाह में अँगरेज व्यापारियों और पुर्तगालियों के बीच कई छोटी मोटी लड़ाइयाँ हो चुकी थीं। बादशाह के मुँह से यह अप्रत्याशित शुभ समाचार सुनकर वाइल्ड ने उल्लसित भाव से तीन बार जमीन चूम चूमकर अभिवादन किया।

बादशाह वजीर से बोले—'फिरंगियों को काबू में लाना फिदा खाँ के बस का नहीं। कल कासिम खाँ को तलब कीजिएगा। देवेंद्रनारायण के लड़के को एकहजारी मनसब बख्शी जायगी।'

सभी लोगों ने अभिवादन किया। तामजाम आ गया और बादशाह उसपर सवार होकर रंगमहल की ओर चले गए।

मयूख जिस समय घर लौट रहे थे, उस समय अँधेरे में किसी ने

उनके सिर पर गहरी चोट की और वे अचेत होकर गिर पड़े। एक पुरुष और एक स्त्री ने उन्हें उठाकर एक छोटी सी डोंगी पर रखा और यमुना से लेकर पानी दरवाजे की राह किले के भीतर ले गए। अँधेरे में छिपा और एक व्यक्ति मयूख की गतिविधि पर लक्ष्य किए हुए था। डोंगी जब पानी दरवाजे के भीतर चली गई तब वह शहर की ओर वजीर आसफ खाँ को यह समाचार देने अग्रसर हुआ।

ऊनविंश परिच्छेद

गुप्त मार्ग में

चेतना लौटने पर मयूख ने देखा कि वे एक संकीर्ण कक्ष में बहुमूल्य शैया पर लिटाए गए हैं। कमरा दो हाथ से अधिक चौड़ा नहीं था, किंतु उसकी लंबाई अत्यधिक थी। उस संकीर्ण स्थान के धुँधले प्रकाश में मयूख ने देखा कि उनके सिरहाने एक भयंकर स्त्री बैठी हुई है। उसकी नाक नहीं जैसी थी। दोनों आँखें भी अत्यंत छोटी छोटी और भीतर धँसी हुई थीं। शरीर का रंग पीलापन लिए हुए था। उनकी चेतना लौटी देख वह स्त्री उनकी शैया के पास आ गई। मयूख ने देखा उसकी कमर में बड़ी सी तलवार लटक रही है। स्त्री तातारिन थी। उन दिनों विभिन्न जातियों की तातार स्त्रियों के अतिरिक्त और किसी जाति की स्त्रियाँ मुगल बादशाहों के अंतःपुर में पहरेदारी के पद पर नियुक्त नहीं की जाती थीं। कई वर्षों से आगरा में रहने के कारण मयूख तातारियों को पहचानते थे। वे डर के मारे काँपने लगे। वे जानते थे कि तातारियों के लिये कोई भी कार्य असाध्य नहीं है।

पास आकर तातारिन बोली—'जाग गया? बड़ी तेज चोट लगी थी न? तो, थोड़ी शराब पी ले।'

उसने अपनी जेब से चमड़े की एक कुप्पी निकाली। उसके मुँह से शराब की तीखी गंध आ रही थी। स्नान के अभाव में होनेवाली शरीर

की दुर्गंध के साथ मिली हुई शराब की तीखी गंध के कारण मयूख का सिर भन्ना गया। मयूख ने अपना मुँह फेर लिया। तातारिन यह देख हँसने लगी। उसने जबरदस्ती मयूख के मुँह मे कुप्पी उड़ेल दी। उस समय उन्हें विशेष निर्बलता थी। धीरे धीरे उठकर वे खड़े हो गए। पर तुरंत तातारिन ने उन्हें अपनी बाहों में भर लिया। मयूख ने छूटने का बड़ा प्रयत्न किया, किंतु अपने को छुड़ा न सके। पीछे से पैरों की चाप सुन तातरिन ने उन्हें छोड़ दिया। पीछे घूमकर मयूख ने देखा कि शैया के पार्श्व मे दो सुंदर युवतियाँ खड़ी हैं। एक किसी दूसरे देश की थी। शरीर का रंग गुलाबी और बाल सुनहले थे, आँख की पुतलियाँ भी पीताभ थीं। दूसरी का वर्ण बड़ा स्निग्ध, पद्मराग जैसा, था। घुँघराले और गीले बाल भूमि तक लटक रहे थे। आँखों की भौंरे सी काली दोनों पुतलियाँ बड़ी चंचल थीं सदैव मानों नृत्य कर रही हों। मयूख विस्मयपूर्वक उनकी ओर देखते रहे। उन्हें ऐसा भासित हुआ मानों दूसरी युवती परिचित है। जीवन के किसी अंधकाराच्छन्न विस्मृत अंतराल को यह सुंदर मुखमंडल उज्वल आलोक की भाँति उद्भासित करता रहा है; किंतु कब ? कहाँ पर ?

सहसा वीणाविनिंदित कंठ द्वारा उच्चरित हुआ—'शाहजादी, वे तो मुझे पहचान भी नहीं रहे हैं !'

इतना कहते कहते दूसरी युवती रूमाल से अपनी आँखें पोंछने लगी।

तब पहली युवती ने कहा—'सरवर खाँ; तुम अपनी ब्याहता औरत को पहचान नहीं रहे हो ?'

मयूख का सिर उस समय चकरा रहा था। कमरे की दीवार पकड़कर वे खड़े हुए।

पहली युवती ने पुनः पूछा—'जानते हो, मैं कौन हूँ ?'

डरते डरते मयूख ने कहा—'नहीं।'

'मैं शाहजादी जहाँनारा बेगम हूँ।'

मयूख चौंके। उन्होंने बादशाहजादी का अभिवादन किया।

शाहजादी ने पुनः पूछा—'जानते हो, तुम कहाँ हो?'

'ना।'

'यहाँ किसलिये लाए गए हो, इसका पता है?'

'ना।'

शाहजादी ने दूसरी युवती की ओर संकेत करके पूछा—'यह कौन है?'

मयूख ने धीरे धीरे कहा—'कह नहीं सकता।'

'इसे कभी देखा है?'

'याद नहीं आता।'

'झूठी बात है!'

तुरंत दो काफ्री और दो तातारी पहरेदार आकर मयूख के पीछे खड़े हो गए। स्वाभाविक अभ्यासवश उनका हाथ कमर पर पहुँचा, पर उन्होंने देखा, तलवार नहीं है। दोनों खोजों ने उनका हाथ पकड़ लिया।

शाहजादी ने पुनः जिज्ञासा की—'देखो, इसे पहचानते हो।'

'नहीं।'

'तुम्हारा नाम क्या है?'

'मेरा नाम मयूख है।'

'झूठ बोलते हो, तुम्हारा नाम सरवर खाँ है।'

आश्चर्यपूर्वक मयूख ने कहा—'शाहजादी, आप जो नाम ले रही हैं, उसे मैंने कभी सुना ही नहीं। मैं हिंदू हूँ, बंगाल का रहनेवाला हूँ।

मेरे पिता का नाम देवेंद्रनारायण है। असद खाँ और शाहनवाज खाँ वगैरह उमरा लोग मुझे अच्छी तरह जानते हैं।'

इतना सुनते ही दूसरी युवती ने शाहजादी के कान में धीरे से कहा—'बेगम साहब, पागल होने के बाद से अब तक वे ऐसा ही कहा करते हैं। बंगाल के सातगाँव शहर में अब्बाजान से भी वे ऐसा ही कहते थे। यह सब मेरी निगोड़ी तकदीर की खराबी है। हाय! मैं क्या करूँ बादशाहजादी!'

इतना कहते कहते दूसरी युवती पुनः रूमाल से आँखें पोंछने लगी। उसे शांत करने के लिये बादशाहजादी ने उसे अपने अंक में भर लिया और बोली—'तू रोती क्यों है गुलरुख? मैं दो दिनों में ही खाँ साहब का सारा पागलपन दूर कर दूँगी। सरवर खाँ! देखो, तुम हिंदू नहीं मुसलमान हो, तुम्हारा नाम सरवर खाँ ही है। इस औरत के तुम खाविंद हो।'

'बेगम साहबा, मैं एक अक्षर भी झूठ नहीं कह रहा हूँ।'

गुलरुख बेगम ने पुनः बादशाहजादी के कान में कहा—'शाहजादी, ये सोलह आना पागल हैं। इनसे सवाल जवाब करके क्या होना जाना है?'

शाहजादी हँसकर बोलीं—'सवाल जवाब न करूँगी, पर सीधी तरह ये न समझेंगे तो टेढ़ी तरह समझाऊँगी।'

'उन्हें दूसरी बात बताइए।'

गुलरुख ने थोड़ी देर तक बादशाहजादी से कुछ परामर्श किया। तदनंतर शाहजादी ने मयूख से पुनः कहा—'तुम अगर हिंदू हो तो भी तुम्हें मुसलमान होना पड़ेगा और इस औरत से शादी करनी पड़ेगी।'

मयूख ने भूमि का स्पर्श करते हुए अभिवादन किया और बोले— शाहजादी, आप दीन और दुनिया की मालिक हैं, और मैं एक अदना आदमी हूँ। आप चाहें तो मुझे जान से मरवा सकती हैं, लेकिन मैं हिंदू हूँ, अपना धर्म नहीं छोड़ूँगा और न मुसलमान औरत से शादी ही करूँगा।'

'अच्छी तरह सोच लो।'

'यह आपकी बड़ी मिहरबानी है। पर मैं और कुछ नहीं कह सकता।'

'खाँ साहब, बादशाह शाहजहाँ के राज में अगर कोई मुसलमान अपने को काफिर कहता है तो उसकी सजा क्या होती है, जानते हो?'

'जानता हूँ शाहजादी; लेकिन मैं तो मुसलमान हूँ ही नहीं, कुरान की आज्ञा मुझपर लागू नहीं है।'

'अपनी जान ही गँवाना चाहते हो?'

'आपकी अगर यही इच्छा है तो खुशी से जान दे सकता हूँ।'

'तो जाओ।'

दोनों खोजों ने मयूख की आँखों पर पट्टी बाँध दी और उन्हें कंधे पर उठा लिया, पश्चात् शीघ्रतापूर्वक उन्हें अन्यत्र ले चले।

जाते जाते उन्होंने गुलरुख को शाहजादी से कहते सुना—'आप नाराज तो नहीं हुईं।'

मयूख के चले जाने पर शाहजादी ने भी वहाँ से प्रस्थान किया। मयूख जहाँ सोए हुए थे वह कोई कमरा नहीं था। आगरा के किले के अंतःपुर की अत्यंत चौड़ी चौड़ी दीवारों के बीच बना एक गुप्त रास्ता मात्र था। जहाँनारा बेगम के चली जाने के बाद गुलरुख भी उनके पीछे पीछे जा रही थी। अकस्मात् तातारिन ने उसका हाथ पकड़ा। गुलरुख विस्मयपूर्वक उसका मुँह देखने लगी।

वह बोली—'एक बात मानिएगा बेगम साहबा ?'

गुलरुख ने हाथ छुड़ाकर कहा—'कौन सी बात ?'

'पहले बताइए, मानिएगा न ?'

'बिना सुने समझे कैसे कह दूँ ?'

'अपने शौहर को तलाक दे दीजिए।'

'क्यों ?'

'ऐसे तेज तर्रार शौहर को आप बस में नहीं रख सकेंगी।'

'मैं रख सकूँ या न रख सकूँ इससे, तेरा क्या रे हरामजादी !'

'खबरदार ! जबान सँभालकर बोलिए। शौहर पाना और बेगम होना आपकी तकदीर मे नहीं है, कम से कम मेरे जिंदा रहते।'

'तुझे कुत्तों से नुचवाऊँगी।'

'यहाँ से वापस जा पाइएगा, तब न ?'

इतना कहते ही तातारिन ने कमर में बँधी लंबी तलवार खींचकर बाहर निकाल ली और भूखी शेरनी की तरह गुलरुख बेगम पर झपटी। गुलरुख के पास कोई अस्त्र नहीं था। तातारिन के हमले से अपनी जान बचाने का कोई साधन गुलरुख के पास नहीं था। तातारिन ने अपनी वज्रमुष्टि से उसके बाल पकड़ लिए और तलवार ऊपर उठाई। गुलरुख जोर जोर से चिल्लाने लगी। आगरा के किले की दीवारें इस कौशल से बनाई गई थीं कि उनके गुप्त मार्ग के भीतर बंदूक छूटने पर भी बाहर से कुछ सुनाई नहीं पड़ता था। तलवार की चोट गुलरुख के कंधे पर पड़ने के पहले ही किसी ने उसे तातारिन के हाथ से छीन लिया और साथ ही उसे ऐसा धक्का दिया कि वह दस हाथ दूर जा गिरी। गुलरुख उठकर खड़ी हो गई और उसने देखा कि एक दीर्घाकार

काला सा आदमी तातारिन की गरदन पकड़े जल्दी जल्दी उसे बाँध रहा है।

तातारिन को बाँधकर उसने गुलरुख को वहाँ से चली जाने का संकेत किया। आश्चर्य और भय से वह अधमरी हो रही थी। उस व्यक्ति को कोई फरिश्ता समझ गुलरुख चुपचाप वहाँ से चली गई। आधी घड़ी के भीतर ही सैकड़ों खोजे और तातारिनें वहाँ पहुँच गईं। उन्होंने रस्सी में बँधी तातारिन को तो देखा, मगर वह दीर्घाकार काला व्यक्ति कहीं दिखाई नहीं पड़ा।

विंश परिच्छेद

अन्वेषण

दोपहर की नौबत बज चुकी परंतु मयूख अभी तक घर नहीं लौटे। विनोदिनी बहुत घबराने लगी। तर्करत्न महाशय ने बहुत दिनों बाद मयूख का पता पाया था और अब वे बंगाल वापस चलने की व्यवस्था कर रहे थे। ललिता के विवाह, गौरीपुर वापस लौटने और बारबकसिंह परगने की सनद इत्यादि नाना प्रकार की बातों में रात दो पहर से अधिक बीत गई। दिल्ली दरवाजे पर जिस समय आधी रात की नौबत बजने लगी उस समय विनोदिनी को पुनः ध्यान हुआ। उसे चिंतित देख तर्करत्न ने जिज्ञासा की—'क्या सोच रही हो, बेटी?'

विनोदिनी बोली—'इतनी रात हुई बाबा, मगर मेरा बेटा अभी तक क्यों नहीं आया?'

'कितनी रात बीती है?'

'दो पहर रात बीत चुकी, तीसरा पहर आरंभ हो गया है।'

'आजकल बादशाह इतनी रात तक दरबार नहीं करते। मैं देखता आऊँ।'

तर्करत्न विनोदिनी के यहाँ से उठकर आगरा किले के दिल्ली दरवाजे तक आए। मयूख को कहीं न देख दिल्ली दरवाजे से वे अमरसिंह

दरवाजे के सामने तक चले गए। उस समय तक किले के चारों ओर सन्नाटा हो चुका था। मनसबदारों के खेमों में एक एक पहरेदार के अलावा बाकी सब लोग सो रहे थे। अमरसिंह दरवाजे पर बिलकुल सन्नाटा था। लाचार, तर्करत्न महाशय वापस लौटे। विनोदिनी और ललिता उनकी प्रतीक्षा में बैठी थीं। उन्हें अकेले लौटते देख ललिता की आँखें डबडबा आईं। तर्करत्न ने विनोदिनी से कहा—'बेटी, तुम घबड़ाओ मत; मैं अभी नवाब अमीनुद्दौला के यहाँ जा रहा हूँ और पता लगाकर तुरंत लौटूँगा। कोतवाल फौरन पता लगा लेगा।'

विनोदिनी ने आँखे पोंछते पोंछते कहा—'जो उचित समझिए, कीजिए बाबा; रात अधिक न गई होती तो मैं बादशाहबेगम के यहाँ जाकर रोती गिड़गिड़ाती।'

उसे ढाढस देकर तर्करत्न अमीनुद्दौला आसफ खाँ के यहाँ चले। सातगाँव से जब वे शाहनवाज खाँ के साथ आगरा आए थे, उसी समय आसफ खाँ से उनका परिचय हो गया था। बुद्धिजीवी आसफ खाँ इन वंगीय ब्राह्मण की तीक्ष्ण बुद्धि का परिचय पाकर इन्हें किसी राजकीय कार्य पर नियुक्त कराना चाहते थे। किंतु मयूख का कोई पता न चलने के कारण वृद्ध ब्राह्मण का मन टूट गया था। कोई राजपद स्वीकार न कर तीर्थाटन के बहाने वे आगरा से चले गए थे।

तर्करत्न ने जिस समय आसफ खाँ की कोठी में प्रवेश किया, उस समय तक भी वृद्ध नवाब अंतःपुर मे नहीं जा सके थे। अनेक कर्मचारियों और खोजों को अपना परिचय देने के बाद वृद्ध ब्राह्मण को बादशाह के श्वसुर के दर्शन हुए। एक खोजा उन्हें पहचानता था। वृद्ध परदेशी ब्राह्मण पर द्रवित होकर वह उन्हें नवाब के पास लिवा ले गया। आसफ खाँ यमुना किनारे की ओरवाली बारहदरी में बैठे थे। सामने सुंदरी ईरानी दासियाँ नृत्य कर रही थीं। अनेक सभासद, अमीर

उमरा मजलिस में उपस्थित थे। आसफ खाँ तर्करत्न को दूर से देखकर ही पहचान गए थे। वृद्ध ब्राह्मण की, पास पहुँचते ही उन्होंने यथोचित अभ्यर्थना की और बैठने का आग्रह किया। रात के उस तीसरे पहर में वृद्ध ब्राह्मण के आने का प्रयोजन सुनते ही वे मजलिस से उठ गए। नृत्य बंद हो गया। कमरे में लिवा ले जाकर नवाब साहब ने वृद्ध ब्राह्मण से पूछा—'हुआ क्या है?'

वृद्ध ब्राह्मण ने मयूख के दिल्ली आगमन, बादशाहबेगम के साथ विनोदिनी के परिचय और मयूख के दीवान-ए-खास में सम्मिलित होने आदि की समस्त घटनाएँ ब्योरेवार बताकर कहा—'नवाब साहब, मैं जब मयूख को खोजता हुआ नाना प्रदेशों में घूमता फिर रहा था तब वे इसी नगर में विद्यमान थे। हताश होकर जिस समय मैं आगरे से जा रहा था, उस समय भी वे यहीं थे। इतने दिनों बाद उनका पता तो लगा, मगर दर्शन नहीं हुए।'

वजीर ने उन्हें आश्वस्त करने के अनंतर कहा—'आप घबड़ाइए मत; मुझे जब वे दिखलाई पड़ चुके हैं, तब आपको भी अवश्य दिखाई पड़ेंगे।'

'घर के लोग उनके लिये बड़े चिंतित हैं।'

'आप उन्हें ढाढस दीजिए। ज्यादा घबड़ाने से कोई लाभ नहीं होगा। मैं उनपर नजर रख रहा हूँ।'

'वे कब आएँगे? कब तक उनके दर्शन हो सकेंगे?'

'यह नहीं कह सकता; मगर जल्द ही लौटेंगे, जल्द ही आप लोगों की मुलाकात होगी। आपके साथ जो फकीर सातगाँव से आगरा तक आया है, वह इस समय कहाँ है?'

'किसकी बातें कर रहे हैं, चैतन्यदास की?'

'नाम याद नहीं रहा; हुगली में पुर्तगाली पादरी ने जिसकी हड्डियाँ तोड़ी थीं, उसी के बारे में कह रहा हूँ।

'वह वृंदावन में ही है।'

'कहाँ पर?'

'गोस्वामी शचीनंदन जी की शरण में है; वहीं माँगता खाता है।'

'उसे आगरा बुलवाना होगा।'

'वह तो शायद आना नहीं चाहेगा।'

'बादशाह का हुक्म है; उसे शाहंशाह के सामने उपस्थित करना है।'

'मथुरा के फौजदार को आज्ञा भेजवा दीजिए कि उसे पालकी में बिठाकर यहाँ भेजवा दें। पुर्तगाली पादरी की कृपा से अब वह चल फिर नहीं सकता।'

वजीर ने ताली बजाई; तुरंत एक खोजा ने आकर अभिवादन किया। आसफ खाँ ने उसे खासनवीस को बुला लाने की आज्ञा दी। खासनवीस तुरंत हाजिर हुआ और वजीर ने चैतन्यदास को आगरा भेजने के लिये पत्र लिखा। इतने में रात का तीसरा पहर बीत गया और दिल्ली दरवाजे पर नौबत बजने लगी। रात बीती देख तर्करत्न महाशय ने चलने की आज्ञा चाही। चलते समय वजीर ने उनसे दूसरे दिन दरबार-ए-आम और गुसलखाने में उपस्थित होने का आग्रह किया और चौकी खास के मनसबदार अपने पुत्र शाइस्ता खाँ के नाम एक पत्र लिखकर दे दिया। तर्करत्न मयूख के घर की ओर लौटे।

उनके चले जाने पर वजीर आसफ खाँ ने पुनः ताली बजाई और एक खोजा ने कमरे में आकर अभिवादन किया। वजीर ने उससे पूछा—'खवास अमानत खाँ लौट आया?'

खोजा बोला—'जी जनाब।'

'उसे बुला लाओ।'

अभिवादन करके खोजा बाहर चला गया। कुछ देर बाद उसके साथ एक अत्यंत कुरूप और कूबड़ निकले हब्शी ने आकर अभिवादन किया। आसफ खाँ उस समय सिर लटकाए कुछ सोच रहे थे। दोनों खोजे संगमूसा की मूर्ति के सदृश स्थिर खड़े रहे। थोड़ी देर बाद जब वजीर ने सिर ऊपर किया तब कूबड़वाले खोजे ने पुनः अभिवादन किया। आसफ खाँ ने कहा—'अमानत खाँ ?'

खोजा बोला—'जनाब !'

'सारा काम खत्म हो चुका ?'

'जनाब, सब काम हो गया।'

'बंगाली कहाँ गया ?'

'जनाब, वह तैरता हुआ पानी दरवाजा पारकर रंगमहल के भीतर चला गया।'

'किसी ने देखा तो नहीं ?'

'आलमपनाह, बूढ़ा बंगाली पानी में डुबकी लगाकर तीस गज की खाईं और पाँच गज की नहर को पार करके रंगमहल के भीतर चला गया है।'

'शाबाश ! उसकी खबर भीतर पहुँचा दी है ?'

'सरदारनी मेंहदी बीबी को खुद बता आया हूँ और हिलाल खाँ के जरिए रंगमहल के बख्शी हिम्मत खाँ याकूत को भी खबर कर दी है।'

'बंगाली राजा को किसने कैद किया है, इसकी खबर ले आए हो ?'

'पूरा पता तो नहीं लग सका, मगर शाम होने के बाद याकूती बाँदी गुलजार और कालमक इरादत खाँ नाव पर सवार होकर पानी

दरवाजे तक आए थे। इरादत खाँ वहीं उतर गया था, पर बाँदी गुल-जार नाव लेकर रंगमहल के भीतर चली गई थी। बूढ़ा बंगाली कहता था कि मेरे महाराज को एक औरत और एक मर्द नाव पर बिठाकर लिवा ले गए। अब इसमें कोई शक नहीं रहा कि बंगाली राजा को गुलजार बीबी ने ही कैद कर रखा है।'

'अच्छी बात है; अब तुम जाओ।'

दोनों खोजों ने अभिवादन करके प्रस्थान किया। आसफ खाँ भी अंतःपुर की ओर चले। सुविस्तृत मुगल साम्राज्य के प्रधान अमात्य को साढ़े तीन पहर रात बीतने पर कहीं जाकर विश्राम का अवसर मिला।

———

एकविंश परिच्छेद

नवाब आलिया बेगम

आगरा के किले के भीतर बादशाह के अतःपुर में प्रवेश करने के निमित्त दो प्रकाश्य पथ थे—एक दिल्ली दरवाजे पर था और दूसरा अमरसिंह दरवाजे के संमुख। इनके अतिरिक्त पानी दरवाजे से होकर भी अंतःपुर में जाने का मार्ग था, पर यह मार्ग केवल शाहंशाह के अंतःपुर मे रहनेवाली रमणियों के व्यवहार में आता था। इन तीन प्रकाश्य पथों के अतिरिक्त आगरा किले के अंतःपुर मे जाने के लिये एक गुप्त पथ भी था जिसे बादशाह के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था।

अकबर और जहाँगीर के राजत्वकाल में एक बेगम के महल से दूसरी बेगम के महल मे जाने के लिये बहुत से गुप्त मार्ग बने थे। शाहजहाँ के राजत्वकाल मे अर्जमंदबानू बेगम के अतिरिक्त महलसरा में अन्य किसी बेगम के न रहने पर गुप्त मार्ग का व्यवहार नहीं किया जाता था। जोधाबाई के महल के पीछे बादशाह बेगम के हम्माम के नीचे एक गुप्त कमरा है। इस कमरे में अभी तक एक वधमंच वर्तमान है। अंतःपुर की किसी महिला द्वारा रीतिविरुद्ध कोई आचरण होने पर बादशाह अथवा प्रधान महिषी उसे यहीं प्राणदंड देती थीं। मुगल साम्राज्य के ध्वंसावशेषों में आगरा किले के श्वेत और रक्तवर्ण प्रस्तरों द्वारा निर्मित

प्रासाद के नीचे जिस रंगमंच पर विपथगामिनी अंतःपुरवासिनियों के जीवननाटक का अंतिम दृश्य अभिनीत होता था, उसे देखकर आज भी मन में उत्कट भय का संचार होता है।

बहुत दिनों से इस वधमंच का उपयोग नहीं हुआ था। बादशाह के अंतःपुर की किसी रमणी ने बहुत दिनों से अपने रक्त द्वारा अपनी स्वेच्छाचारिता का प्रायश्चित्त नहीं किया था, फलतः बहुत दिनों से उस कमरे में कोई गया नहीं था। कमरा नितांत अस्वच्छ था। फर्श पर धूल पड़ी हुई थी। बहुत दिनों बाद सहसा वह अँधेरा कमरा बहुत सी मशालों के आलोक से प्रकाशित हो उठा। मयूख को लेकर चार खोजे उस कमरे में आए। उनके आगे आगे पाँच और पीछे पीछे पाँच तातारिनें हाथों में मशाल लिए हुए थीं। इनके बाद गुलरुख और जहाँनारा बेगम आईं। सबके बाद नंगी तलवार लिए एक खोजा और रस्सी लिए एक तातारिन ने कमरे में आकर दरवाजा बंद कर लिया।

खोजों ने मयूख को नीचे उतारकर उनके बंधन खोल दिए और उन्हें जहाँनारा बेगम के सामने करके स्वयं पीछे हटकर खड़े हो गए। मशाल-वाली तातारिनें दीवार के पास पंक्तिबद्ध होकर खड़ी हो गईं। जो खोजा तलवार लिए आया था वह बहुत दिनों तक खून जमा होने के कारण मटमैला हो गए लकड़ी के कुंदे को खींच लाया और वार करने के लिये कटिबद्ध हो गया। तातारिनों ने लकड़ी के बने फाँसी के चौखटे में रस्सी लगा दी और कमरे के फर्श पर बीच में लगा पटरा हटा दिया। तत्काल नीचे से यमुनाजल की कलकल ध्वनि सुनाई पड़ने लगी।

शाहजादी ने जिज्ञासा की—'देखते हो, सरवर खाँ?'

मयूख ने अपने दाहिने हाथ के अँगूठे में यज्ञोपवीत लपेटकर आँखें बंद कर लीं।

शाहजादी बोलीं—'देखो, अब भी अगर अपनी पत्नी को ग्रहण करना स्वीकार कर लो तो छूट सकते हो।'

आँखें बंद किए किए ही मयूख ने कहा—'शाहजादी साहबा, मैं हिंदू हूँ। प्राणों के डर से झूठ नहीं बोलूँगा। मैं ब्राह्मण हूँ, मुसलमान नहीं। मेरा नाम मयूख है, सरवर खाँ नहीं। इस स्त्री को मैं नहीं पहचानता। मरने के लिये तैयार हूँ। देर करके मेरा कष्ट मत बढ़ाइए।'

'तो तुम्हें अपनी पत्नी को स्वीकार करना मंजूर नहीं है?'

'मेरी कोई पत्नी नहीं है; अभी तो मेरा ब्याह ही नहीं हुआ।'

'अब भी सोच लो।'

'शाहजादी साहबा, मैं झूठ नहीं बोलता। मुसलमान स्त्री से ब्याह नहीं करूँगा, अपना धर्म नहीं गँवाऊँगा। मरते समय झूठ नहीं बोलता।'

शाहजादी ने संकेत किया और जल्लाद मयूख का हाथ पकड़कर आगे लाने लगा। अकस्मात् तहखाने की उस कोठरी में घनीभूत अंधकार से भी अधिक काला कलूटा एक व्यक्ति दीवार पर से छलाँग मारकर फर्श पर कूद पड़ा और एक ही लात में जल्लाद को नीचे यमुना में ढकेलकर पुनः उस कोठरी के घनांधकार में विलीन हो गया। मयूख आश्चर्य से हक्के बक्के हो गए। गुलरुख एक हलकी चीख मारकर अचेत हो गई। शाहजादी तो मारे भय के पसीने से तरबतर हो गईं।

बहुत देर तक किसी के मुँह से बात नहीं फूटी। अंत में मयूख ने कहा—'शाहजादी साहबा, देर करने से क्या लाभ? तलवार न सही, रस्सी तो है ही। आवश्यकता होगी तो मैं स्वयं अपने हाथों गले में फंदा डाल लूँगा।'

शाहजादी शांत रहीं। जिस तातारिन ने रस्सी पकड़ रखी थी उसने देखा कि रस्सी धीरे धीरे ऊपर जाकर अंधकार में विलीन हो गई।

'सुभान अल्लाह !'—कहती हुई वह दूर जाकर खड़ी हो गई। शाहजादी स्तब्ध रहीं। इसी समय उस काले कलूटे व्यक्ति ने दीवार पर से ही एक खोजा के मुँह पर कसकर एक लात जमाई। खोजा के हाथ से तलवार गिर पड़ी। सहसा वह व्यक्ति फर्श पर कूद पड़ा और दूसरे खोजा की गरदन पर तलवार का ऐसा करारा वार किया उसका सिर कटकर जहाँनारा बेगम के शरीर पर जा गिरा। यह देख बचे हुए खोजा और तातारिनों ने बेगम को चारों ओर से घेर लिया।

काले कलूटे व्यक्ति ने मयूख को सम्बोधित करते हुए कहा—'महाराज, दो दो तलवारें पड़ी हुई हैं! दरवाजा हब्शियों के पीछे है।' मयूख जड़वत् खड़े थे। काले कलूटे व्यक्ति की बातों से वे चैतन्य हुए। तलवारें उन्होंने उठा लीं। वार्तालाप सुनकर खोजा लोगों का भय भी जाता रहा। एक व्यक्ति बोला—

'अरे, जिन्न नहीं, यह तो आदमी है!'

'पगले कहीं के, आदमी कहीं आसमान तक उछल सकता है?'

इसपर काले कलूटे व्यक्ति ने कहा—'हाँ, मैं मनुष्य हूँ।'

मयूख ने अब जाकर उसे पहचाना और बोले—'भुवन?'

भुवन बोला—'हुजूर! देर करने की आवश्यकता नहीं है।'

इसी समय खोजा और तातारिनों ने उनपर आक्रमण कर दिया। बहुत सी मशालें बुझ गईं। वधमंच पर प्रायः अंधकार हो गया। इस बीच गुलरुख की चेतना लौट आई। उसने शाहजादी का पैर पकड़कर कहा—'शाहजादी साहबा, अभी मत मारिए। मैं एक बार और समझा बुझाकर देख लूँ।'

जहाँनारा बेगम द्रवित हुईं। उनके संकेत से खोजे रुक गए। भुवन तत्काल एक छलाँग में फाँसी के चौखटे पर पहुँचा और अंधकार में लुप्त हो गया।

मशालें फिर जलाई गईं। खोजों और तातारिनों ने उस भूगर्भस्थ कमरे का कोना कोना छान डाला किंतु भुवन कहीं दिखाई नहीं दिया। तब गुलरुख के आग्रह करने पर खोजे और तातारिनें कमरे से चली गईं। शाहजादी भी बाहर निकलीं। गुलरुख धीरे धीरे मयूख की ओर अग्रसर हुई। मयूख ने उसे आते देख जिज्ञासा की—'आप कौन हैं, बीबी साहबा ? क्यों मुझे व्यर्थ कष्ट पहुँचा रही हैं।'

गुलरुख स्थिर हुई। खड़ी हो जाने पर भी उसका हृदय जोरों से धड़क रहा था। जिह्वा सूख गई थी। उसके मुँह से बोली नहीं फूट रही थी। उसकी यह अवस्था देख मयूख ने समझा कि संभवतः अस्त्र शस्त्र देखने से यह डर गई है। हाथ की तलवार एक किनारे फेंककर उन्होंने कहा—'मैं तो आपको पहचानता तक नहीं !'

गुलरुख की जिह्वा की जड़ता सहसा दूर हो गई। किंतु आवेग की अधिकता के कारण अवरुद्ध कंठ से वह बोली—'तुमने···आपने···मुझे पहचाना नहीं ?'

मयूख ने उत्तर दिया—'नहीं।'

'सातगाँव की लड़ाई मे आप घायल हो गए थे, यह याद है ?'

'याद है।'

'बजड़े पर मैंने आपकी सेवा की थी, इसकी भी याद है ?'

'वह तुम्हीं थीं ?'

'हाँ !'

'रोगशय्या पर पड़ा पड़ा मैं स्वप्न देखा करता था कि ललिता मेरे सिरहाने बैठी सितार बजा रही है। लेकिन ललिता सितार बजाना जानती ही नहीं !'

'वह ललिता नहीं, मैं थी।'

'तुम्हें तो मैंने पहले देखा ही नहीं।'

'नहीं प्राणनाथ! त्रिवेणी घाट पर दूर से ही तुम्हें देखकर मैंने तुम्हारे चरणों में अपने को न्योछावर कर दिया।'

इतना कहते कहते गुलरुख ने मयूख के दोनों पैर पकड़ लिए। मयूख तो स्तब्ध रह गए।

गुलरुख आगे कहती गई—'तुम्हें पाने के लिये लाज शर्म सब कुछ धो बहाया—असद खाँ और शाहनवाज खाँ से मैंने यही कहा कि तुम्हारी पत्नी हूँ। सातगाँव की लड़ाई में घायल होकर तुम रास्ते में पड़े हुए थे। मैं उस समय शाहनवाज खाँ के साथ बजड़े पर जा रही थी। हम लोग तुम्हें बजड़े पर उठा लाए थे। दो तीन दिन तुम बजड़े ही पर अचेत पड़े रहे। मुझे तुम 'ललिता' कहकर पुकारा करते थे। मैं सोचती, तुम प्यार से ऐसा कह रहे हो। हुगली के फिरंगियों ने जब हम लोगों का बजड़ा डुबो दिया, तभी से तुम्हें ढूँढ़ती फिर रही हूँ, मगर तुम कहीं दिखाई तक नहीं पड़े। तुम्हारे दर्शन उसी दिन हुए जिस दिन तुम पानी दरवाजे के पास खड़े थे। मैंने ही तुम्हें यहाँ पकड़ मँगवाया है। शाहजादी को भी यही परिचय दिया है कि तुम मेरे पति हो। तुम्हें मैंने बड़ा कष्ट पहुँचाया, मगर केवल तुम्हें देखने, तुम्हें पाने के लिये। तुम्हें पाऊँगी नहीं क्या? देखो, मैं स्त्री हूँ; लज्जा शर्म छोड़कर तुमसे भीख माँग रही हूँ।'

मयूख कुछ समय तक चुपचाप स्थिर रहे, तदनंतर बोले—'बीबी साहबा; मैं हिंदू और ब्राह्मण हूँ। आप मुझपर कृपा करके मुझे क्षमा करें।'

'देखो, तुम्हीं मेरे देवता हो। जो बाहर से देखने में इतना सुंदर है, वह भीतर से कभी मलिन हो नहीं सकता। जिसे इतनी सुंदरता मिली है वह कभी निर्गुण नहीं हो सकता। मैं स्त्री हूँ, तुमपर मुग्ध हूँ; अपनी

इच्छा से स्त्रीधर्म का त्याग करके तुम्हारे चरणों में आश्रय लेने आई हूँ। मुसलमान हिंदू हो सकता है, हिंदू भी मुसलमान बन सकता है। हिंदू, मुसलमान दोनों ही एक से अधिक पत्नी रख सकते हैं। यहाँ अंतःपुर में मेरी पैठ है। बादशाह बेगम की मुझपर बड़ी कृपा है। शाहंशाह बादशाह भी मुझपर स्नेह रखते हैं। तुम अगर मुझे अपने चरणों में स्थान दोगे तो मैं भी तुम्हारे लिये असंभव को संभव बना सकती हूँ। मनसब, खिलअत, ईनाम, ताल्लुका, मदद, जो कुछ भी इच्छा होगी, पाओगे...'

मयूख ने उसे बीच में ही रोकते हुए कहा—'बीबी साहबा, यह आपकी बहुत बड़ी कृपा है, लेकिन मैं मुसलमान नहीं बन सकूँगा।'

'मैं हिंदू हो जाऊँगी।'

'मुसलमान कभी हिंदू नहीं हो सकता।'

'क्यों ? वैष्णव तो बन सकता है ?'

'मैं ब्राह्मण हूँ; वैष्णव होने पर जाति से बाहर कर दिया जाऊँगा।'

'देखो, मैंने शाहजादी को बताया है कि तुम्हारा नाम सरवर खाँ है और तुम मेरे पति हो—मेरी सुंदरता पर मोहित होकर तुम हिंदू से मुसलमान हो गए हो। तुम तो जानते ही हो कि मुसलमानी राज्य में हिंदू के मुसलमान हो जाने में कोई हर्ज नहीं है लेकिन मुसलमान के हिंदू होने की सजा फाँसी है। तुम अगर मेरी बात नहीं मानोगे तो शाहजादी तुम्हें कत्ल करा देंगी।'

'मैं मरने से नहीं डरता, बीबी साहबा !'

'इस समय मान जाओ, बाद में न हो मुझे भूल जाना।'

'असंभव है। एक बार 'हाँ' कह देने पर बाद में झूठ कैसे बोलूँगा ?'

'तो मुझे चरणों में स्थान नहीं मिलेगा ?'

'बीबी साहबा, मेहरबानी करके मुझे माफ करें। आप बादशाह की पालिता कन्या हैं। कितने ही संभ्रांत अमीर उमरा आपसे ब्याह करने को लालायित होंगे। मैं अदना आदमी ठहरा। मुझसे ऐसा अपराध नहीं होगा।'

'मैंने बड़ी चेष्टा की है प्रियतम! लेकिन तुम्हें भूल नहीं सकी। तुम्हारा चेहरा ध्यान से उतारना असंभव है। तुम्हीं मेरे प्राण और मेरे हृदय हो। अपने लिये तुम्हें बड़ा दुःख दिया है। मुझे माफ कर दो। हो सका तो तुम्हें छोड़ दूँगी, पर यदि ऐसा न कर सकी तो तुम्हारे साथ ही मैं भी मरूँगी। इस रास्ते पर अब बहुत आगे बढ़ चुकी हूँ।'

गुलरुख धूल झाड़कर उठ खड़ी हुई और दरवाजा थपथपाने लगी। एक खोजा ने दरवाजा खोल दिया। शाहजादी ने पूछा—'गुलरुख, तुम्हारा आदमी मान गया?'

सिसकती और अनुनय करती हुई गुलरुख बोली—'शाहजादी साहबा, आज और उन्हें माफ कर दीजिए।'

'तो राजी नहीं हुआ?'

'राजी हो जायँगे; थोड़ा समय और लगेगा।'

'यह नहीं हो सकता। तुम्हारा आदमी होकर मेरी आज्ञा का पालन नहीं करेगा; इसे मैं बर्दाश्त नहीं कर सकती। मैं तुरंत उसे कत्ल करवाऊँगी और कल ही तेरी शादी करा दूँगी।'

कमरे के भीतर आकर शाहजादी ने मयूख से पूछा—'क्यों सरवर खाँ, अपनी बीबी को लिवा ले जाओगे?'

'मेरे तो बीबी है ही नहीं, शाहजादी साहबा।'

'फिर झूठ बोलने लगे?'

'मैं झूठ नहीं बोलता।'

'जल्लाद!'

तुरंत बीस खोजों ने मयूख को चारों ओर से घेर लिया। बारह तातारिनें नंगी तलवार हाथ में लिए चारों ओर दीवार के पास खड़ी हो गईं। जल्लाद ने मयूख का हाथ पकड़कर खींचा। अब कोई चारा चलता न देख भुवन ने भी आत्मसमर्पण कर दिया और शाहजादी के दोनों पैर पकड़कर बोला—'शाहजादी साहबा, जन्म से लेकर आज तक मैंने इसका पालन पोषण किया है। मेरी आँखों के सामने इसे मत मारिए। कृपा करके पहले मुझे कत्ल कर दीजिए, फिर जो इच्छा हो, कीजिए।'

वृद्ध का गला भर आया लेकिन उसका यह कातर अनुरोध स्वीकार नहीं किया गया।

दो खोजों ने मयूख का सिर पकड़कर लकड़ी के कुंदे पर रख दिया। जल्लाद ने तलवार उठाई। अकस्मात् तेज धूप से कमरा जगमगा उठा। क्षण भर के लिये चकाचौंध के कारण किसी को कुछ सुझाई नहीं पड़ा। दूसरे ही क्षण खोजे अपना शस्त्र फेंक फेंककर जमीन चूमने लगे। शाहजादी का भी मुँह सूख गया और गुलरुख सिहर उठी। मयूख ने देखा कि उस अँधेरे कमरे की एक दीवार अपने स्थान से हट गई है और वहाँ शांत गंभीर मुद्रा में एक अनिंद्य सुंदरी खड़ी है। उनके मन में कुछ आशा बँधी। खोजों ने उन्हें छोड़ दिया था। एक ही झटके में उछलकर वे उस मातृमूर्ति के पास पहुँच गए और उसके दोनों पैर पकड़कर पुकार उठे—'माँ!'

उस रमणी ने मयूख के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—'अब डर की कोई बात नहीं, बेटा!'

द्वाविंश परिच्छेद

गुसलखाना

दरबार आम समाप्त हुआ और बादशाह सिंहासन पर से उठ गए। दीवान-ए-आम के पीछे की ओर सोने और मणि मुक्ता का काम किया हुआ हाथीदाँत का बना तामजाम लिए आठ तातारी प्रतीक्षा में थे। बादशाह उसपर आसीन होकर चले गए। अन्यान्य दरबारी लोग नक्कारखानेवाले दरवाजे से बाहर निकले। केवल वजीर आसफ खाँ, शाहनवाज खाँ, असद खाँ, कासिम खाँ, इनायत उल्ला खाँ, बहादुर खाँ कंबोह और दीवान हरेकृष्ण राय दीवान-ए-आम के पीछेवाले दरवाजे से दीवान-ए-खास के चबूतरे की ओर निकले। सफेद संगमरमर के बने दीवान-ए-खास के पीछे गुसलखाना है। मुगल साम्राज्य में गुसलखाना मंत्रणागृह के रूप में व्यवहृत होता था। दरबार-ए-आम के अनंतर बादशाह यहीं बैठकर प्रधान वजीर आदि के साथ परामर्श करते, भिन्न भिन्न सूबों के प्रशासन के संबंध में आदेश दिया करते और राजकाज के गोपनीय विषयों की व्यवस्था किया करते थे।

सभी लोग गुसलखाने के भीतर जाकर दरवाजे के दोनों ओर पंक्तिबद्ध खड़े हो गए। बादशाह का तामजाम दरवाजे पर आकर रुक गया और वे नीचे उतरे। समस्त दरबारियों ने एक साथ कोर्निश की। बाद-

शाह के गद्दी पर बैठ जाने के अनंतर वजीर आसफ खाँ और शाहनवाज खाँ उनके पास ही बैठे। बाकी लोग उनके चतुर्दिक् खड़े रहे। बैठते ही बादशाह ने आसफ खाँ से पूछा—'नए मनसबदार कहाँ है?'

आसफ खाँ संकट में पड़ गए। इस परामर्श मंडली में उपस्थित दरबारियों के समक्ष मयूख की चर्चा करने की इच्छा होते हुए भी उनके लिये ऐसा करना संभव नहीं था। वृद्ध वजीर ने अनायास एक मनगढ़ंत बात छेड़ दी। वे बोले—'जहाँपनाह, नए एकहजारी मनसबदार मयूख-नारायण को बहुत ढूँढा गया, मगर उनका कहीं पता नहीं है।'

बादशाह अत्यंत विस्मित हुए। बोले—'यह कैसी बात है? कल रात में यह शख्स हमारे पास आया था और आज सुबह खोजने पर भी उसका पता नहीं चला? असद खाँ, कोतवाल को तलब किया जाय।'

असद खाँ कोर्निश करके गुसलखाने से बाहर चले गए। बादशाह ने तब ताली बजाई। एक तातारी सेवक ने आकर अभिवादन किया। बादशाह ने उसे रंगमहल के दारोगा गुलशेर खाँ और बख्शी हिम्मत खाँ याकूत को तलब करने की आज्ञा दी। अभिवादन करके तातारी के चले जाने पर बादशाह ने आसफ खाँ से जिज्ञासा की—'क्या सूरत का अँगरेज सरदार और बंगाली गवाह हाजिर है?'

आसफ खाँ ने उत्तर दिया—'सभी लोग हाजिर हैं, जहाँपनाह!'

आसफ खाँ ने ताली बजाई। खवास अमानत खाँ ने हाजिर होकर अभिवादन किया। वजीर ने उसे चौकी खास के मनसबदार शाइस्ता खाँ को बुलाने का आदेश दिया। क्षण मात्र में शाइस्ता खाँ ने हाजिर होकर कोर्निश की। आसफ खाँ ने अपने सुपुत्र को सूरत की कोठी के प्रधान अंगरेज अधिकारी वाइल्ड को, तर्करत्न महाशय को और बाबा चैतन्यदास को गुसलखाने में लिवा लाने की आज्ञा दी। अभिवादन करके

शाइस्ता खाँ ज्योंही बाहर हुए त्योंही आगरा के कोतवाल जफर खाँ ने गुसलखाने में प्रवेश किया।

जफर खाँ को देखते ही बादशाह ने अत्यंत क्रोधपूर्वक कहा—'जफर खाँ! तुम ख्वाजा अबुलहसन के लड़के हो, इसीलिये तुम्हें आगरे का कोतवाल बनाया गया है; लेकिन देखता हूँ कि तुम एकदम निकम्मे आदमी हो। कल ही रात में एक बंगाली अमीर को एकहजारी मनसबदार बनाया गया है। कल एक पहर रात गए तक वह दीवान-ए-खास में हाजिर था लेकिन उसके बाद वह घर नहीं पहुँचा। तुमने उसकी कोई खबर पाई है?'

जफर खाँ ने सिर झुका लिया; बोले—'नहीं।'

'आज रात दीवान-ए-खास तक उसका पता तुमने न लगाया तो तुम्हें आगरा से हटा दिया जायगा। औरत की पोशाक पहनाकर और गधे पर बैठाकर तुम्हें निकाल बाहर किया जायगा।'

कोतवाल जफर खाँ काँपने लगे। अभिवादन करके मुँह लटकाए वे बाहर चले गए।

तदनंतर आसफ खाँ ने बादशाह के कान में धीरे से कहा—'जहाँपनाह, जफर खाँ का इसमें कोई कसूर नहीं है। बख्शी हिम्मत खाँ याकूत, दारोगा गुलशेर खाँ और सरदारनी मेहँदी बीबी को नए एकहजारी मनसबदार का पता है।'

बादशाह विस्मयपूर्वक आसफ खाँ का चेहरा देखने लगे।

इसी समय शाइस्ता खाँ वाइल्ड और तर्करत्न महाशय को लेकर गुसलखाने में प्रविष्ट हुए। उनके पीछे दो खोजे बाबा चैतन्यदास को पकड़े हुए आए। खड़ा न रह सकने के कारण चैतन्यदास बैठ गए। बादशाह विस्मित हो उनकी ओर देखने लगे।

यह देख शाहनवाज खाँ बोले—'जहाँपनाह! पुर्तगाली पादरी ने इसकी हड्डी हड्डी तोड़ डाली है। यह खड़ा नहीं हो सकता।'

बादशाह ने जिज्ञासा की—'नवाब साहब, पुर्तगाली पादरी ने इसकी हड्डियाँ क्यों तोड़ीं?'

'यह हिंदू फकीर खुद अर्ज करेगा, शाहंशाह!'

आसफ खाँ की आज्ञा से दीवान हरेकृष्ण राय बादशाह के प्रश्न और चैतन्यदास के उत्तर का उल्था करने लगे।

बादशाह ने पूछा—'फकीर! पुर्तगाली पादरी ने तुम्हारे ऊपर यह अत्याचार क्यों किया?'

'वह मेरा शुभेच्छु भाई है, इसलिये।'

'तुम्हारा भाई है?'

'महाराज! भूले हुए को जो रास्ता बताए, वही भाई है।'

'तुम क्या रास्ता भूलकर हुगली पहुँचे थे?'

'नहीं। अपनी इच्छा से ही वहाँ गया था।'

'फिर रास्ता कहाँ भूले थे?'

'बैरागी होकर जब धन का लोभ किया था, तभी रास्ता भूला था।'

'पुर्तगाली पादरी ने तुम्हारे ऊपर अत्याचार क्यों किया?'

'गोविंद की इच्छा!'

'यह गोविंद कौन है?'

'गोविंद सारे संसार के चक्रवर्ती राजा है, बादशाहों के बादशाह, आपके भी और मेरे भी प्रभु!'

बादशाह हँसे; बोले—'फकीर, खुदा ने क्या तुम्हारे ऊपर अत्याचार करने के लिये पुर्तगाली पादरी को हुक्म दिया था?'

'अवश्य ! नहीं तो आदमी की क्या मजाल है कि आदमी के बदन पर हाथ रखे।'

'तुम पागल तो नहीं हो?'

'महाराज, लोभ और मोह ने जिस समय मुझपर धावा किया था, उस समय अवश्य पागल हो गया था; अब तो मदनमोहन ने दया कर दी है; अब पागल नहीं हूँ।'

इसी समय असद खाँ बोले—'शाहंशाह, यह ब्राह्मण वहाँ हाजिर था। इससे पूछने पर सारी बातें मालूम होंगी।'

बादशाह की आज्ञा से तर्करत्न ने पादरी द्वारा चैतन्यदास के ऊपर किए गए अत्याचार की सारी बातें कह सुनाईं। सुनकर बादशाह रोमांचित हो उठे। उन्होंने वाइल्ड से पूछा—'अँगरेज! सारे ईसाई पादरी क्या इसी तरह अत्याचार करते हैं?'

वाइल्ड ने सिर झुकाए हुए कहा—'जहाँपनाह! ईसाई समाज में केवल पुर्तगाली और स्पेनी पादरी ही ऐसा अत्याचार करते हैं। हिंदुस्तान के लिये तो यह अत्याचार नया नया है, अपने देश में ये लोग दूसरे मत को माननेवाले ईसाइयों पर भी ऐसा ही अत्याचार किया करते हैं।'

'अगर ऐसी बात है तो हमारे राज्य में इन्हें रहने देना ठीक नहीं है।'

वाइल्ड ने कहा—'जहाँपनाह, दरबार में अनेक बार मैंने पुर्तगालियों द्वारा हम लोगों पर होनेवाले अत्याचार की बातें अर्ज की हैं। जहाँपनाह का हुक्म होता तो हम लोगों ने अब तक पुर्तगाली पादरियों और डाकुओं का अत्याचार खत्म कर दिया होता।'

बादशाह बोले—'देखो अँगरेज, तुम भी फिरंगी हो और पुर्तगाली भी फिरंगी हैं। तुम लोग इस मुल्क में व्यापार करने आए हो। हम

लोगों का ख्याल था कि ईर्ष्या के कारण तुम लोग पुर्तगाली बनियों की शिकायत करते हो। रियाया के ऊपर इस तरह के जुल्म की बात मैंने पहले सुनी नहीं।'

वाइल्ड—'जहाँपनाह! हिंदुस्तान की तमाम खबरें क्या बादशाह के कानों तक पहुँच पाती हैं?'

आसफ खाँ—'जहाँपनाह! वाकयानवीस लोग जो तमाम खबरें भेजा करते हैं, उन सबको सुनने पर शाहंशाह को दूसरे किसी काम के लिये वक्त ही नहीं रहेगा! इसीलिये खासदबीर उनमें से चुनचुनकर कुछ कागज रंगमहल में भेज देते हैं।'

बादशाह—'पहले किसी वाकयानवीस ने पुर्तगाली फिरंगियों के जुल्म की बात क्या लिखी थी?'

आसफ खाँ—'हाँ; अहमदाबाद, सातगाँव और जहाँगीरनगर के वाकयानवीसों ने दो तीन बार यह खबर दी थी।'

बादशाह—'आइंदा सूबा बंगाल और सूबा गुजरात के तमाम वाकयानवीसों की सारी चिट्ठियाँ मेरे रूबरू हाजिर हुआ करें।'

आसफ खाँ—'जहाँपनाह के हुक्म की तामील होगी।'

बादशाह—'सुनो वाइल्ड, कासिम खाँ सूबा बंगाल का सूबेदार होने जा रहा है। बंगाल और गुजरात के पुर्तगालियों को मैं ठीक करूँगा। पुर्तगालियों के साथ तुम लोगों का झगड़ा है न?'

वाइल्ड—'सौ बरस से लड़ाई चल रही है।'

बादशाह—'तुम्हारे जहाज क्या पुर्तगालियों के जहाजों को ईरान में और सूरत के इर्द गिर्द रोक रख सकते हैं?'

वाइल्ड—'रख सकते हैं।'

इसी समय शाइस्ता खाँ ने गुसलखाने में प्रवेश किया और बोले—'जहाँपनाह, एक हिंदू फकीर नक्कारखाने में इंतजार कर रहा है। वह बादशाह की खिदमत में हाजिर होना चाहता है। उसके पास शाहंशाह की मुहर और शाही पंजा है।'

शाइस्ता खाँ की बातें सुनकर बादशाह कुछ विचलित से हुए। उन्होंने शाइस्ता खाँ से कहा—'खाँ साहब, मेरे नाम की मुहर सिर्फ एक हिंदू फकीर के पास है। वे मेरे और नवाब आलिया बेगम के परम मित्र हैं। तुम उन्हें फौरन लिवा लाओ।'

शाइस्ता खाँ ने अभिवादन किया और चले गए। बादशाह ने तब अँगरेजों के प्रधान अधिकारी वाइल्ड से कहा—'वाइल्ड, तुम सूरत लौट जाओ और लड़ाई की तैयारी करो।'

वाइल्ड—'जहाँपनाह, मैं तो कभी चला गया होता। वजीर साहब का हुक्म नहीं मिला, इससे नहीं जा सका।'

मुगल साम्राज्य के सर्वश्रेष्ठ बंदरगाह सूरत स्थित अँगरेजी कोठी के प्रधान अधिकारी वाइल्ड ने बादशाह को अभिवादन किया और चले गए। तब शाइस्ता खाँ ने गेरुआ वस्त्र धारण किए लंबे चौड़े, गौरवर्ण संन्यासी के साथ गुसलखाने में प्रवेश किया। उन्हें दूर से देखते ही बादशाह सिंहासन पर से उठकर खड़े हो गए। यह देख शाइस्ता खाँ और आसफ खाँ भी खड़े हो गए। बादशाह ने आगे बढ़कर पहले खुद अभिवादन किया। वजीर आसफ खाँ और नवाब शाहनवाज खाँ ने भी उनका अभिवादन किया। संन्यासी ने अभिवादन न करके बादशाह को आशीर्वाद दिया। यह देख उपस्थित समस्त मुसलमान दरबारियों ने अभिवादन किया। दीवान हरेकृष्ण राय ने उनके पैर छूकर प्रणाम किया। एक खोजा ने बादशाह की मसनद के पास एक गलीचा बिछा दिया।

संन्यासी के बैठ जाने पर बादशाह, शाहनवाज खाँ और आसफ खाँ भी बैठे।

संन्यासी ने कहा—'जहाँपनाह, आज बादशाही दरबार में भिक्षा लेने हाजिर हुआ हूँ।'

बादशाह हँसते हुए बोले—'मेरे पास ऐसा कुछ भी नहीं है जो आपको न दिया जा सके। हुगली में आपने मेरी जान और इज्जत दोनों को बचाया था। मैं तो तभी से आपके हुक्म का इंतजार कर रहा हूँ।'

'तो हुगली बंदरवाली बात जहाँपनाह ने याद रखी है?'

'फकीर साहब! मै जलालुद्दीन अकबर बादशाह का पौत्र हूँ और नूरुद्दीन जहाँगीर बादशाह का पुत्र। मुझे तमाम बातें याद हैं।'

'हुगली में बहुत जल्द ही पुर्तगाली फिरंगियों के साथ आपकी लड़ाई होगी।'

'आपसे तो कोई बात छिपी नहीं है।'

'जनाबे आली! फिरंगी गंजालीस की याद है?'

'है! वह बात तो कभी भूलेगी ही नहीं।'

'आपकी फौज शीघ्र ही हुगली पर कब्जा करेगी। उस समय गंजालीस यदि बंदी हो जाय तो उसे मुझे सौंप दिया जाय।'

बादशाह ने आसफ खाँ की ओर घूमकर कहा—'ऐसा ही फरमान लिखने का हुक्म दे दिया जाय।'

संन्यासी बोले—'एक और प्रार्थना है, जहाँपनाह।'

बादशाह बोले—'क्या आज्ञा है?'

हुगली में जो पुर्तगाली औरतें कैद की जाँय उनकी रक्षा का भार मुझे सौंपा जाय।'

'आप जैसा हुक्म देंगे, वैसा ही होगा।'

खासदबीर आ गए। फरमान लिख लिया गया और बादशाह ने उसपर अपनी मुहर कर दी। फरमान लेकर संन्यासी महाराज विदा हुए। आसफ खाँ की आज्ञा से शाइस्ता खाँ के अनुचरों ने उनका पीछा किया, किंतु बीच शहर में जाकर वे ऐसे लुप्त हुए कि लाख ढूँढ़ने पर भी अनुचरों ने उनका कोई पता नहीं पाया।

संन्यासी के प्रस्थान करने पर आसफ खाँ ने पूछा—'जहाँपनाह ! ये काफिर फकीर कौन हैं ?'

बादशाह ने थोड़ा हँसकर कहा—'कह नहीं सकता कि ये कौन हैं ! हुगली में जब फिरंगी नौसेना ने मेरा सब कुछ लूट लिया था उस समय इन्हीं महात्मा ने आपकी लड़की की इज्जत और मेरी जान बचाई थी। इनका और अधिक परिचय अनावश्यक है। कासिम खाँ, आप सूबा बंगाल के सूबेदार मुकर्रर हुए हैं। साल भर के भीतर सूबा बंगाल से पुर्तगाली फिरंगियों को निकाल बाहर करना होगा।'

कासिम खाँ ने अभिवादन करके प्रस्थान किया। बादशाह तब विकलांग वैष्णव के पास जाकर उसका बदन सहलाते हुए बोले—'फकीर साहब, मेरे राज्य में होते हुए आपको बड़ा कष्ट भोगना पड़ा है। आपको क्या चाहिए ?'

चैतन्यदास आँखें बंद किए था। आँखें खोलकर वह बोला—'महाराज ! गोविंद जी के मंदिर के पास रहना चाहता हूँ।'

'और कुछ नहीं चाहिए ?'

'और कुछ क्या होगा ?'

तब बादशाह ने अपनी कनिष्ठा अँगुली से हीरे की बहुमूल्य अँगूठी उतारकर चैतन्यदास के हाथ पर रखते हुए कहा—'यह निशानी रख

लीजिए। अगर कभी कोई जरूरत आ पड़े तो इसे दिखा दीजिएगा। मैं जहाँ कहीं और जिस किसी हालत में होऊँगा वहाँ शाही कर्मचारी आपको लिवा लाएँगे।'

बादशाह तामजाम पर सवार हुए और वह महलसरा की ओर अग्रसर हुआ।

———

त्रयोविंश परिच्छेद

दिव्य दृष्टि

बादशाह का तामजाम जिस समय महल के भीतर प्रविष्ट हुआ उस समय हजरत मुमताज महल आरजूमंद बानू बेगम रौशन-जहानी अंगूरीबाग के चबूतरे पर खड़ी होकर लाल मछलियों को चारा दे रही थीं। बादशाह नालकी पर से उतर पड़े और बेगम का हाथ पकड़े रंगमहल के भीतर चले गए। रंगमहल के सामने बाँदियों की सरदारनी मेहँदी बीबी और खोजा हिम्मत खाँ याक़ूत अपराधियों जैसी मुद्रा बनाए खड़े थे। उनकी ऐसी हालत देखकर बादशाह ने बेगम से पूछा—'इन्हें क्या हुआ है, आलिया ?'

बादशाह का हाथ पकड़े हुए बेगम उन्हें यमुनातट की ओरवाले एक कक्ष में लिवा ले गईं और बोलीं—'जहाँपनाह ! हमारी अमलदारी में महलसरा में जो कभी नहीं हुआ, वह अब होने लगा है।'

'हुआ क्या ?'

'आप आराम कर लें, तब बताऊँगी।'

'मैं बिलकुल ठीक हूँ, तुम बताओ।'

'बड़ी खतरनाक बात है। महलसरा में दो आदमी पकड़े गए हैं।'

'आदमी ? कैसे आदमी ?'

'बंगाली हैं।'

'बंगाली ?'

'हाँ जहाँपनाह ! एक मजबूत खूबसूरत जवान है और एक बुड्ढा, लेकिन उसके बदन में जिन्न की ताकत है।'

'कहाँ पकड़े गए ?'

'शीशमहल के नीचे, फाँसीघर में।'

'किसने पकड़ा है ?'

'मैंने।'

'तुमने ?'

'हाँ जहाँपनाह ! शाम को याकूती बाँदी गुलजार ने मुझसे कहा कि गुलरुख रंगमहल में किसी आदमी को ले आई है। अँधेरे में उनका कोई सूराग नहीं मिला तो मैंने सोचा कि शायद गुलजार को धोखा हुआ है। आप आज जिस वक्त दरबार-ए-आम में थे उस वक्त गुलजार आकर बोली कि जहाँनारा और गुलरुख फाँसीघर में किसी आदमी को कत्ल कर रही हैं। फाँसीघर की उत्तरी दीवार हटवाकर मैंने देखा कि सचमुच जल्लाद हिलाल खाँ एक मर्द को कत्ल करने जा रहा है। जहाँनारा का कहना है कि उसका नाम सरवर खाँ है—और वह गुलरुख का शौहर है, मगर किसी काफिर औरत की वजह से गुलरुख को छोड़कर काफिर हो गया है। लेकिन उस आदमी का कहना है कि मेरा नाम मयूख है, मैं हिंदू हूँ और गुलरुख मेरी कोई नहीं है। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या किया जाय।'

बादशाह ने देखा कि अकस्मात् अलिया बेगम के आकर्णविस्तृत नेत्रों में आँसू भर आए हैं। वे बादशाह के दोनों हाथ थामती हुई बोलीं—'मेरी एक बिनती मानेंगे ?'

शाहजहाँ ने प्रेमपूर्वक उनके आँसू पोंछकर कहा—'आलिया, हिंदोस्तान की एक सरहद से लेकर दूसरी सरहद तक तुम्हारे हुक्म की तामील की जाती है। तुम जब जैसा कहती हो, मैं वैसा ही करता हूँ; इस वक्त भी वैसा ही करूँगा। फिर तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों?'

'मेरे दिलेर! उसका चेहरा हूबहू दारा जैसा है। उसकी जान मत लीजिएगा। अगर वह कसूरवार ही साबित हो, तो उसे मुगल बादशाही इलाके से निकाल बाहर कर दीजिएगा।'

'ऐसा ही होगा। वह कसूरवार होगा तो भी तुम्हारे आँसुओं की अर्जी पर वह जरूर छोड़ दिया जायगा।'

बेगम साहबा खुशी के मारे आपे से बाहर हो गईं और बादशाह के दोनों हाथों का चुंबन पर चुंबन लेने लगीं। बादशाह ने हँसते हुए कहा—'आलिया! आज बहुत दिनों पर तुमने मुझे 'दिलेर' कहकर पुकारा; 'आप' नहीं कहा, 'जहाँपनाह' नहीं कहा!'

आरजूमंद बानू बेगम का चेहरा लज्जा से लाल हो उठा। बादशाह की छाती में मुँह छिपाकर वे बोलीं—'हर वक्त याद जो नहीं रहती।'

'तो फिर क्यों कहती हो?'

'अब तो तुम शाहंशाह हो गए हो न, मेरे दिलवर!'

'तख्त पर बैठने से क्या मैं पराया हो गया हूँ, आलिया?'

'सो कैसे हो सकता है? चलो, उन लोगों को देख लो।'

पास के ही एक कमरे में मयूख, भुवन और दो खोजे बैठे थे। भीतर प्रवेश करने पर मयूख को देखते ही बादशाह बोल उठे—'मनसबदार! तुम यहाँ?'

शारीरिक और मानसिक क्लांति ने मयूख को अवसन्न कर रखा था। वे बहुत धीरे धीरे उठकर खड़े हुए और बादशाह का अभिवादन करके बोले—'तकदीर, जहाँपनाह !'

बादशाह ने तब बेगम से कहा—'आलिया, ये मेरे नए मनसबदार हैं। इनके पिता जैसे विश्वासी कर्मचारी शायद बादशाह जहाँगीर को और नहीं थे। ये तो मुसलमान नहीं, हिंदू हैं—बंगाली। तुम्हें रंगमहल में कौन ले आया ?'

मयूख जितना जानते थे उतना बतला दिया। तब हिम्मत खाँ और मेंहदी बीबी की तलबी हुई। उन्होंने बताया कि इस काफिर को गुलजार बाँदी ले आई थी। जहाँनारा बेगम ने कहा था कि हजरत बादशाह बेगम का ऐसा ही हुक्म है। बादशाह ने तब गुलरुख को तलब किया।

स्थिर और शांत, स्वच्छ सफेद संगमर्मर की मूर्ति की भाँति गुलरुख ने धीरे धीरे कमरे में प्रवेश किया। लाल पत्थर का बना वह कमरा उज्वल प्रकाश से शुभ्र हो उठा। रमणी का तरुण सौंदर्य जगद्विजयी होता ही है। शाहजहाँ का कठोर संकल्प सहसा कोमल होने लगा। उनका हृदय द्रवित हो गया। वे अपना उद्देश्य भूल गए और स्नेह-पूर्वक उन्होंने जिज्ञासा की—'गुलरुख बेटी, यह कौन है ?'

रक्तबिंब से दोनों सुंदर ओष्ठ धीरे से हिले; गुलरुख बोली—'शाहंशाह, ये मेरे देवता हैं।'

'महलसरा में इन्हें तुम्हीं ले आई थीं ?'

'जहाँपनाह।'

'अपनी ही मर्जी से ले आई थी, बेटी ?'

'शाहंशाह ! पिता जी कैसे थे, नहीं जानती। आपसे और नवाब साहब से ही जिंदगी में पिता का प्यार पाया। अब झूठ नहीं बोलूँगी; बहुत झूठ बोल चुकी हूँ और अपने देवता को बड़ी तकलीफें दी हैं। मोह में पड़कर और शैतान की सलाह मानकर इन्हें माँ के यहाँ ले आई।'

'किसकी सलाह से लिवा लाई थी, गुलरुख ?'

'इन्हीं आँखों की सलाह से, पिता जी ! ये आँखें ही मेरी काल हैं। दोष किसी का नहीं है। गुलजार, इरादत, हिम्मत, हिलाल, मेंहदी या शाहजादी, कोई भी दोषी नहीं है। कसूर मेरी इन आँखो का है। देवताओं जैसे इस रूप ने दूर सातगाँव में मेरी आँखों को अंधा कर दिया था। उसी अंधेपन की हालत में मुझसे भारी कसूर हुए। शाहंशाह ! आज आपके सामने ही मैं कसूरवार को वाजिब सजा दूँगी।'

इतना कहते कहते बड़ी फुर्ती से गुलरुख ने कपड़े के भीतर से लोहे की दो तेज नुकीली सलाइयाँ निकालीं और अपनी दोनों आँखों में घुसेड़ दिया। क्षण भर में ही नीले कमल जैसी दोनों आँखों की रोशनी जाती रही। गुलरुख के पीले चेहरे पर हलकी सी मुसकान आई; वह बोली—'अब देख न सकूँगी; लेकिन मेरे मालिक, इन अंधी आँखों के सामने तुम्हारी शांत सौम्य मूर्ति हमेशा बिराजती रहेगी।'

तदनंतर उस दृष्टिहीन तरुणी ने अपने दोनों हाथ आरजूमंद बानू बेगम की ओर फैला दिए और बोली—'माँ ! किधर हो तुम ?'

खून से तरबतर गुलरुख को अपनी बाहों में भरकर बेगम रो उठीं।

बादशाह अब तक स्तब्ध भाव से खड़े थे। घूमकर उन्होंने देखा कि मयूख की आँखों से अविरल अश्रुधारा बह रही है।

ठीक उसी समय आगरा के पास के एक छोटे से दरिद्र गाँव से होकर एक लंबे तड़ंगे गौरवर्ण संन्यासी चले जा रहे थे। उस गाँव के एक छोटे से घर के बाहर एक प्रौढ़ा किसी की प्रतीक्षा में खड़ी थी। संन्यासी उसे देखकर चकपकाए। वह तो संन्यासी को देखते ही थर थर काँपने लगी। दूर से ही संन्यासी ने पुकारा—'विनोदिनी!'

कंठस्वर सुनते ही विनोदिनी अचेत हो गई। पर संन्यासी रुके नहीं, लंबे लंबे डग भरते हुए वे भाग चले।

उसी दिन तीसरे पहर दाढ़ी मूँछ मुड़ाए वैसा ही लंबा तड़ंगा एक व्यक्ति कासिम खाँ की अहदी सेना में भरती हुआ।

चतुर्विंश परिच्छेद

पुर्तगाली शक्ति की समाधि

मुक्ति मिलने पर मयूख कासिम खाँ के साथ बंगाल लौट आए। बंगाल की सूबेदारी सँभालते ही कासिमयार खाँ ने हुगली के पुर्तगालियों के विनाश का उद्योग आरंभ कर दिया। सूबेदार के लड़के इनायतउल्ला सेनापति अल्लाहयार खाँ को साथ लिए, हिजली पर आक्रमण करने के बहाने सेना सहित बर्दवान तक पहुँच गए। हुगली पर आक्रमण किए जाने का उद्देश्य जान लेने पर वहाँ के पुर्तगाली जलमार्ग से भाग न सकें, इसलिये मकसूसाबाद में बहादुर खाँ कांबोह को एवं शाही नौसेना की समस्त कोशाओं और गरारों के साथ खोजा शेर को श्रीपुर से सुंदरवन में भेज दिया गया। स्थिर यह किया गया कि नौसेना अगर पुर्तगाली जहाजों के जाने का मार्ग अवरुद्ध कर देगी तो अल्लाहयार खाँ बर्दवान से और बहादुर खाँ कांबोह मकसूसाबाद से हुगली की ओर अग्रसर होंगे।

इसी अवसर पर एक दिन पुर्तगाली फिरंगियों ने सातगाँव में गोकुलविहारी सेठ की कोठी पर आक्रमण कर दिया। बदले में गोकुल-विहारी और सातगाँव के फौजदार ने हुगली पर आक्रमण किया। जिस दिन हुगली के किले पर आक्रमण हुआ उसके दूसरे दिन राढ़

प्रदेश से मयूख और बागड़ी प्रदेश से बहादुर खाँ ने आकर गोकुलविहारी को कुमक पहुँचाई। इसी समय खोजा शेर कोशाओं और गरारों द्वारा सुंदरवन का जलमार्ग अवरुद्ध करके हुगली की ओर आगे बढ़ा। उधर बर्दवान से इनायतउल्ला खाँ और अल्लाहयार खाँ हुगली की ओर बढ़ चले। १०४० हिजरी अर्थात् १६३० ईसवी में हुगली के पुर्तगाली दुर्ग पर चारों ओर से आक्रमण हुआ। पुर्तगाली पादरियों और फिरंगी नौसेना के अत्याचारों से पीड़ित दक्षिण बंगाल के लोग झुंड के झुंड शाही सेना में भरती होने लगे।

बहादुर खाँ कांबोह और खोजा शेर ने आसपास की नावों का संग्रह करके हुगली के पास एक पुल बना लिया। एतदर्थ शाही नौसेना ने हुगली बंदर के समस्त गरारों और कोशाओं और मछली पकड़नेवाली डोंगियों तक को अधिकृत कर लिया। इसके पश्चात् स्थलमार्ग से पैदल सेना ने और जलमार्ग से शाही नौसेना ने हुगली के बंदरगाह और किले पर आक्रमण कर दिया। किले के बाहर अवस्थित नगर और बंदरगाह पर अल्लाहयार खाँ की सेना ने अधिकार कर लिया।

तीन महीने की लड़ाई के बाद गोकुलविहारी ने किले पर अधिकार करने की एक नई युक्ति सोची। गिरजाघर के पास हुगली के किले की खाई सँकरी थी। गोकुलविहारी की सेना ने वहीं सुरंग लगाकर खाई के जल को बाहर कर दिया। तब शाही सेना ने भीषण वेग के साथ वहाँ से दुर्ग पर आक्रमण किया।

इस अवसर पर अल्लाहयार खाँ की छावनी मे पुर्तगाली फिरंगियों का एक नया शत्रु आ पहुँचा। एक अँगरेज व्यापारी पुर्तगाली डाकुओं के हमले में सब कुछ गवाँकर गोआ पहुँचा था। वहाँ पुर्तगाली पादरियों के अत्याचार के कारण उसकी दोनों आँखें जाती रहीं। संयोग से यह

अंधा अँगरेज व्यापारी हुगली के किले पर घेरा डाले जाते समय सातगाँव आ पहुँचा था। अपने देश में वह सेना की सेवा में था। फ्रांस देश में उसने यह सीखा था कि किस प्रकार सुरंग खोदकर, उसमें बारूद भरकर किलों को तोड़ा जाता है। उसकी सहायता से मयूख ने गिरजाघर के नीचे सुरंग खोदकर किले की दीवार को उड़ा देने की चेष्टा आरंभ की। दो तीन बार असफल होने के अनंतर उस अंधे अँगरेज ने अंत मे एक बहुत बड़ी सुरंग खुदवाई। उसमे सैकड़ों मन बारूद भरी गई। डर के मारे कोई मुसलमान या हिंदू सिपाही उसमें आग लगाने पर तैयार नहीं हुआ। तब सूबेदार की सेना के एक दीर्घाकार गौरवर्ण अहदी ने स्वेच्छापूर्वक यह कार्य करना स्वीकार कर लिया।

बादशाही सेना चारों ओर से किले पर आक्रमण करने के लिये जब तैयार होकर खड़ी हो गई तब उक्त अहदी ने हल्दीपुर की छावनी में पहुँचकर मयूख से साक्षात् करने का आग्रह किया। मयूख उस समय अल्लाहयार खाँ, इनायतउल्ला खाँ, खोजा शेर और बहादुर खाँ कांबोह के साथ परामर्श कर रहे थे। एक सवार ने आकर उनसे कहा—'महाराज, वही स्वामी जी आपसे साक्षात् करना चाहते हैं।'

मयूख खेमे से बाहर निकल आए। उस अहदी ने उनसे कहा—'मुझे पहचानते हो, मयूख?'

सामान्य सिपाही के मुँह से ऐसा संबोधन सुनकर मयूख बड़े विस्मित हुए।

अहदी ने फिर कहा—'ललिता के अपहरणवाले दिन गौरीपुर घाट की याद है?'

मयूख ने अधिकाधिक विस्मित होते हुए कहा—'याद है।'

'मैं वही संन्यासी हूँ।'

'आप ?'

'हाँ, मैं ही हूँ। मैं ललिता का मामा और विनोदिनी का भाई हूँ। चौदह बरस पहले गंजालीस खड्दह से मेरी युवती पत्नी और विनोदिनी को जबर्दस्ती पकड़ लाया था। मेरी पत्नी ने आत्महत्या कर ली। मैं समझता था, विनोदिनी भी मर चुकी है। किंतु आगरे में विनोदिनी को देखकर मुझे अपनी धारणा की भूल ज्ञात हुई। सोचा था, पुर्तगालियों की हुगली को श्मशान बना दूँगा और तब यहीं वास करूँगा। लेकिन विनोदिनी का जार अभी जीवित बचा है। हुगली के किले पर तो आज अधिकार हो जायगा किंतु तब तक मैं स्वयं जीवित न रहूँगा। अगर गंजालीस को तुमने बंदी बना लिया तो अपने हाथों उसका सिर काटना और उसके रक्त से गीली भूमि पर मेरी चिता बनाना। अनूपनारायण तो अब मर गया है। कल तक बारबकसिंह पर भी तुम्हारा अधिकार हो जायगा।'

उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना वह अहदी जल्दी जल्दी पैर बढ़ाता हुआ वहाँ से चला गया। थोड़ी ही देर बाद भयंकर गड़गड़ाहट के साथ हुगली का पुर्तगाली गिरजा और किले की दीवार आसमान में उड़ गई। हुगली पर से पुर्तगालियों का अधिकार समाप्त हो गया।

नंगी तलवार लिए मयूख ने फिरंगी सेनाध्यक्ष के प्रासाद के पास आकर देखा कि मुट्ठी भर अपने आदमियों को साथ लिए डि सूजा अभी तक लड़ रहा है। चारों ओर से घिर जाने पर भी डि सूजा ने आत्म-समर्पण नहीं किया। थोड़ी ही देर में बाकी बचे पुर्तगाली वीरों ने भी अपने प्राणों से हाथ धोकर अपने देशवासियों द्वारा किए गए जघन्य पापों का मानों प्रायश्चित्त कर डाला।

गंजालीस जलमार्ग से भागने का उपक्रम कर रहा था। बंदी बनाकर वह मयूख के सामने उपस्थित किया गया। गंगातट पर जहाँ उसके रक्त से तटवर्ती भूमि गीली हो गई थी वहीं चिता तैयार की गई। बारूद द्वारा जलने से अवशिष्ट संन्यासी की देह उसी चिता पर रख दी गई। जान पड़ता है, परलोक में उस ब्राह्मण की आत्मा अवश्य तृप्त हो गई।

पंचविंश परिच्छेद

परिशिष्ट

शीत ऋतु का अवसान होने पर एक दिन एक छोटी सी नौका आगरा के किले के पास हरे भरे खेत के सामने आ लगी। नाव में एक मल्लाह और दो यात्री थे। वे उतर पड़े। दोनों यात्रियों में से एक पुरुष था और दूसरी स्त्री।

पुरुष ने मल्लाह से जिज्ञासा की—'क्यों भुवन, समाधि किधर है?'

मल्लाह ने यमुना किनारे के हरे भरे मैदान में एक ओर संकेत कर दिया। दोनों यात्री उधर ही बढ़ चले।

उस समय अस्ताचलगामी सूर्य की रक्तिम किरणें लाल पत्थर के बने आगरे के दुर्ग के शीर्षस्थान पर निर्मित मोती मसजिद की शुभ्रवर्ण मीनारों पर पड़कर उन्हें स्वर्णिम आभा प्रदान कर रही थीं। हरे भरे मैदान के बीच थोड़ी ऊँची भूमि पर सफेद संगमरमर की बनी एक छोटी सी समाधि थी जिसके पादप्रदेश से होकर यमुना की श्यामल जलधारा बह रही थी। शुभ्र वस्त्र पहने एक प्रौढ़ मुसलमान सज्जन समाधि का आलिंगन किए बैठे हुए थे और उनके पैरों के पास एक दुबली पतली अंधी युवती मलिन वस्त्र पहने चुपचाप बैठी आँसू बहा रही थी। नौका के मल्लाह और यात्रियों ने दूर से ही उन्हें देख लिया और ठिठक रहे।

पुरुष ने जिज्ञासा की—'वह कौन है, भुवन ?'

भुवन धीरे से बोला—'कह नहीं सकता, महाराज !'

स्त्री ने धीरे से कहा—'पास जाने की आवश्यकता नहीं; दूर से ही देखकर लौट चला जाय।'

पुरुष ने पूछा—'ऐसा क्यों, ललिता ?'

'उन्हें पहचान नहीं रहे हो ?'

'नहीं।'

'मैंने तो देखते ही पहचान लिया।'

'कौन है, ललिता ?'

'है कौन; स्वयं बादशाह हैं !'

इसी समय उस प्रौढ़ मुसलमान व्यक्ति ने समाधि पर से अपना मुँह ऊपर उठाया। विस्मयपूर्वक मयूख ने देखा कि हिंदोस्तान के एकछत्र सम्राट् बादशाह शाहजहाँ उस जनशून्य मैदान में नंगे सिर समाधि के पास बैठे हुए हैं।

तब ललिता बोली—'अपनी आँखों से तो देखा नहीं, केवल तुम्हारे मुँह से सुना भर है। जब यहाँ तक आ गई हूँ, तब एक बार स्पर्श करके ही चलूँगी। हम लोग यहीं खड़े रहते हैं। बादशाह के चले जाने पर वहाँ जायँगे।'

अकस्मात् उस नीरव प्रदेश की जड़ता को भंग करता हुआ करुण-कोमल कंठ का सुमधुर संगीत फूट पड़ा। मैदान के दूसरे किनारे पर कोई गा उठा—

अति मनोहर बाजए सुसर[1]
शुनिया परान जा ए।

---

१ सुस्वर।

कि रूप बाँशी बोल बराइ[1]
केमने ताक बाजाए।
बाँशीर विंद[2] त मुख संयोजिया
सपत सर बाजाए।
नागर शेखर नांदेर सुंदर[3]
बडू चंडीदास गाए।

संगीत सुनकर बादशाह चौंके और उठ खड़े हुए। तभी मयूख ने बादशाह को अभिवादन किया। बादशाह ने विषण्ण मन से जिज्ञासा की—'क्या तुम्हीं गा रहे थे?'

'नहीं जहाँपनाह।'

'तो किसने गाया?'

'कह नहीं सकता। मैदान के उस पार कोई गा रहा था।'

'किस भाषा का गीत था, मनसबदार?'

'बँगला गाना था, शाहंशाह।'

'बड़ी मीठी आवाज थी। उसे बुला ला सकते हो?'

मयूख ने ललिता की ओर दृष्टि घुमाई। इसे देख बादशाह ने जिज्ञासा की—'तुम्हारे साथ कौन है!'

मयूख ने सिर झुकाकर कहा—'मेरी पत्नी है, जहाँपनाह।'

बादशाह ने पूछा—'तुम्हारी पत्नी यहाँ क्यों आई है?'

---

१ बोल निकलते हैं। २ बाँसुरी का वह छिद्र जिसे मुँह से फूँकते हैं। ३ नंद के सुंदर अर्थात् श्रीकृष्ण।

मयूख बोले—'हजरत बादशाह बेगम की समाधि की विभूति लेने आई है।'

'उसे यहाँ बुला लो और गुलरुख के पास बैठाकर तुम उस गानेवाले को बुला लाओ।'

तब मयूख की दृष्टि फटे पुराने, मैले कुचैले वस्त्रों में लिपटी उस अंधी स्त्री पर पड़ी। उन्होंने देखा कि वह स्त्री उठ खड़ी हुई। गड्ढे में धँसी उसकी दोनों दृष्टिहीन आँखें विस्फारित हो उठीं और श्वास प्रश्वास की गति बढ़ गई। वह कब उठकर खड़ी हुई, यह उन्होंने नहीं लक्ष्य किया। वे जिस समय बादशाह के साथ बात कर रहे थे, उसी समय उनका कंठस्वर अंधी स्त्री के कानों में पहुँचा था और वह अत्यंत विचलित हो उठी थी। अब तक मयूख बादशाह के साथ वार्ता कर रहे थे, इसलिये गुलरुख ने कुछ नहीं कहा था। कुछ कहने के लिये वह आकुल हो रही थी।

बादशाह की बात समाप्त होने पर वह बोली—'देवता! तुम्हारी रूपराशि के भीतर इतनी कठोरता छिपी हुई है, यह मैं नहीं जानती थी। तुम फिर क्यों मेरे पास आए हो?'

मयूख विस्मित और स्तंभित हो रहे। गुलरुख के माथे पर का वस्त्र नीचे खिसक पड़ा और तैलहीन, रूक्ष केशराशि उसके रक्तहीन, ज्योतिहीन, पांडुवर्ण मुखमंडल के चारो ओर बिखर गई।

अंधी स्त्री ने पुनः कहा—'देवता! मेरी अँधेरी दुनिया की तुम्हीं एकमात्र रोशनी हो। मेरी इन अंधी आँखों के सामने तुम्हारी मूर्ति हमेशा नाचती रहती है। लेकिन तुम मेरे पास मत आना, दूर ही रहना। तुम्हारी बोली या पैरों की आहट भर से मुझपर पागलपन सवार हो जाता है!'

बादशाह ने धीरे से उसके कान में कुछ कहा। उसे सुनकर गुलरुख सिहर उठी। वह बोली—'क्यों? कहाँ हो तुम?'

दोनों हाथ फैलाकर गुलरुख बोली—'तुम्हें एक बार देखूँगी। आँखें रहते नहीं देखा; एक बार अब स्पर्श करूँगी। तुम अपवित्र तो नहीं हो जाओगी, मेरी बहन!'

बादशाह बोले—'मनसबदार! गुलरुख तुम्हारी स्त्री को छूना चाहती है।'

मयूख की आज्ञा मिलने के पहले ही ललिता गुलरुख की ओर अग्रसर हुई और उसका स्पर्श होते ही गुलरुख ने उसे कसकर अपनी बाहों में भर लिया। बादशाह ने अपना मुँह फेरकर दूसरी ओर कर लिया।

बहुत देर बाद प्रकृतिस्थ होने पर मयूख गायक की खोज में चले। आजकल जहाँ ताजगंज का बाजार है, वहाँ उन दिनों प्रशस्त मैदान था। मयूख ने देखा कि उस मैदान के एक किनारे एक कृशकाय, विकलांग, कृष्णवर्ण वृद्ध जमीन पर बैठा है। मयूख ने उसके पास जाकर पूछा—'गीत तुम्हीं गा रहे थे, क्या?'

वृद्ध ने स्वच्छ परिष्कृत बँगला में उत्तर दिया—'हाँ भाई; चलने की शक्ति नहीं है। सोचा, शायद गीत सुनकर ही कोई आकर लिवा ले चले।'

'तुम कहाँ जाओगे?'

'इसी समाधि के पास।'

'मैं तुम्हें वहीं लिवा चलूँगा।'

मयूख ने वृद्ध को गोद में उठा लिया और समाधि के पास ले आए। वृद्ध ने अपने कपड़ों के भीतर से हीरा जड़ी एक बहुमूल्य अँगूठी

निकालकर मयूख के हाथों पर रख दिया। मयूख ने उसे बादशाह को दे दिया। बादशाह अँगूठी देखते ही चौंक पड़े। उन्होंने पूछा—'फकीर! तुम सातगाँव के वही वैष्णव हो न?'

वृद्ध बोला—'हाँ महाराज! मेरी एक प्रार्थना है।'

'किले में क्यों नहीं गए?'

'महाराज! मेरे मन ने कहा कि यही जगह ठीक है।'

'क्या चाहते हो?'

'मेरे गुरुदेव पकड़ लिए गए हैं, महाराज! दया करके उन्हें छोड़ दीजिए।'

उस समय मुमताजमहल आरजूमंद बानू बेगम के जगत्प्रसिद्ध मकबरे की दीवारें उठाई जा रही थीं। कितने ही फिरंगी कैदी दूर पर मिट्टी ढो रहे थे। वृद्ध ने उँगली उठाकर उनमें से एक की ओर संकेत किया। बादशाह की आज्ञा से मयूख उसे बुला लाए। विकलांग वृद्ध को देखते ही फिरंगी काँप उठा।

वृद्ध ने हँसते हुए उसे प्रणाम किया और कहा—'भटके हुए आदमी को आपने एक दिन ठीक मार्ग दिखाया था। आप ही मेरे गुरु हैं। शाहंशाह की आज्ञा से आप मुक्त किए जा रहे हैं।'

बादशाह ने मयूख को संकेत किया। मयूख ने फिरंगी को बंधन मुक्त करा दिया। फिरंगी तो स्तब्ध हो रहा।

अकस्मात् यमुना तट की ओर से तीव्र वेग से वायु चलने लगी। तटवर्ती काँस के फूलों के गुच्छे के गुच्छे उड़ उड़कर शुभ्र संगमरमर पर गिरने लगे। बादशाह उस कठोर, शीतल और श्वेत संगमरमर का

आलिंगन करते हुए बैठ गए। उनके बाद गुलरुख और ललिता भी घुटनों के बल बैठीं। यह देख मयूख भी कब्र के पीछे घुटने झुकाए और मस्तक नवाए बैठ रहे।

इतनी देर बाद फिरंगी की आँखों में आँसू डबडबा आए। वह भी अपने देश की प्रथा के अनुसार घुटने झुकाए बैठ गया।

यह फिरंगी बंदी था हुगली का पादरी ऐलवरेज!

———